

केशवीयजातकपद्धतिः



सम्पादकः
आचार्य चन्द्रमा पाण्डेय

वाराणसेय संस्कृत संस्थान-वाराणसी।



वाराणसेयसंस्कृतग्रन्थमालायाः तृतीयपुष्पम्

श्रीकेशवदैवज्ञविरचिता

जातकपद्धतिः

सान्वयव्याख्योदाहरणहिन्दीटीकया विभूषिता



सम्पादकः

आचार्य चन्द्रमापाण्डेयः, ज्योतिषशास्त्राचार्यः,
लब्धस्वर्णपदकः, विश्वपञ्चाङ्गसहायकः, ज्योतिषविभागः,
प्राच्यविद्याधर्मविज्ञानसंकायः, काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः
भूतपूर्व–ज्योतिषविभागाध्यक्षः श्रीमाथुरचतुर्वेद-
संस्कृतमहाविद्यालयः मथुरा

प्रकाशकः

वाराणसेयसंस्कृतसंस्थानम्

जगतगंज, वाराणसी

प्रकाशकः

वाराणसेयसंस्कृतसंस्थानम्

जगतगंज, वाराणसी

प्रथमसंस्करणम्

विजयादशमी

संवत् २०३९

मूल्य—२०·००

मुद्रक

श्रीविद्या प्रेस

छित्तूपुर, (बी० एच० यू०)

वाराणसी—५

सादरसमर्पणम्

गुरुणां गुरुः ज्योतिषदिवाकराः पण्डित-श्रीराजमोहनउपाध्यायाः ज्योतिषशास्त्राचार्याः, एम० ए०, पी-एच० डी० इत्यादि पदवीभिर्विभूषिताः ज्योतिषविभागाध्यक्षाः, प्रोफेसरपदसमासीनाः श्रीकाशीहिन्दूविश्वविद्यालयीयप्राच्यविद्याधर्मविज्ञानसंकायस्य संकायप्रमुखाः एतेषां करकमलयोः सादरं समर्प्यते पुष्पमिदम्। येषामनुग्रहेण ज्योतिषशास्त्रतत्त्वं यत्किञ्चिदधीतमिति।

विनीतः
चन्द्रमा पाण्डेयः



प्राक्कथन

भारतीय विद्या अपनी मर्यादाओं से भारतवर्ष को गुरु पद प्रदान की है। वेद के षडङ्गों में ज्योतिष शास्त्रनेत्र स्वरूप माना गया है। ज्ञानरूपी नेत्र के अभाव में मनुष्य अपना निश्चित लक्ष्य कथमपि प्राप्त नहीं कर सकता। मानव जीवन में वास्तविक पथ प्रदर्शन के लिये नेत्र स्वरूप ज्योतिष शास्त्र का मानव मात्र को अध्ययन करना चाहिये। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए ऋषि-महर्षियों द्वारा ज्योतिष शास्त्र की रचना तथा वराहमिहिरादि आचार्यों द्वारा समय २ पर पल्लवन होता रहा है। भारतीय ज्योतिष शास्त्र में श्रीकेशव दैवज्ञ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। जातकपद्धति में लेखक ने गागर में सागर भर दी है। इसके मङ्गलाचरण में ही लग्न एवं सप्तम लग्न का संकेत दर्शाते हुए द्वितीय श्लोक में नतोन्नत ज्ञान पूर्वक दशम एवं चतुर्थ भाव साधन वर्णित है। तृतीयश्लोक में सन्धि सहित द्वादश भावों का साधन तथा ग्रहों का फल वर्णित है। इस प्रकार अल्प शब्द में अधिक एवं गहन विषय का प्रतिपादन ग्रन्थकार का अभीष्ट है। जो विषय अधिक प्रचर्चित है उसका साधन करने में आचार्य समय नहीं लगाये हैं, बल्कि उस विषय का संकेत देते हुए अग्रिम विषय का प्रतिपादन किये हैं। यथा मङ्गलाचरण में ही "यत्पद्मे हि घटन्त उद्गम इहास्तर्क्षं स षड्भः स च" इस श्लोक के एक चरण में ही लग्न एवं सप्तम भाव का संकेत। अपनी नवीन सरणि प्रदर्शित करने के लिये प्रचलित होनेपर भी द्वितीय श्लोक में दशम चतुर्थ भावादि साधन किये हैं। लग्न, चतुर्थ, सप्तम एवं दशम भाव सिद्ध हो जाने पर अवशिष्ट भाव एवं सन्धि आनयन में भी ग्रन्थकार की अपनी नवीन विधि है, जो तृतीय श्लोक में दर्शित है। पुनः ग्रहों की दृष्टि साधन के अनन्तर ग्रहों का बल साधन किया गया है। ग्रहों के समान भावों का भी बल का साधन होने पर सूक्ष्मफल होगा इस आशय से भावों का भी बल वर्णित है। पुनः इष्ट कष्ट साधन के अनन्तर आयुर्दायज्ञान तथा विविध जीव जन्तुओं की आयु का साधन कर २८ श्लोकों में ग्रन्थ का प्रथम भाग पूर्ण किया गया है। उत्तरार्ध में दशा साधन सम्बन्धि वर्णन है। दशान्तर्दशा का सूक्ष्म विवेचन कर ज्योतिषियों के लिये आवश्यक संकेत श्लोक ४० में वर्णित है। इस तरह ४० श्लोकों

में विषयवर्णन तथा ४१ वें श्लोक में ग्रन्थकार का परिचय एवं ४२ वें श्लोक में ग्रन्थ तथा ग्रन्थ अध्ययन करने वाले की प्रशंसा वर्णित है। इस तरह अल्प छन्दों में ज्योतिष शास्त्र के जातक भाग सम्बन्धि विषयों का समावेश ग्रन्थकार के गहन ज्ञान का परिचायक है।

प्रस्तुतग्रन्थ में जातक सम्बन्धि जिन विषयों का संकेत दिया गया है उसे यथा साध्य सुगम बनाने का प्रयास किया गया है। आज के विद्यार्थियों एवं जिज्ञासुओं के लिये अनुपलब्ध होने से श्रीवाराणसेय संस्कृत संस्थान के संस्थापक एवं व्यवस्थापक के आग्रह पर मैंने अन्वय व्याख्या एवं हिन्दी टीका सहित इसका सम्पादन की है। विषय जटिल होने के कारण उदाहरण देना आवश्यक समझ कर यथासाध्य उदाहरण भी दिया गया है। उत्तरार्ध सरल होने के कारण उसका उदाहरण नहीं दिया गया है। आवश्यकता प्रतीत होने तथा ज्योतिर्जिज्ञासुओं की इच्छा होगी तो अग्रिम संस्करण में उसका भी उदाहरण दे दिया जायगा। पं० श्री हीरालालजी मिश्रजी एवं श्रीनिवास तिवारी जी प्रूफ आदि संशोधन में योगदान दिये हैं इसलिये धन्यवादार्ह हैं।

भारतीय एवं हिन्दू होने के नाते भारतीय संस्कृति एवं भारतीय विद्याओं की रक्षा होनी चाहिये इस उद्देश्य से दिनेश सेठजी एवं श्री जगदीश प्रसाद पाण्डेय जी पुस्तक के प्रकाशनार्थ प्रयत्नशील हैं इसलिये ये सतत धन्यवादार्ह हैं। श्री विद्या प्रेस के व्यवस्थापक श्री बसन्तू राम एवं श्री बलराम प्रसादजी लगन एवं परिश्रम से प्रकाशन में सहयोग दिये हैं। इसलिये इन्हें हार्दिक धन्यवाद है।

त्रुटि मानव का धर्म है। अतः त्रुटि सम्भावित है। यदि किसी प्रकार की त्रुटि प्रतीत हो तो सूचित करने की कृपा करें, जिससे अग्रिम संस्करण में सुधार हो सके। विद्वानों एवं जिज्ञासुओं को कुछ भी लाभ हुआ तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूँगा।

भवदीय

चन्द्रमा पाण्डेय

विषयानुक्रमणिका

॥ श्रीः ॥

श्रीकेशवदैवज्ञविरचिता

जातकपद्धतिः

सोपपत्तिव्याख्योदाहरणभाषाटीकासहिता

सतामयमाचारो यत् शिष्टाचारमनुसरन् प्रारिप्सितस्याविघ्नपरिसमाप्तये शिष्यशिक्षार्थञ्च शास्त्रप्रारम्भेष्वभिमतदेवतानमस्कारं कुर्वन्ति। तत्र ग्रन्थकारो श्लोकपूर्वार्धेन मङ्गलमाचरन् उत्तरार्धेन ग्रन्थान्तरसाध्यामितिकर्तव्यतां सप्तमलग्नानयनञ्च कथयति—

नत्वा विघ्नपशारदाच्युतशिवब्रह्मार्कमुख्यग्रहान्
कुर्वे जातकपद्धतिं स्फुटतरां होराविदां प्रीतये।
यन्त्रैः स्पष्टतरोऽत्र जन्मसमयो वेद्योऽथ खेटाःस्फुटा
यत्पक्षे हि घटन्त उद्गम इहास्तत्वं सषड्भः स च ॥ १ ॥

अन्वयः—अहं, विघ्नपशारदाच्युतशिवब्रह्मार्कमुख्यग्रहान् नत्वा होराविदां प्रीतये स्फुटतरां जातकपद्धतिं कुर्वे। अत्र यन्त्रैः स्पष्टतरो जन्मसमयो वेद्यः। अथ इह यत्पक्षे घटन्ते 'तत्पक्षे' स्फुटाः खेटाः, उद्गमः स सषड्भोऽस्तलग्नं भवति।

व्याख्याः—'अहं' विघ्नपशारदाच्युतशिवब्रह्मार्कमुख्यग्रहान्=विघ्नपो गणेशः, शारदा सरस्वती, अच्युतो विष्णुः, शिवो महादेवः, ब्रह्मा विधिः, अर्कमुख्यग्रहाः सूर्यादिनवग्रहाः एतान्, नत्वा प्रणम्य, होराविदां अहोरात्रमध्ये संजातानां शुभाशुभफलं वेत्ति इति होराविदस्तेषां प्रीतये मुदे, स्फुटतराम् अतिलघुक्रियाम्, जातकपद्धतिं अहोरात्रमध्ये जातस्य जातकस्य शुभाशुभफलबोधकं शास्त्रं जातकं तस्य पद्धतिं विधिम्, कुर्वे करोमि। अत्र, अस्यां पद्धतौ यन्त्रैः शंकुयष्टिधनुश्चक्रमयूरनरवानरादिभिः स्पष्टतरः अतिसूक्ष्मो जन्मसमयः सूर्योदयादिष्टकालो वेद्यः ज्ञातव्यः। अथ अनन्तरं इह अस्मिन् जन्मसमये यत्पक्षे यस्मिन् सौरब्रह्ममकरन्दग्रहलाघवादिपक्षे,

घटन्ते = दृग्गणितैक्यं जायन्ते तस्मिन्पक्षे स्फुटाः स्पष्टाः खेटाः ग्रहाः 'साध्या' इति भावः। उद्गमः लग्नं च साध्यः, स उद्गमः सषड्भः षड्राशिसहितोऽस्तर्क्षं सप्तमलग्नं भवतीति ॥ १ ॥

उपपत्तिः—"यात्राविवाहोत्सवजातकादौ खेटैः स्फुटैरेव फलस्फुटत्वमि"ति भास्कराचार्योक्तेः सूक्ष्मजन्मसमयज्ञानं जन्मसमये च स्फुटखेटादिज्ञानं समुचितमेव। तत्र क्रान्तिवृत्त-क्षितिजवृत्तयोः पूर्वसम्पातस्य लग्नमिति संज्ञा पश्चिमसम्पातस्य च सप्तमलग्नमस्तलग्नमिति वा संज्ञा सुप्रसिद्धैव। तत्र लग्नस्थानात् सप्तमलग्नस्य षड्भान्तरे स्थितिस्तेन लग्नं सषड्भास्तर्क्षं स्यादेव।

भा० टी०—मैं गणेश, सरस्वती, विष्णु, शिव, ब्रह्मा एवं सूर्यादि ग्रहों को नमस्कार कर होराशास्त्रज्ञों की प्रीति के लिए संक्षिप्त रीति युक्त "जातकपद्धति" को बनाता हूँ। यहाँ यन्त्रादि द्वारा सूक्ष्म समय का ज्ञान कर जिस (सौरब्राह्म आदि) पक्ष से दृग्गणितैक्य ग्रह हों उस पक्ष (मत) से स्पष्ट ग्रह और लग्न साधन करें। लग्न में ६ राशि जोड़ने पर सप्तम लग्न होता है।

उदाहरण—लग्न सप्तम एवं दशम लग्न ज्ञान के लिए सूर्योदयादिष्टम्, स्पष्टरवि, अयनांश, नतोन्नतकाल का ज्ञान होना आवश्यक है। ग्रन्थ में वर्णित विषयों का ज्ञान कुण्डली निर्माण ज्ञान के बिना असम्भव है। अथवा इससे सम्बन्धित विषयों का ज्ञान होना चाहिये। जिज्ञासुओं के ज्ञान हेतु भारतीय पद्धति से आवश्यक विषय का निर्देश अनिवार्य है। मंगलाचरण में स्फुट ग्रहादि साधन (यत्पक्षे हि घटन्त उद्गमः) बताया है। ध्यान देय है कि स्फुटता से ग्रंथकार का प्रयोजन आकाशीय चमत्कृतियों से नहीं बल्कि जिस मत से मानव जीवन में शुभाशुभ फल घटित हों उस पक्ष से है। ज्योतिषवाङ्मय में अनेक सिद्धान्त ऋषि प्रणीत माने गये हैं। "वाराहमिहिर की "स्पष्टतरः सावित्रः" इस उक्ति से सावित्र सिद्धान्त अर्थात् सूर्यसिद्धान्त से हीं स्पष्ट संकेत है। अतः धर्म कर्म एवं मानव जीवन में सम्पूर्ण कर्मों को करने का संकेत सूर्यसिद्धान्त से हीं प्राप्त होता है। अतः सूर्यसिद्धान्तीय विधि तथा उसके अनुयायी मानव प्रणीत ग्रन्थों के आधार पर जातक का इष्टकालादि ज्ञान ग्रन्थकार को अभीष्ट है। ध्यान रहें कि दृग्गणितैक्य का अर्थ जातजशास्त्र के लिये आकाशीय चमत्कृतियों से नहीं है।

क्योंकि एक ही आचार्य जब गणित के सिद्धान्तों का प्रतिपादन करता है तो सूर्य का उच्च २।१८° = ७८° लिखता है और फलित शास्त्र हेतु सूर्य का

उच्च मेष का १० अंश निर्धारित करता है। इस तरह के अनेक प्रमाण ग्रन्थों में स्पष्ट संकेत देते हैं कि फलित ज्योतिष शास्त्र में दृग्गणितैक्य से आकाशीय चमत्कृति का ग्रहण नहीं होगा। इस ग्रन्थ के आधारभूत विषयों का संकेत आवश्यक है। इसलिए उनका संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत है—

इष्टकाल—जन्म स्थानीय सूर्योदय काल से जन्म समय तक के घट्यादिमान को इष्टकाल कहते हैं। पञ्चाङ्ग किसी निश्चित स्थान का रहता है, किन्तु इष्टकाल भूमण्डल के किसी भी भाग का साधन किया जाता है। अतः जिस स्थान का पञ्चाङ्ग उपलब्ध हो वहाँ के इष्टकाल साधन की विधि तथा पञ्चाङ्ग के स्थान से दूसरे स्थानों के इष्टकाल साधन की विधि दी जाती है। जहाँ का पञ्चाङ्ग हो वहाँ का इष्टकाल साधन विधि—

अर्धरात्रि के बारह बजे के बाद एकादि घण्टा माना जाता है। दो पहर के बारह बजे के अनन्तर पुनः एकादि घण्टा घड़ियों में प्रचलित है। जन्म समय दो पहर के १२ बजे तक हो तो जन्म समय में केवल वेलान्तर का संस्कार होगा। १२ बजे दिन से १२ बजे रात्रि तक जन्म हो तो जन्म समय में १२ घण्टा जोड़ कर वेलान्तर का संस्कार होगा। अर्थात् अर्धरात्रि के उपरान्त एक दो इत्यादि घंटा की गणना कर अग्रिम अर्धरात्रि के बारह बजने पर २४।० बजना जो रेलवे घड़ियों में प्रचलित है, माना जाता है। अर्द्ध रात्रि के बाद एवं सूर्योदय से पहले का जन्म हो तो घंटादि जन्म समय में २४ घण्टा जोड़ेंगे। इस तरह सिद्ध समय में वेलान्तर जो विश्वपञ्चाङ्ग के चतुर्थ अथवा ४०वें पृष्ठ पर दिया रहता है, कोष्ठक में निर्दिष्ट धन अथवा ऋण चिह्न के अनुसार संस्कार कर सूर्योदय घटावें और ढाई से गुणा करें तो सूर्योदयादिष्ट काल होता है।

इष्टकाल साधन हेतु सूत्र—

$$[\{(\text{जन्म समय घंटादि} \pm \text{वेलान्तर}) \pm \text{देशान्तर}\} - \text{सूर्योदय}] \times \frac{5}{2}$$

पञ्चाङ्ग के स्थान से अन्यत्र स्थान के लिए इष्टकाल साधनविधि—

जन्म समय में वेलान्तर एवं देशान्तर का संस्कार कर उसमें सूर्योदय घटाकर ढाई से गुणा करने पर इष्टकाल होता है।

देशान्तर—

पञ्चाङ्ग स्थान से जन्म स्थान पूरब में हो तो देशान्तर को जन्म समय में जोड़ा जायगा तथा पश्चिम में जन्म स्थान हो तो जन्म समय में घटाया

जायगा। देशान्तर विविध ग्रन्थों में दिया रहता है। इस ग्रन्थ के अन्त में भी देशान्तर दिया गया है। अतः देशान्तर का ज्ञान कर लें। वर्तमान समय में देशान्तर ज्ञान हेतु रेखांशों का प्रयोग किया जाता है। रेखांश की गणना ग्रीनवीच से की जाती है। मानचित्र (एटलस) में रेखांशों के चित्र अंकित हैं। ग्रीनवीच से अपने देश के रेखांशों को १० से गुणा कर ६० का भाग देने से घट्यादि तथा रेखांशों को ४ से गुणा कर ६० का भाग देने से घण्टादि देशान्तर, ग्रीनवीच से होगा। किसी इष्ट स्थान से दूसरे स्थान का देशान्तर ज्ञात करना हो तो यदि दोनों स्थान ग्रीनवीच से पूरब अथवा पश्चिम हों तो दोनों देशों के रेखांशों का अन्तर कर दश से गुणा करने पर घट्यादि तथा ४ से गुणा करने पर घण्टादि देशान्तर होता है।

यदि एक स्थान ग्रीनवीच से पूरब एवं दूसरा स्थान ग्रीनवीच से पश्चिम हो तो दोनों देशों के रेखांशों को जोड़कर दश से गुणा करने पर घट्यादि तथा ४ से गुणा करने पर घण्टादि एक स्थान से दूसरे स्थान का देशान्तर होता है।

वेलान्तर—

रेलवे घड़ी एवं सूर्यघड़ी दोनों के अन्तर का नाम वेलान्तर है। जन्म समय स्टैण्डर्ड समयानुसार रहता है। इस समय को सूर्य घड़ी बनाने के लिये वेलान्तर का संस्कार करते हैं। कोष्ठक में निर्दिष्ट धन, अथवा ऋण चिह्न के अनुसार जन्म समय में संस्कार किया जाता है।

सूर्योदय, सूर्यास्त एवं दिनमानादि साधन—

पृथ्वी के सभी भागों पर एक साथ सूर्योदयास्त नहीं होता। अतः इष्ट स्थान का सूर्योदय जानने हेतु चरकाल ज्ञान आवश्यक है। चर साधन कर छः घंटा में चरकाल को जोड़ने से उत्तराक्रांति में सूर्यास्त तथा दक्षिणाक्रांति में सूर्योदय होता है। सूर्यास्त को १२ घंटा मे घटाने से सूर्योदय अथवा सूर्योदय को १२ घंटा में घटाने पर सूर्यास्त होता है। सूर्यास्त को ५ से गुणा करने पर घट्यादि दिनमान होता है। दिनमान को ६० घटी में घटाने पर रात्रिमान होता है। यह विधि उत्तराक्षांश वाले स्थानों के लिए है। दक्षिण अक्षांश वाले देशों के लिए इसके विपरीत क्रिया करनी चाहिये।

पञ्चाङ्ग में तिथि, नक्षत्र, योग करणादि का मान जहाँ का पञ्चाङ्ग हो वहाँ का दिया रहता है। उनका मान स्वदेश में ज्ञात करने के लिये स्पष्टदेशान्तर

(फलघटी) का संस्कार करते हैं। स्पष्टदेशांतर में देशान्तर एवं चरान्तर दोनों रहते हैं। देशान्तर संस्कार जिस स्थान का पञ्चाङ्ग हो वहाँ से पूरब में देशान्तर धन एवं पश्चिम में ऋण होता है। चरान्तर संस्कार क्रांति एवं अक्षांश वश निर्धारित होता है। चरान्तर धन अथवा ऋण हो यह ज्ञात करने की विधि—

उत्तराक्रांति एवं अधिकाक्षांश में चरान्तर धन होता है; तथा उत्तराक्रान्ति अल्पाक्षांश में चरान्तर ऋण होता है। इसी प्रकार दक्षिणाक्रान्ति अधिकाक्षांश में चरान्तर ऋण, एवं अल्पाक्षांश में चरान्तर धन होता है। उत्तर अक्षांश वाले स्थानों के लिए यह विधि समझनी चाहिये। दक्षिण अक्षांशवाले स्थानों के लिये इसके विपरीत संस्कार होता है।

चरान्तर—पञ्चाङ्ग वाले स्थान और जन्मस्थान दोनों स्थानों के दिनमान के अन्तर को आधा करने पर चरातर होता है।

यदि देशांतर और चरान्तर दोनों धन (+) हों तो योग करने से (+) स्पष्ट देशांतर होता है। दोनों यदि ऋण हों तो दोनों का योग करने से ऋण (−) स्पष्ट देशांतर होता है। दोनों (देशांतर और चरान्तर) में एक धन और एक ऋण हो तो दोनों का अन्तर करने से शेष तुल्य धन अथवा ऋण शेष वश स्पष्ट देशांतर होता है। अर्थात् दोनों का अन्तर करने पर शेष धन आया तो स्पष्ट देशांतर धन होगा और शेष ऋण आया तो स्पष्ट देशांतर ऋण होगा।

इष्ट स्थान का पञ्चाङ्ग साधन—

पञ्चाङ्ग में जो तिथि, नक्षत्र, योग एवं करणादि का मान दिया है उस मान में स्पष्ट देशांतर को जोड़ने अथवा घटाने से अपने इष्ट स्थान में पञ्चाङ्गों का मान हो जाता है।

यदि किसी व्यक्ति का जन्म श्री शुभ संवत् २००७ शक १८७२ आश्विन कृष्ण तिथि ६ सोमवार दिनांक २।१०।१९५० ई० को आठ बजे प्रातः है। जन्मस्थानीय अक्षांश २५°।३०′ तथा देशान्तर + घ. ० । पल १७ । विपल १० (घंटादि देशान्तर + ०।६।५२) धन है। अतः अग्रिम क्रिया यथा—

सूर्योदय साधन—

अक्षांशाः २५°।३०′

रविक्रान्तिदक्षिणा ३°।२७′

विश्वपञ्चाङ्ग के ६ पृष्ठ से चर साधन—

२५° अक्षांश एवं ३° क्रांति का फल = ५।३६
२५° „ „ ४° „ „ = ७।२८
अन्तर १।५२

अन्तर को २७′ क्रान्ति से गुणा किया = १।५२ × २७ = ०।५०

२६° अक्षांश ३° क्रान्ति में = ५।५२
२५ „ ३° „ = ५।३६
अन्तर ०।१६

३०′ अक्षांश से गुणा किया × ३०
८।०

सबका योग =

२५° अक्षांश ३° क्रान्ति का फल ५।३६ मिनटादि
२७′ „ ०।५०
३०′ अक्षांश फल ०। ८
योग = ६।३४ मिनटादि फल

घं०	मि०	से०
६	०	०
+	६	३४
६	६	३४

= ६।६।३४ घण्टादि मान

रविक्रान्ति दक्षिणा होने से सूर्योदय हुआ।

१२ घंटा − ६।६।३४ = ५।५३।२६ सूर्यास्त
५।५३।२६ × ५ = २९।२७।१० दिनमानघट्यादि

जन्मस्थानीय दिनमान = २९।२७।१०
काशी का दिनमान = २९।२६। ०
दोनों का अन्तर ०। १।१०
अन्तरार्ध ०। ०।३५ = चरांतर

दक्षिणा क्रान्ति अधिकांक्षांश होने से चरांतर ऋण (−) होगा

अतः चरांतर —०। ०।३५
देशान्तर + ०।१७।१०
स्पष्टदेशान्तर + ०।१६।३५ घट्यादि।

काशी के तिथ्यादि मान में इसी को जोड़ने से { क्योंकि यह धन (+) आया है } जन्मस्थानीय अर्थात् २५°।३०′ अक्षांश और +०।१७।१० देशान्तर वाले स्थानों का तिथ्यादि मान हो जायगा। उस दिन काशी में पञ्चाङ्गमान—

श्रीशुभसंवत् २००७ शक १८७२ याम्यायन सौम्यगोल शरद् ऋतु अश्विन कृष्ण पक्ष सोमवार को षष्ठी तिथि का मान ३१ घटी २१ पल वर्तमान नक्षत्र रोहिणी का मान १२।१६ गत नक्षत्र कृतिका मान ५।४७ व्यतिपात योग का मान ५१।१७ वणिज करण का मान ३१।२१ है, अतः काशी के पञ्चाङ्ग से स्वदेश का पञ्चाङ्ग मान यथा—

	काशी में मान	+	स्पष्टदेशान्तर	=	स्वदेशीयमान
	घ०।प०		घ०।प०।वि०	=	घ०।प०।वि०
६ तिथि	३१।२१	+	०।१६।३५	=	३१।३७।३५
रोहिणीनक्षत्र	१२।१६	+	०।१६।३५	=	१२ ३२।३५
कृतिका "	५।४७	+	०।१६।३५	=	६। ३।३५
व्यतिपात योग	५१।१७	+	०।१६।३५	=	५१।३३।३५
वणिजकरण	३१।२१	+	०।१६।३५	=	३१।३७।३५

इष्टकाल साधन—

घं० । मि० । से०

जन्म समयः ८ । ० । ०

वेलान्तर (कालसमीकरण) + १२ ।२३ (विश्वपञ्चाङ्ग पृ०४२)

\+ ० । ६ ।५२

सूर्यघड़ी से स्थानीय समय = ८।१६।१५

सूर्योदय — ६। ६।३४

घण्टादि = २।१२।४१

× ५/२

इष्टकाल घट्यादि = ५।३१।४२

भयात साधन—

(६० घटीं—गतनक्षत्रमान) + इष्टकाल

घ० । प०

६०। ०

६। ३।३५ = गतनक्षत्रमान

५३।५६।२५ = गतदिवसीय रोहिणी का मान

५।३१।४२ = इष्टकाल

५९।२८। ७ = भयात

भभोग साधन—

(६०घटी—गतनक्षत्र मान) + वर्तमान नक्षत्र मान

घ० । प० । वि०

६० । ० । ०

६ । ३ । ३५ = गतनक्षत्र मान

५३ । ५६ । २५ गतदिवसीय रोहिणी का मान

१२ । ३२ । ३५ वर्तमान रोहिणी का मान

६६ । २९ । ० भभोग

चन्द्रस्पष्ट साधन—

पलात्मक भयात को ६० से गुणा कर, पलात्मक भभोग से भाग देने पर जो लब्धि हो उसे गतनक्षत्र संख्या को ६० से गुणा करने पर, गुणनफल में जोड़ दें। योगफल जो आया उसे दो से गुणा कर नौ का भाग देने से अंशादि स्पष्टचन्द्र होता है। इसे राश्यादि बनाने के लिये अंश में ३० का भाग देन से राश्यादि चन्द्रस्पष्ट होगा।

संक्षिप्त चन्द्र स्पष्ट का सूत्र—

(१) $\frac{\text{भयात्} \times ६०}{\text{भभोग}}$ = लब्धिः

(२) $\frac{\{(\text{गतनक्षत्रसंख्या} \times ६०) + \text{लब्धिः}\} \times २}{९}$ = अंशादि स्पष्टचन्द्र

(३) अंशादि स्पष्टचन्द्र ÷ ३० = राश्यादि स्पष्टचन्द्र

$\frac{५९।२८। ७ \times ६०}{६६।२९}$ = ५३।४०।१०

गतनक्षत्रसंख्या = ३ = कृतिका

ग० न० सं × ६० = ३ × ६० = १८०

१८० + ५३।४०।१० = २३३।४०।१०

$\frac{(२३३।४०।१०) \times २}{९}$ = ५१°।५५'।३६"

= १।२१°।५५'।३६" = स्पष्टचन्द्र

चन्द्रगति साधन—

चन्द्र स्पष्ट गति $= \frac{४८०००}{भभोग} =$ अंशादिः । अतः

$\frac{४८०००'}{३९८९} = १२^{\circ}।१'।५६'' = ७२१'।५९''$

ग्रहस्पष्टीकरण चन्द्र से इतर ग्रहों के लिये—

काशी के मिश्रमान कालिक ग्रह—

मिश्रमान = ४६।१८

काशी के ग्रह	रा.।अं.।क.।वि.	गतिः क०।वि०
सूर्य	= ५।१५।२३।५२	५६।७
मंगल	= ७।११।४२।५६	४१।४३
बुध	= ५। ०। २।४८	५९।२१
बृहस्पति वक्री	= १०।१०।३४।५२	५।३१
शुक्र	= ५।८।८।०	७४।२७
शनि	= ४।२८।१६।७	७।२६
राहु	= ११।८।८।४८	३।११

चालन—

मिश्रमान में इष्टकाल घट जाय तो शेष तुल्य ऋण चालन होता है। इष्टकाल में मिश्रमान घटे तो शेष तुल्य धन चालन होता है।

ग्रह गति को चालन से गुणा कर ६० का भाग देने से चालन फल होता हैं। मिश्रमान कालिक ग्रह में चालन फल का संस्कार करने से इष्टकाल में स्पष्टग्रह सिद्ध होते हैं।

= ४६।१८	काशी का मिश्रमान
+ ०।१६।३५	स्पष्ट देशान्तरम्
४६।३४।३५	स्वदेश का मिश्रमान
५।३१।४२	इष्टकाल
४१। २।५३ = ४१।३	ऋण चालन

सूर्यस्पष्ट—

$\frac{रविस्पष्टगति \times चालन}{६०} =$ चालनफल

मिश्रमानकालिकरवि ± चालनफल = स्पष्टरवि

$$\frac{(४१।३)\times(५६।७)}{६०} = ४०।२७$$ चालन फल

५।१५।२३।५२ = मिश्रमानकालिक सूर्य
— ४०।२७ = चालनफल
५।१४।४३।२५ = स्पष्ट रविः

स्पष्ट मङ्गल—

$$\frac{\text{कुज स्पष्टगति} \times \text{चालन}}{६०} = \text{चालनफल}$$

मिश्रमान कालिक मंगल ± चालनफल = स्पष्टमंगल

$$\frac{(४१।४३)\times ४१।३}{६०} = २८।३२$$

७।११।४२।५६ मिश्रमानकालिक मंगल
—२८।३२ चालनफल
७।११।१४।२४ स्पष्टमंगल

स्पष्टबुध—

$$\frac{\text{बुध स्प० ग०} \times \text{चा०}}{६०} = \text{चालन फल}$$

मिश्रमानकालिकबुध ± चालनफल = स्पष्टबुध

$$\frac{(४१।३)\times ५६।२१}{६०} = ४०।३६$$

५।०।२।४८ मिश्रलानकालिक बुध
—४०।३६ चालनफल
४।२६।२२।१२ स्पष्टबुध

स्पष्टगुरु—

$$\frac{\text{गुरु० स्प०ग०} \times \text{चा०}}{६०} = \text{चालनफल}$$

मिश्रमान कालिक गुरु ± चालनफल = स्पष्ट गुरु

$$\frac{(४१।३)\times ५।३१}{६०} = ३।४६$$

१०।१०।२४।५२ मिश्रमान कालिक गुरु
+ ३।४६ चालनफल (वक्री होने से विपरीत संस्कार होगा)
१०।१०।२८।३८ = स्पष्टगुरु

शुक्रस्पष्टीकरण—

$$\frac{\text{शु० स्प० ग०} \times \text{चा०}}{\text{६०}} = \text{चालनफल}$$

मिश्रमानकालिक शुक्र ± चालनफल = स्पष्ट शुक्र

$$\frac{(\text{४१।३}) \times \text{७४।२७}}{\text{६०}} = \text{५०।५७}$$

५।८। ८। ० = मिश्रमानकालिक शुक्र
— ५०।५६ = चालनफल
५।७।१७। ४ = स्पष्टशुक्र

शनिस्पष्ट—

$$\frac{\text{श० स्प० ग०} \times \text{चालन}}{\text{६०}} = \text{चालनफल}$$

मिश्रमानकालिकशनि ± चालनफल = स्पष्टशनि

$$\frac{(\text{४१।३}) \times \text{७।२६}}{\text{६०}} = \text{५।५}$$

४।२८।१९।७ = मिश्रमानकालिक शनि
— ५।५ = चालनफल
४।२८।१४।२ = स्पष्टशनि

राहु स्पष्ट—

$$\frac{\text{राहु गति} \times \text{चालन}}{\text{६०}} = \text{चालनफल}$$

मिश्रमानकालिकराहु ∓ चालनफल = स्पष्ट राहु

$$\frac{(\text{४१।३}) \times (\text{३।११})}{\text{६०}} = \text{२।११}$$

११।८। ८।४८ मिश्रमानकालिक राहु
+ २।११ चालनफल (वक्रीग्रह में चालनफल का विपरीत संस्कार होता है)।
११।८।१०।५९ स्पष्ट राहु

केतु स्पष्ट—

स्पष्ट राहु में ६ राशि जोड़ने अथवा घटाने पर स्पष्ट केतु होता है।

अतः ११।८।१०।५९ स्पष्ट राहु
±६।०। ०। ०
५।८।१०।५९ स्पष्ट केतु

अतः जन्म समय का—

इष्टकाल = ५।३१।४२ घट्यादि
रोहिणी भयात् = ५६।२८। ७ „
„ भभोग = ६६।२६। ० „

स्पष्टग्रह सगतिक

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	के.	ग्रह
५	१	७	४	१०	५	४	११	५	रा.
१४	२१	११	२६	१०	७	२८	८	८	अं.
४३	५५	१४	२२	३८	१७	१४	१०	१०	क.
२५	३६	२४	१२	३८	४	२	५९	५९	वि.
५६	७२१	४१	५९	५	७४	७	३	३	क.
७	५९	४३	२१	३१	२७	२६	११	११	वि.
सदा मार्गी	सदा मार्गी	मार्गी	मार्गी	वक्री	मार्गी	मार्गी	सदा वक्री	सदा वक्री	ग्रहस्थिति
मातृ	भ्रातृ	पितृ	आत्म	पुत्र	ज्ञाति	आमात्य	×	×	कारकत्व
युवा	कुमार	वृद्ध	मृत	कुमार	वृद्ध	मृत	वृद्ध	वृद्ध	अवस्था

कारकत्व विचार

आत्मकारक—

सूर्यादि सात ग्रहों में जिस ग्रह का अंश सर्वाधिक रहेगा वह ग्रह आत्मकारक होता है। इस उदाहरण में बुध का अंश (२६) सबसे अधिक है। अतः बुध आत्म कारक ग्रह हुआ।

आमात्यकारक—

आत्म कारक ग्रह से जिस ग्रह का अंश कम हो वह आमात्यकारक होता है। इस उदाहरण में आत्मकारक बुध से न्यून अंश शनि का है। अतः शनि आमात्य कारक माना जायेगा।

भ्रातृकारक—

आमात्य कारक ग्रह से न्यून (कम) अंश वाला ग्रह भ्रातृकारक होता है। इस उदाहरण में आमात्य कारक शनि से न्यून अंश चन्द्र का है। अतः चन्द्र भ्रातृकारक माना जायेगा।

मातृकारक ग्रह—

भ्रातृकारक ग्रह से न्यून अंश वाला ग्रह मातृ कारक होता है। उदाहरण में भ्रातृ कारक ग्रह चन्द्र से न्यून अंश रवि का है। अतः रवि मातृ कारक ग्रह होगा।

पितृकारक—

मातृ कारक ग्रह से न्यून अंशवाला ग्रह पितृ कारक माना गया है। उदाहरण में मातृकारक ग्रह रवि से न्यून अंश मंगल का है। अतः मंगल पितृ-कारक ग्रह माना जायेगा।

पुत्रकारक—

पितृ कारक ग्रह से न्यून अंश वाला ग्रह पुत्र कारक होता है। उदाहरण में पितृ कारक ग्रह मंगल से न्यून अंश वाला बृहस्पति है। अतः बृहस्पति पुत्र कारक माना जायेगा।

ज्ञातिकारक—

पुत्रकारक ग्रह से न्यून अंश वाला ग्रह ज्ञाति कारक होता है। उदाहरण में पुत्र कारक ग्रह बृहस्पति से न्यून अंश शुक्र का है। अतः शुक्र ज्ञाति कारक ग्रह माना जायेगा।

महर्षि पराशर ने आत्म, आमात्य, भ्रातृ, मातृ, पितृ, पुत्र, ज्ञाति, स्त्री ये ८ कारक न्यून अंश क्रम से निर्दिष्ट किये हैं। इस में राहु की गणना है। तदनुसार प्रस्तुत उदाहरण में राहु ज्ञाति एवं शुक्र स्त्री कारक ग्रह माना जायेगा।

ग्रहों की अवस्था—

बाल, कुमार, युवा, वृद्ध, मृत ये विषम राशियों में क्रमशः ६—६ अंशों के होते हैं। समराशियों में ६—६ अंशों तक क्रमशः मृत, वृद्ध, युवा, कुमार एवं बाल अविस्थायें होतीं हैं।

स्पष्टार्थ चक्र

बाल	कुमार	युवा	वृद्ध	मृत	अवस्था
१°–६°	७°–१२°	१३°–१८°	१९°–२४°	२५°–३०°	विषमराशि
मृत	वृद्ध	युवा	कुमार	बाल	अवस्था
१°–६°	७°–१२°	१३°–१८°	१९°–२४°	२५°–३०°	समराशि

लग्नसाधन—

लग्नसाधन हेतु संक्षिप्त सूत्र—

गतभोग्यासवः कार्या भास्करादिष्टकालिकात् ।
स्वोदयासुहता भुक्त-भोग्या भक्ताः खवह्निभिः ॥
अभीष्टघटिकासुभ्यो भोग्यासून् प्रविशोधयेत् ।
तद्वत् तदेष्यलग्नासूनेवं यातान् तथोत्क्रमात् ॥
शेषं चेत् त्रिंशताऽभ्यस्तमशुद्धेन विभाजितम् ।
भागैर्युक्तं च हीनं च तल्लग्नं क्षितिजे तदा ॥

सूर्यसिद्धान्त

स्पष्ट सूर्य + अयनांश = सायनसूर्य

३०°।०।० − भुक्तांश = भोग्यांश

$$\frac{\text{भोग्यांश} \times \text{राश्युदयमान}}{३०} = \text{भोग्यपल}$$

$$\left(\frac{\text{भुक्तांश} \times \text{राश्युदयमाय}}{३०}\right) = \text{भुक्तपल}$$

भोग्यप्रकार से लग्न साधनः—

(इष्टपल − भोग्यपल) − अग्रिमराश्युदयमान = शेष

$$\frac{\text{शेष} \times ३०}{\text{अशुद्धराश्युदयमान}} = \text{लब्धि, अशुद्धराशिसम्बन्धी लग्नखण्ड अंशादि}$$

शुद्धराशिसंख्या + अंशादि लब्धि = सायनलग्न

सायनलग्न − अयनांश = निरयनलग्न ।

भुक्त प्रकार से लग्न साधनः—

इष्टपल — भुक्तपल = शेष

शेष — गतराश्युदयमान = शेष अशुद्ध राशि सम्बन्धी मान

$$\frac{\text{शेष} \times ३०}{\text{शुद्धराश्युदयमान}}$$ = लब्धि = अशुद्धराशिसम्बन्धी लग्नमान अंशादि

अशुद्धराशिसंख्या — लब्धिः = सायनलग्न

सायनलग्न — अयनांश = निरयनलग्न ।

सूर्यस्पष्ट में अयनांश को जोड़ने से सायन सूर्य होता है। सायन सूर्य की राशि को छोड़ शेष को भुक्तांश कहते हैं। भुक्तांशादि को ३०° तीस अंश में घटाने से भोग्यांश होता है। भुक्तांश अथवा भोग्यांश को सायन सूर्य के राश्युदयमान से गुणा कर तीस का भाग देने से क्रम से भुक्तपल एवं भोग्यपल होते हैं। यदि भोग्य प्रकार से लग्न साधन करना हो तो इष्टपल में भोग्यपल को घटावें। पुनः शेष में अग्रिम राशियों के उदयमान को घटावें। जिस राशि का उदयमान न घटे वह अशुद्ध राशि कही जायेगी। अशुद्ध राशि से पहले की राशि शुद्ध राशि कही जाती है। शेष को ३० से गुणाकर अशुद्ध राशि के उदयमान से भाग देने पर अशुद्धराशि सम्बन्धि लग्न का अंशादि मान होगा। इसमें शुद्धराशि की संख्या को जोड़ने से सायनलग्न होता है। सायन लग्न में अयनांश घटाने से निरयन लग्न सिद्ध होता है।

यदि भुक्त प्रकार से लग्न साधन करना हो तो इष्टपल में भुक्तपल को घटावें शेष में सायन सूर्य के पहले की राशियों के उदयमानों को घटावें। जिस राशि का उदयमान न घटे वह अशुद्ध राशि होती है। शेष को ३० से गुणा कर अशुद्ध राशि के उदयमान से भाग देने पर जो अंशादि, फल हो उसे अशुद्ध राशि की संख्या में घटाने से सायनलग्न होता है। सायनलग्न में अयनांश घटाने से निरयन लग्न होता है।

सायन सूर्य के भोग्य पल से इष्टपल कम हो तो इष्टपल को ३० से गुणा कर सायन सूर्य के राश्युदय मान से भाग देने पर अंशादि फल को इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य में जोड़ देने से निरयन लग्न होता है।

अतः लग्न साधन हेतु चार उपकरणों को आवश्यकता है।

(१) इष्टकाल (२) स्पष्ट सूर्य (३) अयनांश (४) राश्युदयमान

इष्टकाल एवं स्पष्ट सूर्य का विवेचन किया जा चुका है। अतः अयनांश साधन विधि आगे वर्णित है।

अयनांश साधन—

अयनांश साधन में विविध आचार्यों में मतभेद है। ग्रहलाघवकार के अनुसार इष्टशक में ४४४ घटाकर ६० का भाग देने से लब्धि तुल्य अयनांश सिद्ध होता है।

नवीन मत के अनुसार वर्तमान शक में १८०० घटाकर शेष में एक स्थान पर ७० से और दूसरे स्थान पर ५० से भाग देने पर प्रथम स्थान पर अंशादि एवं दूसरे स्थान पर कलादि लब्धि होगी। दोनों फलों के अन्तर में २२।८।३३ अंशादि मान को जोड़ने से योगफल तुल्य वर्षारम्भ कालिक अयनांश होता है। प्रकृत उदाहरण का शक १८७२ है अतः जन्मशक १८७२—१८०० = ७२। इसमें ७० का भाग देने पर लब्धि १°।१′।४३″ अंशादि और ५० का भाग देने पर लब्धि १।२६ कलादि हुई। अतः दोनों का अन्तर १°।०′।१७″ अंशादि को २२।८।३३ अंशादि में जोड़ने से २३°।८′।५०″ वर्षारम्भकालिक अयनांश सिद्ध हुआ।

अयनांश की १ मास में ४″।१०‴ विकलादि गति है। अतः सूर्य के कन्या प्रवेश के दिन तक अयनांश का मान २०″।५०‴ है। इसमें वर्षारम्भकालिक अयनांश जोड़ने से २३°।८′।५०″ + (२०″।५०‴ = २१″) = २३°।९′।११″ स्पष्ट अयनांश सिद्ध हुआ।

वर्षारम्भ कालिक अयनांश ज्ञान हेतु कोष्ठक—

शक	अयनांश	शक	अयनांश	शक	अयनांश
१८७१	२३।७।५९	१८८०	२३।१५।३१	१८८९	२३।२३।४
१८७२	२३।८।४९	१८८१	२३।१६।२२	१८९०	२३।२३।५४
१८७३	२३।९।३९	१८८२	२३।१७।१२	१८९१	२३।२४।४४
१८७४	२३।१०।३०	१८८३	२३।१८।२	१८९२	२३।२५।३५
१८७५	२३।११।२०	१८८४	२३।१८।५३	१८९३	२३।२६।२५
१८७६	२३।१२।१०	१८८५	२३।१९।४३	१८९४	२३।२७।१५
१८७७	२३।१३।०	१८८६	२३।२०।३३	१८९५	२३।२८।६
१८७८	२३।१३।५०	१८८७	२३।२१।२३	१८९६	२३।२८।५६
१८७९	२३।१४।५१	१८८८	२३।२२।१३	१८९७	२३।२९।४६

१८९८	२३।३०।३७	१९०९	२३।३९।४६	१९२०	२३।४९।१
१८९९	२३।३१।२७	१९१०	२३।४०।३६	१९२१	२३ ४९।५१
१९००	२३।३२।१७	१९११	२३।४१।२६	१९२२	२३।५०।४२
१९०१	२३।२३।७	१९१२	२३।४२।१६	१९२३	२३।५१।३२
१९०२	२३।३३।५७	१९१३	२३।४३।१०	१९२४	२३।५२।२२
१९०३	२३।३४।४७	१९१४	२३।४४।०	१९२५	२३।५३।१२
१९०४	२३।३५।३८	१९१५	२३।४४।५०	१९२६	२३।५४.३
१९०५	२३।३६।२८	१९१६	२३।४५।४०	१९२७	२३।५४।५३
१९०६	२३।३७।१८	१९१७	२३।४६।३०	१९२८	२३।५५।४३
१९०७	२३।३८। ८	१९१८	२३।४७।२०	१९२९	२३।५६।३३
१९०८	२३।३८।५९	१९१९	२३।४८।११	१९३०	२३।५७।२३

अभीष्ट शकारम्भ काल में अयनांश साधन करने हेतु एकादि वर्षों की कलादि अयनांश गति :—

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	वर्ष.
०	१	२	३	४	५	५	६	७	८	क०
५०	४०	३१	२१	११	१	५२	४२	३२	२२	वि०

मेषादि संक्रान्ति के आरम्भ में अयनांश की विकलादि गति :—

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.	रा.
०	४	८	१२	१६	२०	२५	२९	३३	३७	४१	४५	वि.
०	१०	२०	३०	४०	५०	०	१०	२०	३०	४०	५०	प्र.

उदाहरण में शक १८७२ रवि ५।१४।४३।२४ को अयनांश साधन—

१८७२ शकादि में अयनांश = २३°।८′।४९″

कन्या संक्रान्ति के आदि में = २१

इष्टकालिक अयनांश = २३।९।१०

लंकोदय मान से स्वोदयमान साधन—

लंकोदयमान में चरखण्ड का संस्कार करने से अपने देश में राशियों के उदयमान होते है।

लंकोदय मान मेषादि राशियों के क्रम से २७८।२९९।३२३।३२३।२९९।२७८।२७८।२९९।३२३।३२३।२९९।२७८ हैं।

चरखण्ड साधन—

पलभा को एक स्थान पर १० से गुणा करें, दूसरे स्थान पर ८ से गुणा करें तथा तीसरे स्थान पर १० से गुणा कर ३ का भाग देने से क्रम से मेष, वृष तथा मिथुन राशियों के चरखण्डमान होते हैं। ये ही व्युत्क्रम से कर्क, सिंह, कन्या के चरखण्ड होंगे। ये ही ६ राशियों के चरखण्ड मान व्युत्क्रम से तुलादि राशियों के चरखण्ड होंगे।

पलभा—

सायन मेष संक्रान्ति के दिन द्वादशांगुल शंकु की छाया को पलभा कहते हैं। पलभा साधन विधि अन्य ग्रन्थों में दी है, किन्तु सुगमार्थ कुछ अक्षांशों की अंगुलादि पलभा दी जाती है—

१	०।१२।३४	१६	३।२६।२४	३१	७।१२।१८	४६	१२।२५।३७
२	०।२५। ९	१७	३।४०। ०	३२	७।२९।५३	४७	१२।५२।३७
३	०।३७।४४	१८	३।५४। ०	३३	७।४७।३१	४८	१३।१९।३७
४	०।५०।२१	१९	४। ८। ०	३४	८। ५।३८	४९	१३।४८।५०
५	१। ३। ०	२०	४।२२। ०	३५	८।२४। ७	५०	१४।१८। ३
६	१।१५।४०	२१	४।३६।२२	३६	८।४३। ५	५१	१४।४९।४८
७	१।२८।२३	२२	४।५०।५३	३७	९। २।४७	५२	१५।२२।३२
८	१।४१।१०	२३	५। ५।३८	३८	९।२२।३०	५३	१५।५६।२१
९	१।५४। ०	२४	५।२०।३१	३९	९।४३।२०	५४	१६।३१।११
१०	२। ६।५०	२५	५।३५।४२	४०	१०। ४। ९	५५	१७। ९।१९
११	२।२०। ०	२६	५।५१। ७	४१	१०।२६।१४	५६	१७।४७।२८
१२	२।३३। ०	२७	६। ७। ०	४२	१०।४८।१८	५७	१८।२९।४४
१३	२।४६।१२	२८	६।२२।४८	४३	११।११।५१	५८	१९।१२। ०
१४	२।५९।२८	२९	६।२९। ४	४४	११।३५।२४	५९	१९।५९।३०
२५	३।१२।२४	३०	६।५९।४१	४५	१२। ०।३०	६०	२०।४७। ०

इष्ट स्थान की पलभा साधन के लिये गत एवं अग्रिम अक्षांशों की पलभा के अन्तर को अक्षांश के कला मान से गुणा कर ६० का भाग देने से लब्धि व्यङ्गु-लादि पलभा होगी। इसे गत अक्षांश की पलभा में जोड़ने से अपने अभीष्ट अक्षांश की पलभा होगी।

प्रस्तुत उदाहरण में २५°।३०′ अक्षांश की पलभा साधन करनी है। अतः

२५ अक्षांश की पलभा = ५।३५।४२
२६ „ „ = ५।५१। ७
अन्तर १५।२५

$$\frac{१५।२५ \times ३०}{६०} = ७।४२।३०$$

५।३५।४२। ० = २५° की पलभा
७।४२।३० = ३०′ की पलभा
५।४३।२४।३० = २५°।३०′ अक्षांश की पलभा

चरखण्ड साधनोदाहरण—

५।४३।२५ × १० = ५७ प्रथम, षष्ठ, सप्तम, द्वादश चरखण्ड
५।४३।२५ × ८ = ४६ द्वितीय, पञ्चम, अष्टम, एकादश „
(५।४३।२५ × १०) ÷ ३ = १९ तृतीय, चतुर्थ, नवम, दशम „

स्वोदय साधनोदाहरण—

लंकोदय ± च०ख० = स्वोदयमान
२७८ — ५७ = मे० २२१ मी०
२९९ — ४६ = वृ० २५३ कु०
३२३ — १९ = मि० ३०४ म०
३२३ + १९ = क० ३४२ ध०
२९९ + ४६ = सिं० ३४५ वृ०
२७८ + ५७ = क० ३३५ तु०

लग्न एवं सप्तम भाव साधन का उदाहरण—

रवि० ५।१४।४३।२५, अयनांश २३।१९।१०, इष्टकाल ५।२३।४२

५।१४।४३।२५ = स्पष्टरवि
+२३। ६।१० = अयनांश

६। ७।५२।३५ = सायनसूर्य
७।५२।३५ = भुक्तांश
३०। ०। ०
—७।५२।३५ = भुक्तांश

२२। ७।२५ = भोग्यांश

$$\frac{\text{भोग्यांश} \times \text{राश्युदयमान}}{३०} = \text{भोग्यपल}$$

$$\frac{(२२।७।२५) \times ३३५}{३०} = २४७।२।४६ = \text{भोग्यपलादि}$$

५।३१।४२ = ३३१।४२ इष्टपल
भोग्यपल तुला = —२४७। २।४६

वृश्चिक अशुद्ध ८४।३६।११ शेष

$$\frac{८४।३६।११ \times ३०}{३४५} = ७।२१।४० \text{ अशुद्धराशिलग्नखण्ड}$$

७। ०। ०। ० = शुद्धराशि संख्या
७।२१।४० = अशुद्धराशि लग्नखण्ड

७। ७।२१।४० = सायनलग्न
—२३। ६।१० = अयनांश

६।१४।१२।३० = निरयनलग्न
+६ राशि

०।१४।१२।३० = सप्तमलग्न

अथ नतोन्नतसाधनपूर्वकं दशमचतुर्थभावयोः साधनम्—

रात्रेः शेषमितं युतं दिनदलेनाह्नो गतं शेषकं
विश्लेष्यं खलु पूर्वपश्चिमनतं त्रिंशच्च्युतं चोन्नतम् ।
यत्पूर्वोन्नतषड्भयुक्तरवितः पश्चान्नतादित्यतो
यल्लङ्कोदयकैश्च लग्नमिव तन्नाभ्यं सषड्भं सुखम् ॥ २ ॥

अन्वयः—रात्रेः शेषं इतं दिनदलेन युतं पूर्वपश्चिमनतं भवति। एवं अह्नो गतं शेषकं दिनदलेन विश्लेष्यं पूर्वपश्चिमनतं स्यादिति। तन्नतं त्रिंशच्च्युतं उन्नतं, भवति। पूर्वोन्नतषड्भयुक्तरवितः तथा पश्चानता-दित्यतः लंकोदयकैः लग्नमिव यल्लग्नं तन्माध्यम्, तत्सषड्भं सुखं भवति।

व्याख्या—रात्रेः=निशायाः, शेषं=अविशिष्टघट्यादिकम्, इतं=गत-घट्यादिकम्, दिनदलेन=दिनार्धेन, युतं क्रमशः पूर्वपश्चिमनतं=पूर्वापर-नतं भवति। अर्थात् अर्द्धरात्रितः पश्चाज्जन्मसमयश्चेत् तदा रात्रिशेषं दिनदलेन युतं पूर्वनतं भवति, तथा च अर्धरात्रितः प्रागेवजन्मसमयश्चेत्तदा रात्रिगतं दिनदलेन युतं पश्चिमनतं भवति। एवं अह्नः=दिवसस्य गतं शेषकं च दिनदलेन विश्लेष्यं=दिनार्धेन विशोध्यम् तदा क्रमेण पूर्वपश्चिम-नतं सिध्यति। अर्थात् दिनस्य गतं दिनार्धेन विशोध्यते तदा पूर्वनतम्, एवं च दिनस्य शेषमानं दिनदलेन विशोध्यते तदा पश्चिमनतं भवति। तन्नतं त्रिंशच्च्युतं=त्रिंशतः शुद्धमुन्नतं स्यात्। अर्थात् पूर्वसाधितनतयोः पूर्वनते त्रिंशच्च्युते पूर्वोन्नतम्, पश्चिमनते च त्रिंशच्च्युते पश्चिमोन्नतं भवति। पूर्वोन्नतषड्भयुक्तरवितः=पूर्वोन्नतघटिकाषड्राशियुक्तसूर्यतः, लङ्कोदयकैः=लङ्कायाः राश्युदयमानैः, लग्नमिव=लग्नसाधनमिव यल्लग्नं सिध्यति तन्माध्यं=तद्दशमलग्नम्, तत्सषड्भं=दशमलग्नं षड्राशियुतम् सुखं=चतुर्थभावं सिध्यतीति।

उपपत्ति—

नतोन्नतोपपत्ति—

खगोलस्य याम्योत्तरवृत्तेन भागद्वयं भवति। तत्र याम्योत्तरवृत्तात्पूर्व-भागस्य पूर्वकपालम्, पश्चिमभागस्य च पश्चिमकपालमिति संज्ञा विद्यते। तत्र याम्योत्तरवृत्ताहोरात्रवृत्तयोरूर्ध्वसम्पातस्थानादहोरात्रवृत्ते प्रचलन्सूर्यो यावतीभिर्घट्यादिभिर्नतः स नतकाल इति कथ्यते। एवमेव याम्यो-त्तराहोरात्रवृत्तयोरधः सम्पातस्थानाद्यावतीभिर्घट्यादिभिरुन्नतः स उन्नत-काल इति कथ्यते। तत्र क्षितिजवृत्तादूर्ध्वयाम्योत्तरवृत्तावधिं यावद-होरात्रवृत्ते दिनार्धम्, क्षितिजवृत्तादधो याम्योत्तरवृत्तावधिरात्र्यर्धकाल इति कथ्यते, अतः प्राक्कपाले क्षितिजाधःस्थे सूर्ये रात्रिशेषं, पश्चिम-कपाले च क्षितिजाधःस्थे सूर्ये रात्रिगतमतो रात्रिशेषेण रात्रिगतेन च पृथक्-पृथक् युतं दिनार्धं क्रमेण पूर्वपश्चिमनतं स्यात्। एवमेव प्राक्कपाले

क्षितिजोर्ध्वस्थे सूर्ये क्षितिजवृत्ताद्रविं यावद् दिनगतम्, पश्चिमकपाले दिनशेषमतो दिनगतेन दिनशेषेण च ऊनितं दिनदलं क्रमात् प्रागपराख्यो नतकालः स्यात्। अतः

नतका० + उन्नतका० = ३० घट्यः

उन्नतकालः = ३०—नतकालः। अत उपपन्नं नतोन्नतसाधनम्।

श्लोकेऽस्मिन्पूर्वपश्चिमनतं त्रिंशच्च्युतं यदुक्तं तद्दिनरात्रिमानं तुल्यं मत्वा विहितम्। क्रान्त्याभावदिनेऽयमनुपातः साधुः, किन्त्वन्यस्मिन्दिनेऽनया क्रियया निर्वाहो न भविष्यतीति सुधीभिर्विमृग्यम्।

दशमचतुर्थभावयोरुपपत्तिः—

क्रान्तिवृत्तयाम्योत्तरवृत्तयोरूर्ध्वसम्पातो दशमलग्नमुच्यते। एवं क्रान्तियाम्योत्तरवृत्तयोरधः सम्पातश्चतुर्थलग्नमित्युच्यते। तत्र दशम लग्नस्य मध्यलग्नम्, चतुर्थ भावस्य च सुखभावमिति संज्ञा। तत्र क्रियालाघवार्थं भोग्यप्रकारेणैवाचार्येणानयनं विहितम् यथा—पूर्वनते यावतीभिर्घटिकाभिरधोयाम्योत्तरवृत्तात्सूर्यउन्नतो भवति तावतीभिरेव घटिकाभिः सषड्भरविरूर्ध्वयाम्योत्तरवृत्तान्नतो भवति। यतो हि द्वयोः वृत्तयोः सम्पातद्वयस्य षड्भान्तरे स्थितिरिति। अतः सषड्भसूर्यदशमलग्नयोरन्तरे सषड्भसूर्यस्य भोग्यांशाः, मध्यलग्नस्य भुक्तांशास्तदन्तर्वर्तिराशयश्च, तत्सम्बन्धिसमयश्चाहोरात्रवृत्ते पूर्वोन्नतघटीतुल्य एव सिध्यति। अत एव "पूर्वोन्नतषड्भयुक्तरवित" इति कथनं युक्तियुक्तं सङ्गच्छते। तथा पश्चिमनते मध्यलग्नार्कयोरन्तरे सूर्यस्यभोग्यांशाः, मध्यलग्नभुक्तांशास्तदन्तर्वर्तिराश्यंशाश्चेति तत्सम्बन्धिकालश्चाहोरात्रवृत्ते नतकालतुल्य एव भवत्यतोऽत्र स्थितिद्वयेऽपि भोग्यप्रकारेण दशमलग्नं भवितुमर्हत्येव। एवमेव स्वयाम्योत्तरवृत्तं निरक्षदेशीयक्षितिजवृत्तं ध्रुवस्थानगतत्वात् भवति, तस्मान्मध्यलग्नानयने निरक्षोदयमानेन साधनं युक्तियुक्तमेव। अथ च दशमचतुर्थलग्नयोर्मिथः षड्भान्तरे स्थितिस्तेन सषड्भं मध्यं सुखं भवतीति सम्यङ् निष्पद्यते।

हि० टी०—रात्रि में अर्द्धरात्रि के वाद का इष्टकाल हो तो ६० घटी में इष्टघट्यादि को घटाने से रात्रि का शेष भाग होता है। रात्रि की अवशिष्ट घट्यादि को दिनार्धं में जोड़ने से पूर्वनत होता है। रात्रि में अर्द्धरात्रि के पहले का इष्टकाल हो तो रात्रिगतघटी को दिनार्ध में जोड़ने से पश्चिमनत होता है।

दिन में मध्याह्न (दोपहर) से पूर्व इष्टकाल हो तो दिनगतघटी को दिनार्द्ध में घटाने से पूर्वनत होता है, यदि मध्याह्न के बाद सूर्यास्त के पहले का इष्टकाल हो तो दिनशेष घट्यादि को दिनार्द्ध में घटाने से पश्चिमनत होता है। पूर्वनत को ३० में घटाने से पूर्वोन्नत तथा पश्चिमनत को ३० में घटाने से पश्चिमोन्नत होता है। यदि पूर्वनत हो तो पूर्वोन्नतघटी को इष्टकाल कल्पना कर सायनसूर्य में ६ राशि जोड़े और लंकोदयमान द्वारा भोग्य प्रकार से लग्नसाधन की रीति द्वारा लग्नसाधन करने पर दशमलग्न होता है। यदि पश्चिमनत हो तो पश्चिमनतघटी को ही इष्टकाल मानकर तात्कालिक सायनसूर्य द्वारा लग्नसाधन की रीति से भोग्य प्रकार से लग्नसाधन करने पर दशमलग्न होता है। सायन-दशमलग्न में अयनांश घटाने से निरयन दशमलग्न होता है। दशमलग्न (भाव) में छः राशि जोड़ने से चतुर्थ लग्न होता है।

उदा०—

इष्टकाल = ५।३१।४२, दिनमान = २९।२७।१०

स्पष्टरवि = ५।१४।४३।२५, अयनांश = २३।९।१०

दिन में इष्टकाल होने से पूर्वोक्तरीति से पूर्वनत साधन—

(दिनार्ध—इष्टकाल = पूर्वनत)

$\frac{२९।२७।१०}{२}$ = १४।४३।३५ दिनार्द्ध

१४।४३।३५—५।३१।४२ = ९।११।५३ = पूर्वनत

३०—९।११।५३ = २०।४८। ७ = पूर्वोन्नतघट्यादि

५।१४।४३।२५ सूर्य।
२३। ९।१० अयनांश।
———
६। ७।५२।३५ सायनसूर्य।
+६ राशि, पूर्वनत होनें से
———
०। ७।५२.३५ सूर्य।

३०°—७।५२।३५ = २२।७।२५ भोग्यांश

$\frac{२२।७।२५ \times २७८}{३०}$ = २०५।०।४४ भोग्यपल

पूर्वोन्नतघट्यादि = २०।४८।७

„ पलादि = १२४८।७

१२४८।७ = पूर्वोन्नतपलादि

− २०५।०।४४	=	भोग्यपलादि मेष
१०४३।६।१६		
२९९	=	वृषोदयमान
७४४।६।१६		
३२३	=	मिथुनोदयमान
४२१।६।१६		
३२३	=	कर्कोदयमान
९८।६।१६	=	शेष
(९८।६।१६)×३० / २९९	=	९।५०।३६
४।०। ०। ०	=	कर्क शुद्ध राशि
+९।५०।३६	=	अशुद्धराशि सम्बन्धी मान
४। ९।५० ३६	=	सायनदशमलग्न
—२३। ९।१०	=	अयनांश
३।१६।४१।२६	=	निरयनदशमलग्न (दशमलग्न)
+६ राशि		
९।१६।४१।२६	=	चतुर्थ भाव

अथावशिष्टभावसन्ध्यानयं तत्फलञ्चाह—

त्र्यंशो व्यस्तखभस्य भूयमहतो योज्यस्तनौ द्विच्युतो
बन्धौ तेऽपि च साङ्गभास्तनुमुखाः सन्धिर्द्वियोगोऽर्धितः।
शून्यं सन्धिषु भावगेऽखिलफलं स्याद्भावसन्ध्यन्तरे-
णाप्तं सन्धिखगान्तरं क्षयचयं भावाधिकेऽल्पे खगे ॥ ३ ॥

अन्वयः—व्यस्तखभस्य त्र्यंशः भूयमहतः तनौ योज्यः, त्र्यंशो द्विच्युतः भूयमहतो बन्धौ योज्यः। तेऽपि च साङ्गभाः तनुमुखा भवन्तीति शेषः, द्वियोगोऽर्धितः सन्धिः, स्यात्। सन्धिषु शून्यं फलम्, भावगे अखिलफलम्, स्यात्। भावाधिकेऽल्पे खगे सन्धिखगान्तरं भावसन्ध्यन्तरेणाप्तं क्षयचयं फलं भवतीति भावः।

व्याख्या—व्यस्तखभस्य = सप्तमभावोनदशमभावस्य, त्र्यंशः = तृतीयांशः, द्विष्ठः = स्थानद्वये स्थाप्यः, भूयमहतः = एकत्रैकेनान्यत्र द्वाभ्यां गुणित इत्यर्थः। पृथक्-पृथक् स तनौ = लग्ने योऽयस्तदा क्रमेण द्वितीय-तृतीयभावौ भवतः। एवं स एव त्र्यंशो द्विच्युतः = द्वाभ्यां विशुद्धः भूयमहतः = एकत्रैकेनान्यत्र द्वाभ्यां गुणितः पृथक्-पृथक् बन्धौ = चतुर्थ-भावे योऽयस्तदा क्रमेण पञ्चमषष्ठभावौ भवतः। तेऽपि च क्रमेणागता द्वितीय—तृतीय—पञ्चम—षष्ठभावाः साङ्गभाः = षड्राशि सहिताः क्रमेणाष्टमनवमैकादशद्वादशभावाः सिध्यन्ति। एवं तनुमुखाः = तन्वादयो द्वादशभावाः जायन्ते।

द्वियोगोऽर्धितः = द्वयोरासन्नवर्तिभावयोर्योगोऽर्धितः सन्धिर्भवति। स एव पूर्वभावस्य विरामसन्धिरग्रिमभावस्यारम्भसन्धिः स्यादित्यर्थः।

फलविचारः—सन्धिषु स्थिते ग्रहे शून्यम् = शून्यसमं फलम्, भावगे = भावतुल्ये ग्रहे, अखिलफलं = पूर्णफलं रूपमितं स्यात्। भावाधिके-ऽल्पे खगे सति सन्धिखगान्तरम् = सन्धिग्रहान्तरम्, भावसन्ध्यन्त-रेणाप्तम् = भावसन्ध्यन्तरेण भक्तम्, फलं क्रमात् क्षयचयं भवति। अर्थात् भावतोऽधिके ग्रहे 'विरामसन्धिखगान्तरं विरामसन्धिभावान्तरेण भक्तं फलं क्षयं भवति। एवं भावतोऽल्पे ग्रहे आरम्भसन्धिग्रहान्तर-मारम्भसन्धिभावान्तरेण भक्तं फलं चयं भवतीति भावः।

उपपत्तिः—प्रथमचतुर्थभावयोरन्तरस्य तुल्यास्त्रयो विभागाः क्रान्ति-वृत्ते द्वितीयादयस्त्रयो भावाः भवन्ति। एवमेव चतुर्थसप्तमभावयोरन्तरस्य तुल्यास्त्रयो विभागाः क्रान्तिवृत्ते पञ्चमादयस्त्रयो भावाः भवन्ति। तथा च सप्तमदशमभावयोरन्तरे अष्टमादयस्त्रयो भावाः दशमप्रथमभाव योरन्तरे चैकादशादयस्त्रयो भावा भवन्तीति प्राचीनानां राद्धान्तः। अत एव लग्नचतुर्थभावयोरन्तरस्य त्रिभागेन

$$= \frac{\text{च० भा०} - \text{ल०}}{३} = \frac{६ + \text{च० भा०} - \text{ल०} - ६}{३}$$

$$= \frac{६ + \text{च० भा०} - (६ + \text{ल०})}{३} = \frac{\text{दशमभा०} - \text{सप्तमभा०}}{३}$$

अनेनैकगुणितेन युतं लग्नं द्वितीयभावो भवति, द्विगुणितेन च युतं लग्नं तृतीयभावो भवत्येव। तथा च चतुर्थसप्तमभावयोरन्तरस्य त्रिभागेन—

$$= \frac{(\text{स० भा०} - \text{च० भा०})}{३} = \frac{६ - ६ + \text{स० भा०} - \text{च० भा०}}{३}$$

$$= \frac{६ - (\text{च० भा०} + ६ - \text{स० भा०})}{३} =$$

$$२ - \frac{(\text{द० भा०} - \text{स० भा०})}{३}$$

अनेनैकगुणितेन युतो चतुर्थभावः पञ्चमभावो द्विगुणितेन च युतो षष्ठभावः स्यादेव। तत्र वृत्तयोः सम्पातद्वयस्य षड्भान्तरे स्थितत्वात् द्वितीयादयो भावाः साङ्गभा अष्टमादयो भावाः स्युः। तत्र भावद्वयान्तरस्य मध्यविन्दुरेव सन्धिस्थानं तेन तस्य राश्यादिप्रमाणम् =

$$\text{प्र० भा०} + \frac{\text{द्वि० भा०} - \text{प्र० भा०}}{२} = \frac{\text{प्र०भा०} + \text{द्वि०भा०}}{२}$$

अतः "सन्धिर्द्वियोगोऽर्धितः" इत्युपपद्यते। अथ भावफलानयने युक्तिः—

"भावप्रवृत्तौ हि फलप्रवृत्तिः पूर्णं फलं भावसमांशकेषु।
ह्रासः क्रमाद्भावविरामकाले फलस्य नाशः कथितो मुनीन्द्रैः॥

इति प्राचीनाचार्याणां वचनप्रामाण्यात् आरम्भसन्ध्यग्रतो भावप्रवृत्तिर्भवति, तत एव फलस्यापि प्रवृत्तिर्जायते। ततः क्रमेण फलस्य वृद्धिर्भवति। भावतुल्ये ग्रहे फलं रूपमितं जायते। तत्र सन्धिग्रहान्तरमपि परमं भवति, अर्थात् भावसन्ध्यन्तरतुल्यं सन्धिग्रहान्तरं जायते। ततः क्रमेण फलस्य ह्रासो जायते। तत्र विरामसन्धितुल्ये ग्रहे फलस्य नाशस्तत्र सन्धिग्रहान्तरमपि शून्यसमं भवत्यतस्तत्र सन्धिखगान्तरवशेनैव फलस्य वृद्धिह्रासौ सिद्धौ। अतो अनुपातवशेनेष्टस्थाने भावफलं जायते। तत्रानुपातो यथा—यदि भावसन्ध्यन्तरतुल्यसन्धिग्रहान्तरेण परमं फलं रूप (१) मितं लभ्यते तदेष्टसन्धिग्रहान्तरेण किमितीष्टस्थाने भावफलम्—

$$= \frac{१ \times (\text{सं०} \backsim \text{ग्र})}{\text{भा०} \backsim \text{सं०}} = \frac{\text{सं०} \backsim \text{ग्र०}}{\text{भा०} \backsim \text{सं०}}$$

अत उपपन्नं सर्वम्।

हि० टी०—दशम भाव में सप्तम भाव को घटाकर शेष का तृतीयांश लग्न में जोड़ने से द्वितीयभाव और द्विगुणिततृतीयांश लग्न में जोड़ने से तृतीय भाव होता है। इसी तृतीयांश को दो राशि में घटाकर शेष को चतुर्थभाव में जोड़ने से पञ्चमभाव और द्विगुणित शेष को चतुर्थभाव में जोड़ने से षष्ठभाव होता है। इस तरह २, ३, ५, ६ भाव सिद्ध होते हैं। इनमें ६ राशि जोड़ने से अष्टम, नवम एकादश एवं द्वादशभाव सिद्ध होते हैं। इस प्रकार तन्वादि द्वादशभाव स्पष्ट होते हैं।

समीपवर्ती दो भावों के योग का आधा पूर्व भाव की विराम सन्धि एवं अग्रिम भाव की आरम्भ सन्धि होती है।

सन्धि के तुल्य ग्रह रहने पर ग्रह का फल शून्य होता है और भाव के तुल्य ग्रह रहने पर पूर्ण फल अर्थात् १ के तुल्य फल होता है। यदि अभीष्टकाल में फल ज्ञान करना हो तो भाव से अधिक ग्रह रहने पर विराम सन्धि और ग्रहान्तर को विराम सन्धि और भाव के अन्तर से भाग देने पर जो लब्धि हो उसे (१) एक में घटाने से शेष तुल्य फल होता है। इसी प्रकार यदि भाव से अल्प ग्रह हो तो आरम्भसन्धि और ग्रह के अन्तर में आरम्भ सन्धि और ग्रह के अन्तर में आरम्भ सन्धि और भाव के अन्तर से भाग देने से जो लब्धि हो उसे १ में घटाने से शेष तुल्य फल होता है।

उदाहरण—

(द० भा०—स० भा) / ३ = (३।१६°।४१′।२६″—०।१४°।१२′।३०″) / ३

१।०°।४९′।३८″।४०‴, १।०°।४९′।३८″।४०‴ × २
= २।१°।३९′।१७″।२०‴

२ राशि—१।०।४९।३८।४० = ०।२९°।१०′।२१″।२०‴

०।२९°।१०′।२१″।२०‴ × २ = १।२८°।२०′।४२″।४०‴

द्वितीयभाव = ६।१४°।१२′।३०″ +
१।०°।४९′।३८″।४०‴ = ७।१५°।२′।८″।४०‴

तृतीयभाव = ६।१४°।१२′।३०″ +

२। १°।३९′।१७″।२०″ = ८।१५।५१।४७।२०

पञ्चमभाव= ९।१६।४१।२६ + ०।२६°।१०"।२१।२०

= १०।१५°।५१'।४७।२०

षष्ठभाव= ९।१६।४१।२६ + १।२८।२०।४२।४० = ११।१५°।२'।८"।४०

सिद्ध लग्नादि षष्ठ भावों में ६ राशि जोड़ने से क्रमशः सप्तमादिव्ययभाव सिद्ध होगें।

$$\frac{\text{लग्न + द्वितीय भाव}}{२} = \frac{६।१४।१२।३० + ७।१५।२।८।४०}{२}$$

= (१३।२९।१४।३८।४०) ÷ २ = ६।२९।३७।१९।२०= संधिः

$$\frac{\text{द्वि० भा० + तृ० भा०}}{२} = \frac{७।१५।२।८।४० + ८।१५।५१।४७।२०}{२}$$

= (१६।०।५३।५६) ÷ २ = ८।०।२६।५८ संधिः

$$\frac{\text{तृ० भा० + च० भा०}}{२} = \frac{८।१५।५१।४७।२० + ९।१६।४१।२६}{२}$$

= (१८।२।३३।१३।२०)÷२=९।१।१६।३६।४० संधिः

$$\frac{\text{च० भा० + प० भा०}}{२} = \frac{९।१६।४१।२६ + १०।१५।५१।४७।२०}{२}$$

= (२०।२।३३।१३।२०) ÷ २ = १०।१।१६।३६।४० संधिः

$$\frac{\text{प० भा० + ष० भा०}}{२} = \frac{१०।१५।५१।४७।२० + ११।१५।२।८।४०}{२}$$

=(२२।०।५३।५६) ÷ २ = ११।०।२६।५८ संधिः

$$\frac{\text{ष० भा० + स० भा०}}{२} = \frac{११।१५।२।८।४० + ०।१४।१२।३०}{२}$$

=(२३।२९।१४।३८।४०) ÷ २ = ११।२९।३७।१९।२० संधिः

इस प्रकार लग्न से षष्ठ भाव की विराम संधि पर्यन्त भाव की सन्धियां सिद्ध हुई। लग्नादि षष्ठभाव पर्यन्त संधियों में क्रमशः ६ राशि जोड़ने से सप्तमादि भावों की संधियाँ होगीं। अथवा समीपस्थ भावों के योगार्द्ध तुल्य सन्धिमान सिद्ध हो हैं।

स्पष्टार्थं सिद्धससन्धयो द्वादशभावाः

तनु	धन	सहज	सुख	सुत	रिपु	जाया	आयु	धर्म	कर्म	आय	व्यय	भाव
६	७	८	९	१०	११	०	१	२	३	४	५	रा०
१४	१५	१५	१६	१५	१५	१४	१५	१५	१६	१५	१५	अं०
१२	२	५१	४१	५१	२	१२	२	५१	४१	५१	२	क०
३०	८	४७	२६	४७	८	३०	८	४७	२६	४७	८	वि०
०	४०	२०	०	२०	४०	०	४०	२०	०	२०	४०	प्र०
सं०	सं.	सं०	सं०	सं०	सं०	सं०	सं०	सं०	सं०	सं०	सं०	सन्धयः
५	८	९	१०	११	११	०	२	३	४	५	५	रा०
२९	०	१	१	०	२९	२९	०	१	१	०	२९	अं०
३७	२६	१६	१६	२६	३७	३७	२६	१६	१६	२६	३७	क०
१९	५८	३६	३६	५८	१९	१९	५८	३६	३६	५८	१९	वि०
२०	०	४०	४०	०	२०	२०	०	४०	४०	०	२०	प्र०

अथ ग्रहाणां दृष्टिसाधनम्—

खैकाग्निद्विखवेदरामयमभूखाभ्राभ्रमेकादिभे
द्रष्ट्रा वर्जितदृश्यकस्य गुरुणा चेदष्टवेदे कृताः।
मन्देनाङ्कयमेऽसृजा नगगुणेऽङ्काभादिजाः संस्कृता
भागघ्नक्षयवृद्धिखानललवेनाब्ध्युद्धृता दृग् भवेत् ॥

अन्वयः—द्रष्ट्रा वर्जितदृश्यकस्य एकादिभे 'शेषे' खैगाग्निद्विखवेदरामयमभूखाभ्राभ्रं भादिजाः अङ्काः भवन्ति। गुरुणा वर्जितदृश्यकस्याष्टवेदे कृताः दृष्टिध्रुवाङ्काः, मन्देन वर्जितदृश्यकस्याङ्कयमे च शेषे कृता दृष्टिध्रुवाङ्का भवन्ति। ते भादिजा अंका भागघ्नक्षयवृद्धिखानललवेन संस्कृताः अब्ध्युद्धृता च दृग् भवेत्।

व्याख्या—यः पश्यति स द्रष्टा। यो दर्शनार्हः स दृश्यः, दृश्य एव दृश्यकः। द्रष्ट्रा वर्जितदृश्यकस्य=द्रष्ट्रोनितस्य दृश्यस्य एकादिभे शेषे सति क्रमेण खैकाग्निद्विखवेदरामयमभूखाभ्राभ्रं (०, १, ३, २, ०, ४, ३, २, १, ०, ०, ०) भादिजा राशिसम्बन्धिनो अंका दृष्टिध्रुवांका भवन्ति।

यदि चेत् गुरुशनिकुजग्रहाः द्रष्टा तदा विशेषमाह—चेद् गुरुर्द्रष्टा तदा गुरुणा वर्जितस्य दृश्यकस्य अष्टवेदे अष्टमे चतुर्थे च कृताः चत्वारो दृष्टिध्रुवांका ग्राह्या भवन्ति। यदि चेत् शनिर्द्रष्टा तदा मन्देन शनैश्चरेण वर्जितस्य दृश्यकस्यांकयमे (९, २) नवभे द्विभे च शेषे कृताः चत्वारो दृष्टिध्रुवांका भवन्ति। तथा च यदि भौमो द्रष्टा तदा असृजा भौमेन वर्जितस्य नगगुणे (७, ३) सप्तभे त्रिभे च शेषे कृताः = चत्वार एव दृष्टिध्रुवांका भवन्ति। अन्यांकभे शेषे तु यथाक्रमं पूर्वोक्ता एव दृष्टिध्रुवांका भवन्ति। ते भादिजाः = राशिजोऽङ्काः भागघ्नक्षयवृद्धिखानललवेन संस्कृताः अर्थात् यो हि भादिजोऽङ्कस्तस्माद्यद्यग्रिमाङ्कोऽल्पस्तदा तयोरन्तरं क्षयः, यदि चेदग्रिमांकोऽधिकस्तदा तदन्तरं वृद्धिर्भवति। अतः शेषस्यांशादिगुणितक्षयवृद्धित्रिंशांशेन क्रमादूनयुताः ते चाब्ध्युद्धृताः = चतुर्भक्तास्तदा दृग् भवेदिति।

उप०—"पश्यन्ति सप्तमं सर्वे शनिजीवकुजाः पुनः।
विशेषतश्च त्रिदशत्रिकोणचतुरष्टमान्" ॥ इति नियमात्

ग्रहाणां दृष्टिनिर्णयं भवति। तत्र द्रष्टृदृश्यग्रहयोरन्तरमेको राशिस्तदा द्रष्टुर्ग्रहात् दृश्यो द्वितीये राशौ भवति। तत्र दृष्टिः शून्यसमम्। एवमेव यदि द्रष्टृदृश्यग्रहयोन्तरं द्वौ राशी तदा द्रष्टृग्रहात् दृश्यग्रहस्तृतीये भवति। तत्रैकचरणो दृष्टिः। यदि तयोरन्तरं राशित्रयं जायते तदा दृश्यस्य चतुर्थस्थानस्थितत्वात् त्रिचरणात्मिका दृष्टिः। एवमेव सर्वे दृष्टिध्रुवांकाः उपपद्यन्ते। अनया रीत्या उपरोक्तवचनानुरोधेन गुरोश्चतुरष्टराश्यन्तरे, शनेर्द्विनवराश्यन्तरे कुजस्य त्रिसप्तराश्यन्तरे पूर्णदृष्टिश्चतुश्चरणात्मिका भवति। तत्र तेषां चत्वारो राशिजाङ्को ग्राह्यो भवतीति।

सिद्धदृष्टिचरणचक्रम्

शेषराशिः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
दृष्टिपादाङ्काः	०	१	३	२	०	४	३	२	१	०	०	०

दृष्टिसाधनोपपत्तिः—

दृश्यग्रहो द्रष्टुः स्थानात् कियदन्तरेणाग्रतो वर्तत इति ज्ञानार्थमेव द्रष्टावर्जितो दृश्यः कार्यः। तत्र शेषराशिसंख्याधःस्थोऽङ्को ग्राह्यो भवति। पुनः शेषांशादिभिश्चानुपातेन शेषसम्बन्धिफलमुपलभ्यते। तत्र यदि त्रिंशदंशैः गतैष्यान्तरतुल्यक्षयो वृद्धिर्वा लभ्यते तदा शेषांशैः किमिति शेषसम्बन्धिफलम् $= \frac{(\text{ग०} - \text{ए०}) \times \text{शेष}}{३०}$ अनेन फलेन गताङ्कः क्षयात्मकेन हीनः, वृद्ध्यात्मकेन च युक्तः कार्यस्तदा चरणात्मिका इष्टदृष्टिः सिध्यति। सा च चतुर्भक्ता रूपादिका भवतीति सर्वमुपपद्यते।

हि० टी०—देखने वाला ग्रह द्रष्टा एवं जिस भाव या ग्रह को देखे उसे दृश्य कहते हैं। अतः जिस ग्रह की दृष्टि साधन अभीष्ट हो वह द्रष्टा और जिस पर दृष्टि विचार अभीष्ट हो वह दृश्य है। द्रष्टा ग्रह को दृश्य में घटाकर राशि स्थान में एकादि शेष वश क्रमशः ०, १, ३, २, ०, ४, ३, २, १, ०, ०, ० राशि के अंक होते हैं। राशिज अंक और अग्रिमराशि के अंक दोनों अंकों के अन्तर को शेष से गुणा कर गुणनफल में ३० का भाग देकर लब्धि को राशिज

अंक में संस्कार (राशिज अङ्क से अग्रिमाङ्क अल्प हो तो क्षय और अधिक हो तो धन) करने से अभीष्ट राश्यादि सम्बन्धी अङ्क होता है। इसमें चार का भाग देने से लब्धि रूपादिक दृष्टि होती है।

यदि गुरु द्रष्टा हो तो दृश्य में द्रष्टा का अन्तर करने पर राशि स्थान में ४ और ८ शेष रहने पर दृष्टिचरण ४ होता है। अर्थात् भादिज अंक ४ होगा। इसी प्रकार शनि द्रष्टा हो तो दृश्य और द्रष्टा का अन्तर २, ९ राशि रहने पर दृष्टि चरण ४ तथा मंगल द्रष्टा हो तो दृश्य और द्रष्टा का अन्तर ७, ३ राशि रहने पर दृष्टि चरण ४ होते हैं।

उदा०—

द्रष्टा रवि = ५।१४।४३।२५, दृश्य चन्द्र = १।२१।५५।३६

१।२१।५५।३६ = दृश्यचन्द्र

५।१४।४३।२५ = द्रष्टारवि

८। ७।१२।११ = दृश्य—द्रष्टा

यहाँ राशि = ८, भादिजोऽङ्क = २।

वर्तमान एवं अग्रिम अङ्क का अन्तर ऋण = १

पुनः अनुपात वश

$$\frac{१ \times ७।१२।११}{३०} = ०।१४।२४$$

$$\text{भादिज अङ्क} \quad \frac{२ - ०।१४।२४}{४} = \frac{१।४५।३६}{४}$$

चद्रमा पर रवि की दृष्टि = ०।२६।२४।

द्रष्टा रवि, दृश्य मंगल—

७।११।१४।२४ — ५।१४।४३।२५ = १।२६।३०।५९

राशि = १, भादिज अङ्क = ०, गतगम्यान्तर + १

$$\frac{१ \times २६।३०।५९}{३०} = ०।५३।२$$

$$\frac{० + ०।५३। २}{४} = \frac{०।५३। २}{४} = ०।१३।१५$$

मंगल के ऊपर सूर्य की दृष्टि = ०।१३।१५

द्रष्टा रवि, दृश्य बुध—

४।२६।२२।१२ – ५।१४।४३।२५ = ११।१४।३८।४७

राशि = ११ , भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

$$\frac{० \times १४।३८।४७}{३०} = ०।०।०$$

$$\frac{० + ०।०।०}{४} = \frac{०।०।०}{४} = ०।०।०$$

बुध के ऊपर रवि की दृष्टि = ०

द्रष्टा रवि, दृश्य गुरु—

१०।१०।३८।३८ – ५।१४।४३।२५ = ४।२५।५५।१३

राशि = ४, भादिज = अङ्क २, अन्तर = – २

$$\frac{२ \times २५।५५।१३}{३०} = १।४३।४१$$

$$\frac{२ – १।४३।४१}{४} = \frac{०।१६।१९}{४} = ०।४।५$$

गुरु के ऊपर रवि की दृष्टि = ०।४।५

द्रष्टा रवि, दृश्य शुक्र—

५।७।१७।४ – ५।१४।४३।२५ = ११।२२।३३।३९

राशि = ११, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

भादिज अङ्क शून्य एवं अन्तर शून्य होने से अग्रिम क्रिया में लब्धि शून्य ही होगी। अतः शुक्र पर रवि की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा रवि, दृश्य शनि—

४।२८।१४।२ – ५।१४।४३।२५ = ११।१३।३०।३७

राशि = ११, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर लब्धि शून्य होने से शनि पर रवि की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य रवि—

५।१४।४३।२५ − १।२१।५५।३६ = ३।२२।४७।४९

राशि = ३, भादिज अङ्क = ३, अन्तर = − १

$$\frac{\text{१} \times \text{२२।४७।४९}}{\text{३०}} = \text{०।४५।३६}$$

$$\frac{\text{३} - \text{०।४५।३६}}{\text{४}} = \frac{\text{२।१४।२४}}{\text{४}} = \text{०।३३।३६}$$

सूर्य के ऊपर चन्द्र की दृष्टि = ०।३३।३६

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य मंगल—

७।११।१४।२४ − १।२१।५५।३६ = ५।१९।१८।४८

राशि = ५, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = + ४

$$\frac{\text{४} \times \text{१९।१८।४८}}{\text{३०}} = \text{२।३४।३०}$$

$$\frac{\text{०} + \text{२।३४।३०}}{\text{४}} = \frac{\text{२।३४।३०}}{\text{४}} = \text{०।३८।३७}$$

मंगल के ऊपर चन्द्र की दृष्टि = ०।३८।३७

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य बुध—

४।२९।२२।१२ − १।२१।५५।३६ = ३।७।२६।३६

राशि = ३, भादिज अङ्क = ३, अन्तर = − १

$$\frac{\text{१} \times \text{७।२६।३६}}{\text{३०}} = \text{०।१४।५३}$$

$$\frac{\text{३} - \text{०।१४।५३}}{\text{४}} = \frac{\text{२।४५।७}}{\text{४}} = \text{०।४१।१७}$$

बुध के ऊपर चन्द्र की दृष्टि = ०।४१।१७

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य गुरु—

१०।१०।३८।३८ − १।२१।५५।३६ = ८।१८।४३।२

राशि = ८, भादिज अङ्क = २, अन्तर = − १

$$\frac{१ \times १८।४३।२}{३०} = ०।३७।२६$$

$$\frac{२ - ०।३७।२६}{४} = \frac{१।२२।३४}{४} = ०।२०।३८$$

गुरु के ऊपर चन्द्र की दृष्टि = ०।२०।३८

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य शुक्र—

५।७।२७।४ − १।२१।५५।३६ = ३।१५।२१।२८

राशि = ३, भादिज अङ्क = ३, अन्तर = −१

$$\frac{१ \times १५।२१।२८}{३०} = ०।३०।४३$$

$$\frac{३ - ०।३०।४३}{४} = \frac{२।२९।१७}{४} = ०।३७।१९$$

शुक्र के ऊपर चन्द्र की दृष्टि = ०।३७।१९

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य शनि—

४।२८।१४।२ − १।२१।५५।३६ = ३।६।१८।२६

राशि = ३, भादिज अङ्क = ३, अन्तर = −१

$$\frac{१ \times ६।१८।२६}{३०} = ०।१२।३७$$

$$\frac{३ - ०।१२।३७}{४} = \frac{२।४७।२३}{४} = ०।४१।५१$$

शनि के ऊपर चन्द्र की दृष्टि = ०।४१।५१

द्रष्टा मंगल, दृश्य रवि—

५।१४।४३।२५ − ७।११।१४।२४ = १०।३।२९।१

राशि = १०, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर लब्धि फल शून्य होगा। अतः रवि पर मंगल की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा मंगल, दृश्य चन्द्र—

१।२१।५५।३६ − ७।११।१४।२४ = ६।१०।४१।१२

राशि = ६, भादिज अङ्क = ४, अन्तर = ०

$$\frac{0 \times 10|41|12}{30} = 0|0|0$$

$$\frac{4 \pm 0|0|0}{4} = \frac{4}{4} = 1$$

चन्द्र के ऊपर मंगल की दृष्टि = १

द्रष्टा मंगल, दृश्य बुध—

४|२६|२२|१२ − ७|११|१४|२४ = ६|१८|७|४८

राशि = ६, भादिज अङ्क = १, अन्तर = − १

$$\frac{1 \times 18|7|48}{30} = 0|36|16$$

$$\frac{1 - 0|36|16}{4} = \frac{0|23|44}{4} = 0|5|56$$

अतः बुध के ऊपर मंगल की दृष्टि = ०|५|५६

द्रष्टा मंगल, दृश्य गुरु—

१०|१०|३८|३८ − ७|११|१४|२४ = २|२८|२४|१४

राशि = २, भादिज अङ्क = १, अन्तर = + ३

(तीन एवं सात राशि शेष पर मंगल की दृष्टि ४ चरण होती है। अतः अन्तर + ३ होगा)

$$\frac{3 \times 28|24|14}{30} = 2|56|25$$

$$\frac{1 + 2|56|25}{4} = \frac{3|56|25}{4} = 0|59|6$$

गुरु के ऊपर मंगल की दृष्टि = ०|५९|६

द्रष्टा मंगल, दृश्य शुक्र—

५|७|१७|४ − ७|११|१४|२४ = ६|२६|२|४०

राशि = ६, भादिज अङ्क = १, अन्तर = − १

$$\frac{1 \times 26|2|40}{30} = 0|52|5$$

$$\frac{1 - 0|52|5}{4} = \frac{0|7|55}{4} = 0|1|59$$

शुक्र के ऊपर मंगल की दृष्टि = ०|१|५९

द्रष्टा मंगल, दृश्य शनि—

४।२८।१४।२ − ७।११।१४।२४ = ६।१६।५६।३८

राशि = ६, भादिज अङ्क = १, अन्तर = −१

$$\frac{१ \times १६।५६।३८}{३०} = ०।३३।५६$$

$$\frac{१ - ०।३३।५६}{४} = \frac{०।२६।१}{४} = ०।६।३०$$

शनि के ऊपर मंगल की दृष्टि = ०।६।३०

द्रष्टा बुध, दृश्य रवि—

५।१४।४३।२५ − ४।२६।२२।१२ = ०।१५।२१।१३

राशि = ० = १२, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः रवि के ऊपर बुध की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा बुध, दृश्य चन्द्र —

१।२२।५५।३६ − ४।२६।२२।१२ = ८।२२।३३।२४

राशि = ८, भादिज अङ्क = २, अन्तर = −१

$$\frac{१ \times २२।३३।२४}{३०} = ०।४५।७$$

$$\frac{२ - ०।४५।७}{४} = \frac{१।१४।५३}{४} = ०।१८।४३$$

चन्द्र के ऊपर बुध की दृष्टि = ०।१८।४३

द्रष्टा बुध, दृश्य मंगल—

७।११।१४।२४ − ४।२६।२२।१२ = २।११।५२।१२

राशि = २, भादिज अङ्क = १, अन्तर = +२

$$\frac{२ \times ११।५२।१२}{३०} = ०।४७।२६$$

$$\frac{१ + ०।४७।२६}{४} = \frac{१।४७।२६}{४} = ०।२६।५२$$

मंगल के ऊपर बुध की दृष्टि = ०।२६।५२

द्रष्टा बुध, दृश्य गुरु—

१०।१०।३८।३८ – ४।२६।२२।१२ = ५।११।१६।२६

राशि = ५, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = +४

$$\frac{४ \times ११।१६।२६}{३०} = १।३०।११$$

$$\frac{० + १।३०।११}{४} = \frac{१।३०।११}{४} = ०।२२।३३$$

गुरु के ऊपर बुध की दृष्टि = ०।२२।३३

द्रष्टा बुध, दृश्य शुक्र—

५।७।१७।४ – ४।२६।२२।१२ = ०।७।५४।५२

राशि = ० भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः शुक्र के ऊपर बुध की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा बुध, दृश्य शनि—

४।२८।१४।२ – ४।२६।२२।१२ = ११।२८।५१।५०

राशि = ११, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः शनि के ऊपर बुध की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा गुरु, दृश्य रवि—

५।१४।४३।२५ – १०।१०।३८।३८ = ७।४।४।४७

राशि = ७, भादिज अङ्क = ३, अन्तर = +१

(गुरु द्रष्टा हो तो ८,४ शेष पर दृष्टि ४ चरण होती है। अतः अन्तर = +१ होगा)।

$$\frac{१ \times ४।४।४७}{३०} = ०।८।१०$$

$$\frac{३ + ०।८।१०}{४} = \frac{३।८।१०}{४} = ०।४७।२$$

रवि के ऊपर गुरु की दृष्टि = ०।४७।२

द्रष्टा गुरु, दृश्य चन्द्र—

१।२१।५५।३६ − १०।१०।३८।३८ = ३।११।१६।५८

राशि = ३, भादिज अङ्क = ३, अन्तर = + १

$$\frac{१ \times ११।१६।५८}{३०} = ०।२२।३४$$

$$\frac{३ + ०।२२।३४}{४} = \frac{३।२२।३४}{४} = ०।५०।३८$$

अतः चन्द्र के ऊपर गुरु की दृष्टि = ०।५०।३८

द्रष्टा गुरु, दृश्य मंगल—

७।११।१४।२४ − १०।१०।३८।३८ = ६।०।३५।४६

राशि = ६, भादिज अङ्क = १, अन्तर = − १

$$\frac{१ \times ०।३५।४६}{३०} = ०।१।१२$$

$$\frac{१ - ०।१।१२}{४} = \frac{०।५८।४८}{४} = ०।१४।४२$$

मंगल के ऊपर गुरु की दृष्टि = ०।१४।४२

द्रष्टा गुरु, दृश्य बुध—

४।२६।२२।१२ − १०।१०.३८।३८ = ६।१८।४३।३४

राशि = ६, भादिज अङ्क = ४, अन्तर = − १

$$\frac{१ \times १८.४३।३४}{३०} = ०।३७।२७$$

$$\frac{४ - ०।३७।२७}{४} = \frac{३:२२।३३}{४} = ०।५०।३८$$

बुध के ऊपर गुरु की दृष्टि = ०।५०।३८

द्रष्टा गुरु, दृश्य शुक्र—

५।७।१७।४ − १०।१०।३८।३८ = ६।२६।३८।२६

राशि = ६, भादिज अङ्क = ४, अन्तर = − १

$$\frac{१ \times २६।३८।२६}{३०} = ०।५३।१७$$

$$\frac{४ - ०।५३।१७}{४} = \frac{३।६।४३}{४} = ०।४६।४१$$

शुक्र के ऊपर गुरु की दृष्टि = ०।४६।४१

द्रष्टा गुरु, दृश्य शनि—

४।२८।१४।२ – १०।१०।३८।३८ = ६।१७।३५।२४

राशि = ६, भादिज अङ्क = ४, अन्तर = – १

$$\frac{१ \times १७।३५।२४}{३०} = ०।३५।११$$

$$\frac{४ - ०।३५।११}{४} = \frac{३।२४।४९}{४} = ०।५१।१२$$

शनि के ऊपर गुरु की दृष्टि = ०।५१।१२

द्रष्टा शुक्र, दृश्य रवि—

५।१४।४३।२५ – ५।७।१७।४ = ०।७।२६।२१

राशि = ०, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः रवि के ऊपर शुक्र की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा शुक्र, दृश्य चन्द्र—

१।२१।५५।३६ – ५।७।१७।४ = ८।१४।३८।३२

राशि = ८, भादिज अङ्क = २, अन्तर = – १

$$\frac{१ \times १४।३८।३२}{३०} = ०।२९।१७$$

$$\frac{२ - ०।२९।१७}{४} = \frac{१।३०।४३}{४} + ०।२२।४१$$

चन्द्र के ऊपर शुक्र की दृष्टि = ०।२२।४१

द्रष्टा शुक्र, दृश्य मंगल—

७।११।१४।२४ – ५।७।१७।४ = २।३।५७।२०

राशि = २, भादिज अङ्क = १, अन्तर = + १

$$\frac{२ \times ३।५७।२०}{३०} = ०।११।४६$$

$$\frac{१ + ०।११।४९}{४} = \frac{१।११।४६}{४} = ०।१८।५७$$

मंगल के ऊपर शुक्र की दृष्टि = ०।१८।५७

द्रष्टा शुक्र, दृश्य बुध—

४।२६।२२।१२ – ५।७।१७।४ = ११।२२।५।८

राशि = ११, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः बुध पर शुक्र की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा शुक्र, दृश्य गुरु—

१०।१०।३८।३८ – ५।७।१७।४ = ५।३।२१।३४

राशि = ५, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = +४

$$\frac{४ \times ३।२१।३४}{३०} = ०।२६।५३$$

$$\frac{० + ०।२६।५३}{४} = \frac{०।२६।५३}{४} = ०।६।४३$$

गुरु के ऊपर शुक्र की दृष्टि = ०।६।४३

द्रष्टा शुक्र, दृश्य शनि—

४।२८।१४।२ – ५।७।१७।४ = ११।२०।५६।५८

राशि = ११, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः शनि के ऊपर शुक्र की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा शनि, दृश्य रवि—

५।१४।४३।२५ – ४।२८।१४।२ = ०।१६।२६।२३

राशि = ०, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होने से रवि के ऊपर शनि की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा शनि, दृश्य चन्द्र—

१।२१।५५।३६ – ४।२८।१४।२=८।२३।४१।३४

राशि = ८, भादिज अङ्क = २, अन्तर= +२

शनि द्रष्टा हो तो (२, ६) राशि अन्तर शेष में दृष्टि ४ चरण होती है। अतः अन्तर= +२ होगा।

$$\frac{२ \times २३।४१।३४}{३०} = १।३४।४६$$

$$\frac{२ + १।३४।४६}{४} = \frac{३।३४।४६}{४} = ०।५३।४२$$

चन्द्र के ऊपर शनि की दृष्टि = ०।५३।४२

द्रष्टा शनि, दृश्य मंगल—

७।११।१४।२४ – ४।२८।१४।२ = २।१३।०।२२

राशि=२, भादिज अङ्क = ४, अन्तर = –१

$$\frac{१ \times १३ ०।२२}{३०} = ०।२६।१$$

$$\frac{४ - ०।२६।१}{४} = \frac{३।३३।५९}{४} = ०।५३।३०$$

मंगल के ऊपर शनि की दृष्टि = ०।५३।३०

द्रष्टा शनि, दृश्य बुध—

४।२६।२२।१२ – ४।२८।१४।२ = ०।१।८।१०

राशि = ०, भादिज अंक = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः बुध पर शनि की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा शनि दृश्य गुरु—

१०।१०।३८।३८ – ४।२८।१४।२ = ५।१२।२४।३६

राशि = ५, भादिज अंक = ०, अन्तर= + ४

$$\frac{४ \times १२।२४।३६}{३०} = १।३९।१७$$

$$\frac{० + १।३९।१७}{३०} = \frac{१।३९।१७}{४} = ०।२४।४९$$

गुरु के ऊपर शनि की दृष्टि=०।२४।४९

द्रष्टा शनि, दृश्य शुक्र—

५।७।१७।४ − ४।२८।१४।२ = ०।६।३।२

राशि = ०, भादिज अंक = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः शुक्र पर शनि दृष्टि शून्य होगी।

अथ ग्रहोपरिग्रहदृष्टि चक्रम्

दृश्यग्रह (columns) / द्रष्टाग्रह (rows)

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
सू.	०।०।०	०।२६।२४	०।१३।१५	०।०।०	०।४।५	०।०।०	०।०।०
चं.	०।३३।३६	०।०।०	०।३८।३७	०।४१।१७	०।२०।३८	०।३७।१९	०।४१।५२
मं.	०।०।०	१।०।०	०।०।०	०।५।५६	०।५९।६	०।१।५९	०।६।३०
बु.	०।०।०	०।१८।४३	०।२६।५२	०।०।०	०।२२।३३	०।०।०	०।०।०
बृ.	०।४७।२	०।५०।३८	०।१४।४२	०।५०।३८	०।०।०	०।४६।४१	०।५१।२
शु.	०।०।०	०।२२।४१	०।१८।५७	०।०।०	०।६।४३	०।०।०	०।०।०
श.	०।०।०	०।५३।४२	०।५३।३०	०।०।०	०।२४।४९	०।०।०	०।०।०

भाव के उपर ग्रहों की दृष्टि साधन—

द्रष्टा रवि, दृश्य तनुभाव—

६।१४।१२।३० – ५।१४।४३।२५ = ०।२६।२६।५

राशि = ०, भादिज अंक = ०, अन्तर = ०

$$\frac{० \times २६।२६।५}{३०} = ०।०।० = ०।०।०$$

$$\frac{०।०।०}{४} = \frac{०।०।०}{४} = ०।०।०$$

अतः लग्न के ऊपर रवि की दृष्टि = ०।०।०

द्रष्टा रवि, दृश्य धनभाव—

७।१५।२।८।४० – ५।१४।४३।२५ = २।०।१८।४३।४०

राशि = २, भादिज अंक = १, अन्तर = + २

$$\frac{२ \times ०।१८।४३।४०}{३०} = ०।१।१५$$

$$\frac{१ + ०।१।१५}{४} = \frac{१।१।१५}{४} = ०।१५।१६$$

अतः धन भाव के ऊपर रवि की दृष्टि = ०।१५।१६

द्रष्टा रवि, दृश्य सहजभाव—

८।१५।५१।४७।२० – ५।१४।४३।२५ = ३।१।८।२२।२०

राशि = ३, भादिज अंक = ३, अन्तर = – १

$$\frac{१ \times १।८।२२।२०}{३०} = ०।२।१७$$

$$\frac{३ - ०।२।१७}{४} = \frac{२।५७।४३}{४} = ०।४४।२६$$

अतः सहज भाव के ऊपर रवि की दृष्टि = ०।४४।२६

द्रष्टा रवि, दृश्य सुखभाव—

९।१६।४१।२६ – ५।१४।४३।२५ = ४।२।५८।१

राशि = ४, भादिज अंक = २, अन्तर = – २

$$\frac{२\times१।५८।१}{३०} = ०।७।५२$$

$$\frac{२ - ०।७।५२}{४} = \frac{१।५२।८}{४} = ०।२८।२$$

अतः सुख भाव पर रवि की दृष्टि = ०।२८।२

द्रष्टा रवि, दृश्य सुतभाव—

१०।१५।५१।४७।२० – ५।१४।४३।२५ = ५।१।८।२२।२०

राशि = ५, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = +४

$$\frac{४\times१।८।२२।२०}{३०} = ०।९।७$$

$$\frac{०+०।९।७}{४} = \frac{०।९।७}{४} = ०।२।१७$$

सुतभाव के ऊपर रवि की दृष्टि = ०।२।१७

द्रष्टा रवि, दृश्य रिपुभाव—

११।१५।२।८।४० – ५।१४।४३।२५ = ६।०।१८।४३।४०

राशि = ६, भादिज अंक = ४, अन्तर = – १

$$\frac{१\times०।१८।४३।४०}{३०} = ०।०।३७$$

$$\frac{४ - ०।०।३७}{४} = \frac{३।५९।२३}{४} = ०।५९।५१$$

रिपु भाव पर रवि की दृष्टि = ०।५९।५१

द्रष्टा रवि, दृश्य जायाभाव—

०।१४।१२।३० – ५।१४।४३।२५ = ६।२९।२९।५

राशि = ६, भादिज अंक = ४, अन्तर = – १

$$\frac{१\times२९।२९।५}{३०} = ०।५८।५८$$

$$\frac{४ - ०।५८।५८}{४} = \frac{३।१।२}{४} = ०।४५।१५$$

जाया भाव के ऊपर रवि की दृष्टि = ०।४५।१५

द्रष्टा रवि, दृश्य आयुभाव—

१।१५।२।८।४० — ५।१४।४३।२५ = ८।०।१८।४३।४०

राशि = ८, भादिज अंक = २, अन्तर = — १

$$\frac{१ \times ०।१८।४३।४०}{३०} = ०।०।३७$$

$$\frac{२ - ०।०।३७}{४} = \frac{१।५९।२३}{४} = ०।२९।५१$$

आयु भाव पर रवि की दृष्टि = ०।२९।५१

द्रष्ट रवि, दृश्य धर्मभाव—

२।१५।५१।४७।२० — ५।१४।४३।२५ = ९।१।८।२२।२०

राशि = ९, भादिज अंक = १, अन्तर = — १

$$\frac{१ \times १।८।२२।२०}{३०} = ०।२।१७$$

$$\frac{१ - ०।२।१७}{४} = \frac{०।५७।४३}{४} = ०।१४।२६$$

धर्म भाव पर रवि की दृष्टि = ०।१४।२६

द्रष्ट रवि, दृश्य कर्मभाव—

३।१६।४१।२६ — ५।१४।४३।२५ = १०।१।५८।१

राशि = १०, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः कर्मभाव पर रवि की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा रवि, दृश्य आयभाव—

४।१५।५१।४७।२० — ५।१४।४३।२५ = ११।१।८।२२।२०

राशि = ११, भादिज अंक = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः आय भाव पर रवि की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा रवि, दृश्य व्यय भाव—

५।१५।२।८।४० — ५।१४।४३।२५ = ०।०।१८।४३।४०

राशि = ०, भादिज अंक = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः व्यय भाव पर रवि की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य तनुभाव—

६।१४।१२।३० – १।२१।५५।३६ = ४।२२।१६।५४

राशि = ४, भादिज अंक = २, अन्तर = – २

$$\frac{२ \times २२।१६।५४}{३०} = १।२९।८$$

$$\frac{२ - १।२९।८}{४} = \frac{०।३०।५२}{४} = ०।७।४३$$

अतः तनुभाव पर चन्द्र की दृष्टि = ०।७।४३

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य धनभाव—

७।१५।२।८।४० – १।२१।५५।३६ = ५।२३।६।३२।४०

राशि = ५, भादिज अंक = ०, अन्तर = + ४

$$\frac{४ \times २३।६।३२।४०}{३०} = ३।४।५२$$

$$\frac{० + ३।४।५२}{४} = \frac{३।४।५२}{४} = ०।४६।१३$$

अतः धनभाव पर चन्द्र की दृष्टि = ०।४६।१३

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य सहजभाव—

८।१५।५१।४७।२० – १।२१।५५।३६ = ६।२३।५६।११।२०

राशि = ६, भादिज अंक = ४, अन्तर = – १

$$\frac{१ \times २३।५६।११।२०}{३०} = ०।४७।५२$$

$$\frac{४ - ०।४७।५२}{४} = \frac{३।१२।८}{४} = ०।४८।२$$

अतः सहजभाव पर चन्द्र की दृष्टि = ०।४८।२

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य सुखभाव—

६।१६।४१।२६ – १।२१।५५।३६ = ७।२४।४५।५०

राशि = ७, भादिज अंक = ३, अन्तर = – १

$$\frac{१ \times २४।४५।५०}{३०} = ०।४९।३२$$

$$\frac{३ - ०।४९।३२}{४} = \frac{२।१०।२८}{४} = ०।३२।३७$$

अतः सुखभाव चन्द्र की दृष्टि=०।३२।३७

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य सुतभाव—

१०।१५।५१।४७।२० – १।२१।५५।३६=८।२३।५६।११।२०

राशि=८, भादिज अंक=२, अन्तर=– १

$$\frac{१ \times २३।५६।११।२०}{३०} = ०।४७।५२$$

$$\frac{२ - ०।४७।५२}{४} = \frac{१।१२।८}{४} = ०।१८।२$$

अतः सुतभाव पर चन्द्र की दृष्टि=०।१८।२

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य रिपुभाव—

११।१५।२।८।४० – १।२१।५५।३६=९।२३।६।३२।४०

राशि=९, भादिज अंक=१, अन्तर=– १

$$\frac{१ \times २३।६।३२।४०}{३०} = ०।४६।१३$$

$$\frac{१ - ०।४६।१३}{४} = \frac{०।१३।४७}{४} = ०।३।२७$$

अतः रिपुभाव पर चन्द्र की दृष्टि=०।३।२७

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य जायाभाव—

०।१४।१२।३० – १।२१।५५।३६=१०।२२।१६।५४

राशि=१०, भादिज अंक=०, अन्तर=०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः जायाभाव पर चन्द्र की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य आयुभाव—

१।१५।२।८।४० – १।२१।५५।३६=११।२३।६।३२।४०

राशि=११, भादिज अंक=०, अन्तर=०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः आयुभाव पर चन्द्र की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य धर्मभाव—

२।१५।५१।४७।२० − १।२१।५५।३६ = ०।२३।५६।११।२०

राशि = ०, भादिज अंक = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः धर्मभाव पर चन्द्र की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य कर्मभाव—

३।१६।४१।२६ − १।२१।५५ ३६ = १।२४।४५।५०

राशि = १, भादिज अंक = ०, अन्तर = +१

$$\frac{\text{१} \times \text{२४।४५।५०}}{\text{३०}} = \text{०।४९।३२}$$

$$\frac{\text{०} + \text{०।४९।३२}}{\text{४}} = \frac{\text{०।४९।३२}}{\text{४}} = \text{०।१२।२३}$$

अतः कर्मभाव पर चन्द्र की दृष्टि = ०।१२।२३

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य आयभाव—

४।१५।५१।४७।२० − १।२१।५५।३६ = २।२३।५६।११।२०

राशि = २, भादिज अंक = १, अन्तर = +२

$$\frac{\text{२} \times \text{२३।५६।११।२०}}{\text{३०}} = \text{१।३५।४५}$$

$$\frac{\text{१} + \text{१।३५।४५}}{\text{४}} = \frac{\text{२।३५।४५}}{\text{४}} = \text{०।३८।५६}$$

अतः आयभाव पर चन्द्र की दृष्टि = ०।३८।५६

द्रष्टा चन्द्र, दृश्य व्ययभाव—

५।१५।२८।४० − १।२१।५५।३६ = ३।२३।६।३२।४०

राशि = ३, भादिज अंक = ३, अन्तर = −१

$$\frac{\text{१} \times \text{२३।६।३२।४०}}{\text{३०}} = \text{०।४६।१३}$$

$$\frac{\text{३} - \text{०।४६।१३}}{\text{४}} = \frac{\text{२।१३।४७}}{\text{४}} = \text{०।३३।२७}$$

अतः व्यय भाव पर चन्द्र की दृष्टि = ०।३३।२७

द्रष्टा मङ्गल, दृश्य तनुभाव—

६।१४।१२।३० – ७।११।१४।२४ = ११।२।५८।६
राशि = ११, भादिज अंक = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः तनुभाव पर मंगल की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा मङ्गल, दृश्य धनभाव—

७।१५।२।८।४० – ७।११।१४।२४ = ०।३।४७।४४।४०
राशि = ०, भादिज अंक = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः धनभाव पर मङ्गल की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा मङ्गल, दृश्य सहजभाव—

८।१५।५१।४७।२० – ७।११।१४।२४ = १।४।३७।२३।२०
राशि = १, भादिज अंक = ०, अन्तर = + १

$$\frac{१ \times ४।३७।२३।२०}{३०} = ०।६।१५$$

$$\frac{० + ०।६।१५}{४} = \frac{०।६।१५}{४} = ०।२।१६$$

अतः सहजभाव पर मङ्गल की दृष्टि = ०।२।१६

द्रष्टा मङ्गल, दृश्य सुखभाव—

६।१६।४१।२६ – ७।११।१४।२४ = २।५।२७।२
राशि = २, भादिज अंक = १, अन्तर = + ३

$$\frac{३ \times ५।२७।२}{३०} = ०।३२।४२$$

$$\frac{१ + ०।३२।४२}{४} = \frac{१।३२।४२}{४} = ०।२३।१०$$

अतः सुखभाव पर मङ्गल की दृष्टि = ०।२३।१०

द्रष्टा मङ्गल, दृश्य सुतभाव—

१०।१५।५१।४७।२० – ७।११।१४।२४ = ३।४।३७।२३।२०
राशि = ३, भादिज अंक = ४, अन्तर = – २

$$\frac{२ \times ४।३७।२३।२०}{३०} = ०।१८।३०$$

$$\frac{४ - ०।१८।३०}{४} = \frac{३।४१।३०}{४} = ०।५५।२२$$

अतः सुतभाव पर मङ्गल की दृष्टि = ०।५५।२२

द्रष्टा मङ्गल, दृश्य रिपुभाव—

११।१५।२।८।४० − ७।११।१४।२४ = ४।३।४७।४४।४०

राशि = ४, भादिज अंक = २, अन्तर = − २

$$\frac{२ \times ३।४७।४४।४०}{३०} = ०।१५।११$$

$$\frac{२ - ०।१५।११}{४} = \frac{१।४४।४९}{४} = ०।२६।१२$$

अतः रिपुभाव पर मङ्गल की दृष्टि = ०।२६।१२

द्रष्टा मङ्गल, दृश्य जायाभाव—

०।१४।१२।३० − ७।११।१४।२४ = ५।२।५८।६

राशि = ५, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = + ४

$$\frac{४ \times २।५८।६}{३०} = ०।२३।४५$$

$$\frac{० + ०।२३।४५}{४} = \frac{०।२३।४५}{४} = ०।५।५६$$

अतः जायाभाव पर मङ्गल की दृष्टि = ०।५।५६

द्रष्टा मङ्गल, दृश्य आयुभाव—

१।१५।२।८।४० − ७।११।१४।२४ = ६।३।४७।४४।४०

राशि = ६, भादिज अङ्क = ४, अन्तर = ०

$$\frac{० \times ३।४७।४४।४०}{३०} = ०।०।०$$

$$\frac{४ + ०।०।०}{४} = \frac{४।०।०}{४} = १।०।०$$

अतः आयुभाव पर मङ्गल की दृष्टि = १।०।०

द्रष्टा मङ्गल, दृश्य धर्मभाव—

२।१५।५१।४७।२० — ७।११।१४।२४ = ७।४।३७।२३।२०

राशि = ७, भादिज अङ्क = ४, अन्तर = – २

$$\frac{२ \times ४।३७।२३।२०}{३०} = ०।१८।३०$$

$$\frac{४ - ०।१८।३०}{४} = \frac{३।४१।३०}{४} = ०।५५।२२$$

अतः धर्मभाव पर मङ्गल की दृष्टि = ०।५५।२२

द्रष्टा मङ्गल, दृश्य कर्मभाव—

३।१६।४१।२६ — ७।११।१४।२४ = ८।५।२७।२

राशि = ८, भादिज अङ्क = २, अन्तर = – १

$$\frac{१ \times ५।२७।२}{३०} = ०।१०।५४$$

$$\frac{२ - ०।१०।५४}{४} = \frac{१।४९।६}{४} = ०।२७।१७$$

अतः कर्मभाव पर मङ्गल की दृष्टि = ०।२७।१७

द्रष्टा मङ्गल, दृश्य आयभाव—

४।१५।५१।४७।२० — ७।११।१४।२४ = ९।४।३७।२३।२०

राशि = ९ भादिज अङ्क = १, अन्तर = – १

$$\frac{१ \times ४।३७।२३।२०}{३०} = ०।९।१५$$

$$\frac{१ - ०।९।१५}{४} = \frac{०।५०।४५}{४} = ०।१२।४१$$

अतः आयभाव पर मङ्गल की दृष्टि = ०।१२।४१

द्रष्टा मङ्गल, दृश्य व्ययभाव—

५।१५।२।८।४० — ७।११।१४।२४ = १०।३।४७।४४।४०

राशि = १०, भादिज अङ्क = ०; अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः व्यय भाव पर मंगल की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा बुध, दृश्य तनुभाव—

६।१४।१२।३० − ४।२९।२२।१२ = १।१४।५०।१८

राशि = १, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = + १

$$\frac{१ \times १४।५०।१८}{३०} = ०।२९।४१$$

$$\frac{० + ०।२९।४१}{४} = \frac{०।२९।४१}{४} = ०।७।२५$$

अतः तनुभाव पर बुध की दृष्टि = ०।७।२५

द्रष्टा बुध, दृश्य धनभाव—

७।१५।२।८।४० − ४।२९।२२।१२ = २।१५।३९।५६।४०

राशि = २, भादिज अङ्क = १, अन्तर = + २

$$\frac{२ \times १५।३९।५६।४०}{३०} = १।२।४०$$

$$\frac{१ + १।२।४०}{४} = \frac{२।२।४०}{४} = ०।३०।४०$$

अतः धनभाव पर बुध की दृष्टि = ०।३०।४०

द्रष्टा बुध, दृश्य सहजभाव—

८।१५।५१।४७।२० − ४।२९।२२।१२ = ३।१९।२९।३५।२०

राशि = ३, भादिज अङ्क = ३, अन्तर = − १

$$\frac{१ \times १९।२९।३५।२०}{३०} = ०।३२।५९$$

$$\frac{३ - ०।३२।५९}{४} = \frac{२।२७।१}{४} = ०।३६।४५$$

अतः सहजभाव पर बुध की दृष्टि = ०।३६।४५

द्रष्टा बुध, दृश्य सुखभाव—

६।१६·४१।२६ − ४।२९।२२।१२ = ४।१७।१९।१४

राशि = ४, भादिज अङ्क = २, अन्तर = − २

$$\frac{२\times१७।१६।१४}{३०} = १।९।१७$$

$$\frac{२ - १।९।१७}{४} = \frac{०।५०।४३}{४} = ०।१२।४१$$

अतः सुखभाव पर बुध की दृष्टि = ०।१२।४१

द्रष्टा बुध, दृश्य सुतभाव—

१०।१५।५१।४७।२० − ४।२६।२२।१२ = ५।१६।२६।३५।२०

राशि = ५, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = + ४

$$\frac{४\times१६।२६।३५।२०}{३०} = २।११।५७$$

$$\frac{० + २।११।५७}{४} = \frac{२।११।५७}{४} = ०।३२।५९$$

अतः सुतभाव पर बुध की दृष्टि = ०।३२।५९

द्रष्टा बुध, दृश्य रिपुभाव—

११।१५।२।८।४० − ४।२६।२२।१२ = ६।१५।३६।५६।४०

राशि = ६, भादिज अङ्क = ४, अन्तर = − १

$$\frac{१\times१५।३६।५६।४०}{३०} = ०।३१।२०$$

$$\frac{४ - ०।३१।२०}{४} = \frac{३।२८।४०}{४} = ०।५२।१०$$

अतः रिपुभाव पर बुध की दृष्टि = ०।५२।१०

द्रष्टा बुध, दृश्य जायाभाव—

०।१४।१२।३० − ४।२६।२२।१२ = ७।१४।५०।१८

राशि = ७, भादिज अङ्क = ३, अन्तर = − १

$$\frac{१\times१४।५०।१८}{३०} = ०।२६।४१$$

$$\frac{३ - ०।२६।४१}{४} = \frac{२।३०।१६}{४} = ०।३७।३५$$

अतः जायाभाव पर बुध की दृष्टि = ०।३७।३५

द्रष्टा बुध, दृश्य आयुभाव—

१।१५।२।८।४० − ४।२६।२२।१२ = ८।१५।३६।५६।४०

राशि = ८, भादिज अङ्क = २, अन्तर = − १

$$\frac{१ \times १५।३६।५६।४०}{३०} = ०।३१।२०$$

$$\frac{२ - ०।३१।२०}{४} = \frac{१।२८।४०}{४} = ०।२२।१०$$

अतः आयुभाव पर बुध की दृष्टि = ०।२२।१०

द्रष्टा बुध, दृश्य धर्मभाव—

२।१५।५१।४७।२० − ४।२६।२२।१२ = ६।१६।२६।३५।२०

राशि = ६, भादिज अङ्क = ?, अन्तर = − १

$$\frac{१ \times १६।२६।३५।२०}{३०} = ०।३२।५६$$

$$\frac{१ - ०।३२।५६}{४} = \frac{०।२७।१}{४} = ०।६।४५$$

अतः धर्मभाव पर बुध की दृष्टि = ०।६।४५

द्रष्टा बुध, दृश्य कर्मभाव—

३।१६।४१।२६ − ४।२६।२२।१२ = १०।१७।१९।१४

राशि = १०, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः कर्मभाव पर बुध की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा बुध, दृश्य आयभाव—

४।१५।५१।४७।२० − ४।२६।२२।१२ = ११।१६।२६।३५।२०

राशि = ११, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः आयभाव पर बुध की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा बुध, दृश्य व्ययभाव—

५।१५।२।८।४० − ४।२६।२२।१२ = ०।१५।३६।५६।४०

राशि = ०, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः व्यय भाव पर बुध की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा गुरु, दृश्य तनुभाव—

६।१४।१२।३० − १०।१०।३८।३८ = ८।३।३३।५२

राशि = ८, भादिज अङ्क = ४, अन्तर = − ३

$$\frac{३ \times ३।३३।५२}{३०} = ०।२१।२३$$

$$\frac{४ - ०।२१।२३}{४} = \frac{३।३८।३७}{४} = ०।५४।३९$$

अतः तनु भाव पर गुरु की दृष्टि = ०।५४।३९

द्रष्टा गुरु, दृश्य धनभाव—

७।१५।२।८।४० − १०।१०।३८।३८ = ६।४।२३।३०।४०

राशि = ६, भादिज अङ्क = १, अन्तर = − १

$$\frac{१ \times ४।२३।३०।४०}{३०} = ०।८।४७$$

$$\frac{१ - ०।८।४७}{४} = \frac{०।५१।१३}{४} = ०।१२।४८$$

अतः धनभाव पर गुरु की दृष्टि = ०।१२।४८

द्रष्टा गुरु, दृश्य सहजभाव—

८।१९।५१।४७।२० — १०।१०।३८।३८ = १०।९।१३।६।२०

राशि = १०, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः सहजभाव पर गुरु की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा गुरु, दृश्य सुखभाव—

६।१६।४१।२६ − १०।१०।३८।३८ = ११।६।२।४८

राशि = ११, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः सुखभाव पर गुरु की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा गुरु, दृश्य सुतभाव—

१०।१५।५१।४७।२० − १०।१०।३८।३८ = ०।५।१३।९।२०

राशि = ०, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः सुतभाव पर गुरु की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा गुरु, दृश्य रिपुभाव—

११।१५।२।८।४० − १०।१०।३८।३८ = १।४।२३।३०।४०

राशि = १, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = + १

$$\frac{\text{१×४।२३।३०।४०}}{\text{३०}} = \text{०।८।४७}$$

$$\frac{\text{० + ०।८।४७}}{\text{४}} = \frac{\text{०।८।४७}}{\text{४}} = \text{०।२।१२}$$

अतः रिपुभाव पर गुरु की दृष्टि = ०।२।१२

द्रष्टा गुरु, दृश्य जायाभाव—

०।१४।१२।३० − १०।१०।३८।३८ = २।३।३३।५२

राशि = २, भादिज अंक = १, अन्तर = + २

$$\frac{\text{२×३।३३।५२}}{\text{३०}} = \text{०।१४।१५}$$

$$\frac{\text{१ + ०।१४।१५}}{\text{४}} = \frac{\text{१।१४।१५}}{\text{४}} = \text{०।१८।३४}$$

अतः जायाभाव पर गुरु की दृष्टि = ०।१८।३४

द्रष्टा गुरु, दृश्य आयुभाव—

१।१५।२।८।४० − १०।१०।३८।३८ = ३।४।२३।३०।४०

राशि = ३, भादिज अङ्क = ३, अन्तर = + १

$$\frac{\text{१×४।२३।३०।४०}}{\text{३०}} = \text{०।८।४७}$$

$$\frac{\text{३ + ०।८।४७}}{\text{४}} = \frac{\text{३।८।४७}}{\text{४}} = \text{०।४७।१२}$$

अतः आयु भाव पर गुरु की दृष्टि = ०।४७।१२

द्रष्टा गुरु, दृश्य धर्मभाव—

२।१५।५१।४७।२० − १०।१०।३८।३८ = ४।५।१३।९।२०

राशि = ४, भादिज अङ्क = ४, अन्तर = − ४

$$\frac{४ \times ५।१३।९।२०}{३०} = ०।४१।४५$$

$$\frac{४ - ०।४१।४५}{४} = \frac{३।१८।१५}{४} = ०।४९।३४$$

अतः धर्मभाव पर गुरु की दृष्टि = ०।४९।३४

द्रष्टा गुरु, दृश्य कर्मभाव—

३।१६।४१।२६ − १०।१०।३८।३८ = ५।६।२।४८

राशि = ५, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = + ४

$$\frac{४ \times ६।२।४८}{३०} = ०।४८।२२$$

$$\frac{० + ०।४८।२२}{४} = \frac{०।४८।२२}{४} = ०।१२।५$$

अतः कर्मभाव पर गुरु की दृष्टि = ०।१२.५

द्रष्टा गुरु, दृश्य आयभाव—

४।१५।५१।४७।२० − १०।१०।३८।३८ = ६।५।१३।९।२०

राशि = ६, भादिज अंक = ४, अन्तर = − ०

$$\frac{१ \times ५।१३।९।२०}{३०} = ०।१०।२६$$

$$\frac{४ - ०।१०।२६}{४} = \frac{३।४९।३४}{४} = ०।५७।२४$$

अतः आयभाव पर गुरु की दृष्टि = ०।५७।२४

द्रष्टा गुरु, दृश्य व्ययभाव—

५।१५।२।८।४० − १०।१०।३८।३८ = ७।४।२३।३०।४०

राशि = ७, भादिज अङ्क = ३, अन्तर = + १

$$\frac{१ \times ४।२३।३०।४०}{३०} = ०।८।४७$$

$$\frac{३ + ०।८।४७}{४} = \frac{३।८।४७}{४} = ०।४७।४२$$

अतः व्ययभाव पर गुरु की दृष्टि = ०।४७।४२

द्रष्टा शुक्र, दृश्य तनुभाव—

६।१४।१२।३० − ५।७।१७।४ = १।६।५५।२६

राशि = १, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = + १

$$\frac{\text{१ × ६।५५।२६}}{\text{३०}} = \text{०।१३।५१}$$

$$\frac{\text{० + ०।१३।५१}}{\text{४}} = \frac{\text{०।१३।५१}}{\text{४}} = \text{०।३।२८}$$

अतः तनुभाव पर शुक्र की दृष्टि = ०।३।२८

द्रष्टा शुक्र, दृश्य धनभाव—

७।१५।२।८।४० − ५।७।१७।४ = २।७।४५।४।४०

राशि = २, भादिज अङ्क = १, अन्तर = + २

$$\frac{\text{२ × ७।४५।४।४०}}{\text{३०}} = \text{०।३१।०}$$

$$\frac{\text{१ + ०।३१।०}}{\text{४}} = \frac{\text{१।३१।०}}{\text{४}} = \text{०।२२।४५}$$

अतः धनभाव पर शुक्र की दृष्टि = ०।२२।४५

द्रष्टा शुक्र, दृश्य सहजभाव—

८।१५।५१।४७।२० − ५।७।१७।४ = ३।८।३४।४३।२०

राशि = ३, भादिज अङ्क = ३, अन्तर = − १

$$\frac{\text{१ × ८।३४।४३।२०}}{\text{३०}} = \text{०।१७।९}$$

$$\frac{\text{३ − ०।१७।९}}{\text{४}} = \frac{\text{२।४२।५१}}{\text{४}} = \text{०।४०।४३}$$

अतः सहजभाव पर शुक्र की दृष्टि = ०।४०।४३

द्रष्टा शुक्र, दृश्य सुखभाव—

९।१६।४१।२६ − ५।७।१७।४ = ४।९।२४।२२

राशि = ४, भादिज अङ्क = २, अन्तर = − २

$$\frac{२\times६।२४।२२}{३०} = ०।३७।३७$$

$$\frac{२-०।३७।३७}{४} = \frac{१।२२।२३}{४} = ०।२०।३६$$

अतः सुखभाव पर शुक्र की दृष्टि = ०।२०।३६

द्रष्टा शुक्र, दृश्य सुतभाव—

१०।१५।५१।४७।२० − ५।७।१७।४ = ५।८।३४।४३।२०

राशि = ५, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = +४

$$\frac{४\times८।३४।४३।२०}{३०} = १।८।३८$$

$$\frac{०+१।८।३८}{४} = \frac{१।८।३८}{४} = ०।१७।९$$

अतः सुतभाव पर शुक्र की दृष्टि = ०।१७।९

द्रष्टा शुक्र, दृश्य रिपुभाव—

११।१५।२।८।४० − ५।७।१७।४ = ६।७।४५।४।४०

राशि = ६, भादिज अङ्क = ४, अन्तर = − १

$$\frac{१\times७।४५।४।४०}{३०} = ०।१५।३०$$

$$\frac{४-०।१५।३०}{४} = \frac{३।४४।३०}{४} = ०।५६।८$$

अतः रिपुभाव पर शुक्र की दृष्टि = ०।५६।८

द्रष्टा शुक्र, दृश्य जायाभाव—

०।१४।१२.३० − ५।७।१७।४ = ७।६।५५।२६

राशि = ७, भादिज अंक = ३, अन्तर = − १

$$\frac{१\times६।५५।२६}{३०} = ०।१३.५१$$

$$\frac{३-०।१३।५१}{४} = \frac{२।४६।९}{४} = ०।४१।३२$$

अतः जायाभाव पर शुक्र की दृष्टि = ०।४१।३२

द्रष्टा शुक्र, दृश्य आयुभाव—

१।१५।२।८।४० – ५।७।१७।४ = ८।७।४५।४।४०

राशि = ८, भादिज अंक = २, अन्तर= – १

$$\frac{१ \times ७।४५।४।४०}{३०} = ०।१५।३०$$

$$\frac{२–०।१५।३०}{४} = \frac{१।४४।३०}{४} = ०।२६।८$$

अतः आयुभाव पर शुक्र की दृष्टि = ०।२६।८

द्रष्टा शुक्र, दृश्य धर्मभाव—

२।१५।५१।४७।२० – ५।७।१७।४ = ६।८।३४।४३।२०

राशि = ६, भादिज अंक = १, अन्तर = – १

$$\frac{१ \times ८।३४।४३।२०}{३०} = ०।१७।६$$

$$\frac{१ – ०।१७।६}{४} = \frac{०।४२।५१}{४} = ०।१०।४३$$

अतः धर्मभाव पर शुक्र की दृष्टि=०।१०।४३

द्रष्टा शुक्र, दृश्य कर्मभाव—

३।१६।४१।२६ – ५।७।१७।४ = १०।६।२४।२२

राशि = १०, भादिज अङ्क = ०, अन्तर=०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः कर्मभाव पर शुक्र की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा शुक्र, दृश्य आयभाव—

४।१५।५१।४७।२० –५।७।१७।४=११।८।३४।४३।२०

राशि=११, भादिज अंक=०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः आयभाव पर शुक्र की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा शुक्र, दृश्य व्यय भाव—

५।१५।२।८।४०–५।७।१७।४=०।७।४५।४।४०

राशि=०, भादिज अंक=०, अन्तर=०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः व्यय भाव पर शुक्र की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा शनि, दृश्य तनुभाव—

६।१४।१२।३० − ४।२८।१४।२ = १।१५।५८।२८

राशि = १, भादिज अंक = ०, अन्तर = + ४

$$\frac{४ \times १५।५८।२८}{३०} = २।७।४८$$

$$\frac{० + २।७।४८}{४} = \frac{२।७।४८}{४} = ०।३१।५७$$

अतः तनुभाव पर शनि की दृष्टि = ०।३१।५७

द्रष्टा शनि, दृश्य धनभाव—

७।१५।२।८।४० − ४।२८।१४।२ = २।१६।४८।६।४०

राशि = २, भादिज अंक = ४, अन्तर = − १

$$\frac{१ \times १६।४८।६।४०}{३०} = ०।३३।३६$$

$$\frac{४ - ०।३३।३६}{४} = \frac{३।२६।२४}{४} = ०।५१।३६$$

अतः धनभाव पर शनि की दृष्टि = ०।५१।३६

द्रष्टा शनि, दृश्य सहजभाव—

८।१५।५१।४७।२० − ४।२८।१४।२ = ३।१७।३७।४५।२०

राशि = ३, भादिज अंक = ३, अन्तर = − १

$$\frac{१ \times १७।३७।४५।२०}{३०} = ०।३५।१६$$

$$\frac{३ - ०।३५।१६}{४} = \frac{२।२४।४४}{४} = ०।३६।११$$

अतः सहजभाव पर शनि की दृष्टि = ०।३६।११

द्रष्टा शनि, दृश्य सुखभाव—

६।१६।४१।२६ − ४।२८।१४।२ = ४।१८।२७।२४

राशि = ४, भादिज अंक = २, अन्तर = − २

$$\frac{२ \times १८।२७।२४}{३०} = १।१३।५०$$

$$\frac{२ - १।१३।५०}{४} = \frac{०।४६।१०}{४} = ०।११।३२$$

अतः सुखभाव शनि की दृष्टि = ०।११।३२

द्रष्टा शनि, दृश्य सुतभाव—

१०।१५।५१।४७।२० − ४।२८।१४।२ = ५।१७।३७।४५।२०

राशि = ५, भादिज अंक = ०, अन्तर = + ४

$$\frac{४ \times १७।३७।४५।२०}{३०} = २।२१।२$$

$$\frac{० + २।२१।२}{४} = \frac{२।२१।२}{४} = ०।३५।१६$$

अतः सुतभाव पर शनि की दृष्टि = ०।३५।१६

द्रष्टा शनि, दृश्य रिपुभाव—

११।१५।२।८।४० − ४।२८।१४।२ = ६।१६।४८।६।४०

राशि = ६, भादिज अंक = ४, अन्तर = − १

$$\frac{१ \times १६।४८।६।४०}{३०} = ०।३३।३६$$

$$\frac{४ - ०।३३।३६}{४} = \frac{३।२६।२४}{४} = ०।५१।३६$$

अतः रिपुभाव पर शनि की दृष्टि = ०।५१।३६

द्रष्टा शनि, दृश्य जायाभाव—

०।१४।१२।३० − ४।२८।१४।२ = ७।१५।५८।२८

राशि = ७, भादिज अंक = ३, अन्तर = − १

$$\frac{१ \times ५५।५८।२८}{३०} = ०।३१।५७$$

$$\frac{३ - ०।३१।५७}{४} = \frac{२।२८।३}{४} = ०।३७।१$$

अतः जाया भाव पर शनि की दृष्टि = ०।३७।१

द्रष्टा शनि, दृश्य आयुभाव—

१।१५।२।८।४० − ४।२८।१४।२ = ८।१६।४८।६।४०

राशि = ८, भादिज अंक = २, अन्तर = + २

$$\frac{२ \times १६।४८।६।४०}{३०} = १।७।१२$$

$$\frac{२ + १।७।१२}{४} = \frac{३।७।१२}{४} = ०।४४।४८$$

अतः आयुभाव पर शनि की दृष्टि = ०।४४।४८

द्रष्टा शनि, दृश्य धर्मभाव—

२।१५।५१।४७।२० − ४।२८।१४।२ = ६।१७।३७।४५।२०

राशि = ६, भादिज अंक = ४, अन्तर = − ४

$$\frac{४ \times १७।३७।४५।२०}{३०} = २।२१।२$$

$$\frac{४ - २।२१।२}{४} = \frac{१।३८।५८}{४} = ०।२४।४५$$

अतः धर्मभाव पर शनि की दृष्टि = ०।२४।४५

द्रष्टा शनि, दृश्य कर्मभाव—

३।१६।४१।२६ − ४।२८।१४।२ = १०।१८।२७।२४

राशि = १०, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः कर्मभाव पर शनि की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा शनि, दृश्य आयभाव—

४।१५।५१।४७।२० − ४।२८।१४।२ = ११।१७।३७।४५।२०

राशि = ११, भादिज अङ्क = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः आयभाव पर शनि की दृष्टि शून्य होगी।

द्रष्टा शनि, दृश्य व्ययभाव—

५।१५।२।८।४० − ४।२८।१४।२ = ०।१६।४८।६।४०

राशि = ०, भादिज अंक = ०, अन्तर = ०

अग्रिम क्रिया करने पर फल शून्य होगा। अतः व्यय भाव पर शनि की दृष्टि शून्य होगी।

भावोपरिग्रहदृष्टिचक्रम्

	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
तनु	०। ०। ०	०। ७।४३	०। ०। ०	०। ७।२५	०।५४।३९	०। ३।२८	०।३१।५७
धन	०।१५।१९	०।४६।१३	०। ०। ०	०।३०।४०	०।१२।४८	०।२२।४५	०।५१।३६
सहज	०।४४।२६	०।४८। २	०। २।१९	०।३६।४५	०। ०। ०	०।४०।४३	०।३६।११
सुख	०।२८। २	०।३२।३७	०।२३।१०	०।१२।४१	०। ०। ०	०।२०।३६	०।११।३२
सुत	०। २।१७	०।१८। २	०।५५।२२	०।३२।५९	०। ०। ०	०।१७। ९	०।३५।१६
रिपु	०।५९।५१	०। ३।२७	०।२६।१२	०।५२।१०	०। २।१२	०।५६। ८	०।५१।३६
जाया	०।४५।१५	०। ०। ०	०। ५।५६	०।३७।३५	०।१८।३४	०।४१।३२	०।३७। १
आयु	०।२९।५१	०। ०। ०	१। ०। ०	०।२२।१०	०।४७।१२	०।२९। ८	०।४४।४८
धर्म	०।१४।२६	०। ०। ०	०।५५।२२	०। ६।४५	०।४९।३४	०।१०।४३	०।२४।४५
कर्म	०। ०। ०	०।१२।२३	०।२७।१७	०। ०। ०	०।१२। ५	०। ०। ०	०। ०। ०
आय	०। ०। ०	०।३८।५६	०।१२।४१	०। ०। ०	०।५७।२४	०। ०। ०	०। ०। ०
व्यय	०। ०। ०	०।३३।२७	०। ०। ०	०। ०। ०	०।४७।४२	०। ०। ०	०। ०। ०

अथ ग्रहाणामुच्चबलं सप्तवर्गजबलं चाह—

नीचोनो भगणाच्च्युतः षडधिकश्चेत्षड्हृदौच्चं बलं
स्वर्क्षेऽर्धं समभेऽष्टमस्त्रिचरणा मूलत्रिकोणे बलम् ।
मित्रर्क्षेऽङ्घ्रिरधीष्टभे त्रय इभांशा वैरिभेऽष्टयंशको
दन्तांशोऽध्यरिभे गृहादिपवशात्खेटस्य सप्तैक्यजम् ॥५॥

अन्वयः—नीचोनः ग्रहश्चेद्यदि षडधिकस्तदा भगणाच्च्युतः षड्हृदौच्चं बलं भवति। स्वर्क्षे अर्धम्, समभे अष्टमः, मूलत्रिकोणे त्रिचरणाः, मित्रर्क्षेऽङ्घ्रिः, अधीष्टभे त्रय इभांशाः वैरिभेऽष्ट्यंशकः, अध्यरिभे दन्तांशो बलं स्यात्। एवं खेटस्य सप्तैक्यजं बलं गृहादिपवशात् ग्राह्यम्।

व्याख्या—नीचोनः स्वनीचहीनो ग्रहो यदि षडधिकः षड्राशितोऽधिकस्तदा भगणाद् द्वादशराशिभ्यश्च्युतः शोधितः, षड्हृत् = षड्भक्तः, लब्धं औच्चं = उच्चसम्बन्धिबलं भवति। स्वर्क्षं = स्वराशौ अर्धं = चरणद्वयमितं बलं स्यात्। समभेऽष्टमः = समराशौ अष्टमांशो बलम्, मूलत्रिकोणे त्रिचरणः, मित्रर्क्षेऽङ्घ्रिः = चतुर्थांशः, अधीष्टभे = अधिमित्रराशौ त्रय इभांशाः = त्रिगुणिताष्टमांशाः, वैरिभे = शत्रुराशौ अष्ट्यंशः = षोडशांशः, अध्यरिभे = अधिशत्रुराशौ दन्तांशो द्वात्रिंशद्भागो बलं भवति। एवं खेटस्य सप्तैक्यजं = सप्तानां ग्रह-होरा-द्रेष्काण-सप्तमांश-नवमांश-द्वादशांश-त्रिंशांशानां वर्गाणामैक्यजं योगजं बलं गृहादिपवशात् = गृहादिसप्तवर्गस्वामिवशात् ग्राह्यं भवतीत्यर्थः।

उप०—उच्चस्थितो ग्रहः बलवान्नीचस्थितो ग्रहो निर्बलो भवतीति प्रसिद्धमेवास्ति। अत एव नीचस्थस्य ग्रहस्य बलं शून्यम्, तत उच्चाभिमुखं गच्छतो ग्रहस्य बलमुपचीयमानं परमोच्चस्थाने च परमं रूपमितं बलं भवितुमर्हति। अत एव नीचग्रहयोरन्तरं यथा-यथा वर्धते तथा-तथा बलस्याधिक्यं भवति। अतो नीचग्रहान्तरवशेनैवोच्चबलस्यानयनं युक्तियुक्तमेव। उच्चसमे ग्रहे नीचग्रहयोरन्तरं परमं षड्राशितुल्यं जायते। तत्र यदि परममुच्चबलं रूपमितं तदेष्टनीचग्रहान्तरेण किमित्यनुपातेनेष्टोच्चबलम् = $\frac{(\text{ग्र—नी}) \times 1}{6}$ । तथा च परमोच्चस्थानाद्

भिन्नस्थानस्थिते ग्रहे नीचग्रहयोरन्तरं यदेव षड्भाल्पं तदेव बलानयनार्थं ग्राह्यम्। तत्र उच्चस्थानात्पृष्ठस्थे ग्रहे नीचोनो ग्रहः षड्राशितोऽल्प एव। उच्चस्थानादग्रस्थे ग्रहे नीचोनो ग्रहः षड्भाधिकः स भगणाच्च्युतः षड्भाल्पो ग्रहोननीच तुल्यो भवितुमर्हत्यतो "नीचोनो भगणाच्च्युतः षडधिक" इति समुचितमेव। उच्चस्थाने रूपमितं बलम्, ततः क्रमेणापचयेन मूलत्रिकोणादौ तारतम्यात् त्रिचरणादिबलं आचार्येण स्वीकृतमिति।

हि० टी०—स्पष्टग्रह में ग्रह के नीच को घटाकर शेष यदि ६ राशि से अल्प हो तो उसमें ६ का भाग देने से, यदि नीचोन ग्रह ६ राशि से अधिक हो तो भगण (१२ राशि) में घटाकर ६ का भाग देने से ग्रह का उच्चबल होता है। अपनी राशि में दो चरण, समराशि में अष्टमांश, मूलत्रिकोण राशि में तीन चरण, मित्र की राशि में एक चरण, अधिमित्र की राशि में त्रिगुणित अष्टमांश, शत्रु की राशि में षोडशांश, अधिशत्रु की राशि में बत्तीसवाँ भाग बल प्राप्त होता है। इस प्रकार गृहादि सप्तवर्ग के स्वामी के अनुसार सप्तवर्गज बल ग्रहण करना चाहिए। अर्थात् ग्रह जिसके वर्ग में स्थित हो वह मित्र, सम, शत्रु आदि में जो हो वह बल ग्रहण करना चाहिये।

विशेष—जो राशि स्वगृह और मूल त्रिकोण दोनों होती हो अथवा उच्च स्वगृह एवं मूलत्रिकोण तीनों होता हो वहाँ बल ग्रहण करने के लिए सारावली का वचन निम्नाङ्कित है—

"विंशत्यंशाः सिंहे त्रिकोणमपरे स्वभवनमर्कस्य।
उच्चं भागतृतीयं वृष इन्दोः स्यात्त्रिकोणमपरेंऽशाः॥
द्वादशभागा मेषे त्रिकोणमपरे स्वभवनं तु भौमस्य।
उच्चमथो कन्यायां बुधस्य तिथ्यंशकैः सदा चिन्त्यम्॥
परतस्त्रिकोणजातं पञ्चभिरंशैः स्वराशिजं परतः।
दशभिर्भागैर्जीवस्य त्रिकोणफलं स्वभं परस्तापे॥
शुक्रस्य तु तिथयोंशास्त्रिकोणमपरे घटे स्वराशिश्च।
कुम्भे त्रिकोणनिजभे रविजस्य रवेर्यथा सिंहे"॥

उदाहरण—

श्लोक ५ से सम्बन्धित विषयों की स्पष्टता हेतु ग्रहों के उच्चनीच विभाग, पञ्चधामहमैत्री एवं मूलत्रिकोण राशि का ज्ञान होना आवश्यक है। अतः इनका क्रमशः विवेचन प्रस्तुत है—

ग्रहों की उच्चनीच राशियाँ—

"अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा झषवणिजौ च दिवाकरादितुङ्गाः।
दशशिखिमनुयुक्तिथीन्द्रियांशैस्त्रिनवकविंशतिभिश्च तेऽस्तनीचाः ॥"

सूर्य मेष राशि के दस अंश पर परमोच्च एवं तुला राशि के १० अंश पर परमनीच का होता है। चन्द्र वृषराशि के तीन अंश पर परमोच्च राशि एवं वृश्चिक के तीन अंश पर परमनीच राशि का, मंगल मकर राशि के २८ अंश पर परमोच्च तथा कर्क राशि के २८ अंश पर परमनीच राशि का, बुध कन्या के १५ अंश पर उच्च एवं मीन के १५ अंश पर नीचराशि का, गुरु कर्क के ५ अंश पर उच्च तथा मकर के ५ अंश पर नीचराशि का, शुक्र मीन के २७ अंश पर उच्च एवं कन्या के २७ अंश पर नीचराशि का तथा शनि तुला के २० अंश पर उच्च तथा मेष के २० अंश पर नीच राशि का होता है।

स्पष्टार्थ ग्रहों का उच्चनीच चक्र

	सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०
उच्च	०	१	९	५	३	११	६
	१०	३	२८	१५	५	२७	२०
नीच	६	७	३	११	९	५	०
	१०	३	२८	१५	५	२७	२०

उच्चबलसाधन—

सूर्य— ५।१४।४३।२५ − ६।१०।०।० = ११।४।४३।२५
१२ राशि − ११।४।४३।२५ = ०।२५।१६।२५
०।२५।१६।३५ ÷ ६ = ०।४।१२।४६
सूर्य का उच्चबल = ०।४।१२।४६

चन्द्र— १।२१।५५।३६ − ७।३।०।० = ६।१८।५५।३६
१२ राशि − ६।१८।५५।३६ = ५।११। ४।२४
५।११।४।२४ ÷ ६ = ०।२६।५०।४४
चन्द्र का उच्चबल = ०।२६।५०।४४

मङ्गल—	७।११।१४।२४ – ३।२८।०।०	=	३।१३।१४।२४
	३।१३।१४।२४ ÷ ६	=	०।१७।१२।२४
	मंगल का उच्च बल	=	०।१७।१२।२४
बुध—	४।२६।२२।१२ – ११।१५।०।०	=	५।१४।२२।१२
	५।१४।२२।१२ ÷ ६	=	०।२७।२३।४२
	बुध का उच्च बल	=	०।२७।२३।४२
गुरु—	१०।१०।३८।३८ – ३।५।०।०	=	१। ५।३८।३८
	१।५।३८।३८ ÷ ६	=	०। ५।५६।२६
	गुरु का उच्चबल	=	०। ५।५६।२६
शुक्र—	५।७।१७।४ – ५।२७।०।०	=	११।१०।१७।४
	१२ राशि – ११।१०।१७।४	=	०।१९।४२।५६
	०।१९।४२।५६ ÷ ६	=	०। ३।१७। ९
	शुक्र का उच्च बल	=	०। ३।१७। ९
शनि—	४।२८।१४।२ – ०।२०।०।०	=	४। ८।१४। २
	४।८।१४।२ ÷ ६	=	०।२१।२२।२०
	शनि का उच्च बल	=	०।२१।२२।२०

उच्चबलचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०
०	०	०	०	०	०	०
४	२६	१७	२७	५	३	२१
१२	५०	१२	२३	५६	१७	२२
४६	४४	२४	४२	२६	९	२०

नैसर्गिकग्रहमैत्रीचक्रम्

ग्रह	मित्र	शत्रु	सम
रवि—	चन्द्र, मंगल, गुरु	शुक्र, शनि	बुध
चन्द्र—	सूर्य, बुध	राहु	मङ्गल, गुरु, शुक्र, शनि
मङ्गल—	रवि, चन्द्र, गुरु	बुध	शुक्र, शनि
बुध—	रवि, शुक्र	चन्द्र	मङ्गल, गुरु, शनि
गुरु—	रवि, चन्द्र, मङ्गल	बुध, शुक्र	शनि
शुक्र—	बुध, शनि	रवि, चन्द्र	मङ्गल, गुरु
शनि—	बुध, शुक्र	रवि, चन्द्र, मङ्गल	गुरु
राहु—	बुध, शुक्र, शनि	रवि, चन्द्र, मङ्गल	गुरु
केतु—	बुध, शुक्र, शनि	रवि, चन्द्र, मङ्गल	गुरु

नैसर्गिक मैत्री एवं तात्कालिकमैत्रीवश पञ्चधाग्रहमैत्री होती है। तात्कालिक मैत्री विचार में जिस ग्रह का तात्कालिक मित्र, शत्रु विचार करना हो उस ग्रह से २,३,४,१०,११,१२ वें स्थानों में स्थित ग्रह मित्र तथा शेष स्थानों (१,५,६,७,८,९) में स्थित ग्रह शत्रु होते हैं।

"दशायबन्धुसहजस्वान्त्यस्थास्ते परस्परम्।
तत्काले सुहृदोऽन्यत्र संस्थिताः शत्रवः स्मृताः॥

बृहत्पाराशरहोरा

नैसर्गिक ग्रह		तात्कालिकग्रह		पञ्चधामैत्रीग्रह
मित्र	+	मित्र	=	अधिमित्र
सम	+	मित्र	=	मित्र
मित्र या शत्रु	+	शत्रु या मित्र	=	सम
सम	+	शत्रु	=	शत्रु
शत्रु	+	शत्रु	=	अधिशत्रु

प्रकृत उदाहरण का तात्कालिक मित्र-शत्रु बोधक चक्र

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
मं. बु. श.	बु. श. बृ.	बृ.बु.श. सू. शु.	सू.शु.मं. चं.	चं. मं.	मं.बु.श.	सू.शु.मं. चं.	मित्र
शु. बृ. चं.	सू. शु. मं.	चं.	श. बृ.	बु. श. सू. शु.	सू.बृ.चं.	बु. बृ.	शत्रु

प्रकृत उदाहरण का पञ्चधाग्रहमैत्री चक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्र.
मं.	बु.	बृ. सू.	सू. शु.	चं. मं.	बु. श.	शु.	अधिमित्र
बु.	श. बृ.	श. शु.	मं.	×	मं.	×	मित्र
श. बृ. चं.	सू.	बु, चं.	चं.	सू.	×	सू. चं. मं. बु.	सम
×	शु. मं.	×	श. बृ.	श.	बृ.	बृ.	शत्रु
शु.	×	×	×	बृ. शु.	सू. चं.	×	अधिशत्रु

मूलत्रिकोणराशियाँ—

"विंशत्यंशा रवेः सिंहे त्रिकोणमपरे गृहम्।
इन्दोर्वृषेऽग्निभागास्तु तुङ्गमन्ये त्रिकोणकम्॥
मेषे कुजस्य सूर्यांशास्त्रिकोणमपरे गृहम्।
तिथ्यंशैः कन्यकाराशौ विदस्तुङ्गं ततः परे॥
पञ्चांशकास्त्रिकोणाख्यास्तदग्रे तद्गृहं मतम्।
गुरोर्धनुषि दिग्भागैस्त्रिकोणं तत्परं गृहम्॥
तुलार्धं तु त्रिकोणं स्याद् भृगोरर्धं परं गृहम्।
विंशत्यंशैर्घटे शौरेस्त्रिकोणं सद्म शेषकैः॥

बृहत्पाराशरहोरा

रवि का सिंह राशि में २० अंश तक मूलत्रिकोण तथा शेष १० अंश अपनी राशि है। चन्द्र का वृष राशि में ३ अंश तक उच्च और शेष २७ अंश मूलत्रिकोण है। मङ्गल का मेषराशि में १२ अंश तक मूलत्रिकोण, शेष १८ अंश स्वगृह है। बुध का कन्या राशि में १५ अंश तक उच्च, १६ से २० अंश तक मूल-त्रिकोण तथा शेष १० अंश स्वभवन है। गुरु का धनुराशि में १० अंश तक मूलत्रिकोण तथा शेष स्वभवन है। शुक्र का तुला राशि में १५ अंश तक मूल-त्रिकोण तथा शेष स्वभवन है। शनि का कुम्भराशि में २० अंश मूलत्रिकोण तथा शेष १० अंश स्वभवन है।

स्पष्टार्थचक्र

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
मूल त्रिकोण	सिंह में २०° तक	वृष में अन्तिम २७°	मेष में १२° तक	कन्या में १६° से २०°	धनु में १०° तक	तुला में १५°	कुम्भ में २०°
स्वराशि	सिंह में शेष १०°	×	मेष में शेष १८°	कन्या में २१° से ३०°	धनु में शेष २०°	तुला में शेष १५°	कुम्भ में शेष १०°
उच्च	×	वृष में आदि का ३°	×	कन्या में आदि से १५° तक	×	×	×

सप्तवर्गीबलविचार—

सप्तवर्गीबल साधन के लिए सप्तवर्ग का ज्ञान होना चाहिये। सप्तवर्ग में गृह, होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवमांश, द्वादशांश एवं त्रिशांश की गणना है।

गृह—जो ग्रह जन्माङ्गचक्र में जिस राशि में स्थित हो वह उस राशि के अधिपति के गृह में कहा जायगा।

होरा— "त्रिशद्भागात्मकं लग्नं होरा तस्यार्धमुच्यते।
मार्तण्डेन्द्वोरयुजि समभे चन्द्रभान्वोश्च होरे" ॥

एक राशि में दो होरा होती है। विषम राशि में १५ अंश तक सूर्य की होरा तथा शेष ३० अंश तक चन्द्रमा की होरा होती है।

सम राशि में पहले १५° तक चन्द्रमा की होरा तथा शेष से ३०° तक सूर्य की होरा होती है।

होराज्ञानार्थचक्रम्

अंश	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
१—१५	५ सू.	४ च.	५ सू.	४ च.	५ सू.	४ च.	५ सू.	४ च.	५ सू.	४ च.	५ सू.	४ च.
१६—३०	४ चं.	५ सू.	४ च.	५ सू.	४ च.	५ सू.	४ च.	५ सू.	४ च.	५ सू.	४ च.	५ सू.

द्रेष्काण —

"दृक्काणाः स्युः स्वभवनसुतत्रित्रिकोणाधिपानाम्" ॥

एक राशि (३०°) में ३ का भाग देने से १०°—१०° के ३ खण्ड होते हैं। अर्थात् एक राशि में ३ द्रेष्काण होते हैं। यदि ग्रह १०° तक रहे तो जिस राशि में स्थित हो उसी राशि के स्वामी के द्रेष्काण में कहा जाता है। १०° से अधिक २०° तक रहे तो उस राशि से ५ वें राशि के अधिपति के द्रेष्काण में तथा २०° से अधिक ३०° तक रहे तो उस राशि से नवीं राशि के द्रेष्काण में होता है।

द्रेष्काणज्ञानार्थचक्रम्

रा.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
१—१०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
११—२०	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
२१—३०	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८

सप्तमांश—एक राशि (३० अंश) में सात का भाग देने से १ खण्ड का मान ४°।१७'।९" प्राप्त होता है। इस प्रकार १ राशि में सात खण्ड होंगे। विषमादि राशि में प्रथमादि खण्ड अपनी राशि से तथा समराशि में अपनी राशि से सप्तम राशि से प्रथमादि खण्ड आरम्भ होते हैं।

सप्तमांशज्ञानार्थचक्रम्

अं. क. वि.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
४।१७।६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६
८।३४।१७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७
१२।५१।२६	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८
१७। ८।३४	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९
२१।२५।४३	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०
२५।४२।५१	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११
३०। ०। ०	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२

नवमांश— "मेषादिष्वजनक्रतौलिककुलीराद्या नवांशाः क्रमात्"।

राशि (३०°) में ९° का भाग देने से ३° । २०′ एक खण्ड का मान होगा। इतने मान के ९ खण्ड होंगे। मेष, सिंह, धनु राशियों के नवमांश मेष से, वृष, कन्या, मकर राशियों के नवमांश मकर से, मिथुन, तुला, कुम्भ राशियों के नवमांश तुला से तथा कर्क, वृश्चिक एवं मीन राशियों के नवमांश कर्क से प्रारम्भ होते हैं।

नवमांशज्ञानार्थचक्रम्

अं॰	३	६	१०	१३	१६	२०	२३	२६	३०
राशि क॰	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०
मे., सिं., ध.	१	२	३	४	५	६	७	८	९
वृ., क., म.	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
मि., तु., कु.	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३
क., वृ., मी.	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२

द्वादशांश— "स्युर्द्वादशांशा निजभाद्विचिन्त्या"।

३०° में १२° का भाग देने से अंशादि २।३० फल प्राप्त होता है। अर्थात् एक राशि में २°।३०′ के तुल्य १२ खण्ड होंगे। द्वादशांश का विचार ग्रह जिस राशि में बैठा हो उसी राशि से होता है।

द्वादशांशज्ञानार्थचक्रम्

	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
२।३०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
५। ०	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१
७।३०	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२
१०। ०	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३
१२।३०	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
१५। ०	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५
१७।३०	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
२०। ०	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७
२२।३०	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	५	७	८
२५। ०	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९
२७।३०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
३०। ०	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११

त्रिंशांश—त्रिशांश में मतभेद है। एक आर्षपद्धति एवं द्वितीय प्रचलित पद्धति। यद्यपि आर्षपद्धति भी प्रचलित ही है, किन्तु आर्षपद्धति का अधिक व्यवहार नहीं है।

प्रचलितपद्धति—

"कुजयमजीवज्ञसिताः पञ्चेद्रियवसुमुनीन्द्रियांशानाम्।
अयुजि युजि भे तु विपर्ययस्थाः" ॥

विषम राशियों में ५°,५°,८°,७°,५° के पाँच खण्ड त्रिशांश में होते हैं। इनके स्वामी क्रमशः मंगल, शनि, गुरु, बुध तथा शुक्र हैं। समराशियों में विपरीत क्रम से खण्ड तथा स्वामी होते हैं। अर्थात् ५°,७°,८°,५°,५° के खण्ड होते हैं, और स्वामी क्रमशः शुक्र, बुध, गुरु, शनि तथा मङ्गल हैं। खण्ड के अधिपतियों की दो-दो राशियाँ हैं। अतः विषम राशि में ग्रह हो तो विषम-राशि तथा समराशि में ग्रह हो तो समराशि का त्रिशांश होगा।

त्रिंशांशबोधकस्पष्टार्थचक्रम्

ओज त्रिंशांश					
ओज	५	५	८	७	५
अं.	५	१०	१८	२५	३०
ग्र.	मं.	श.	बृ.	बु.	शु.
रा.	१	११	९	३	७

युग्म त्रिंशांश					
युग्म	५	७	८	५	५
अं.	५	१२	२०	२५	३०
ग्र.	शु.	बु.	बृ.	श.	मं.
रा.	२	६	१२	१०	८

त्रिशांश के लिए आर्षपद्धति—

एकराशि में १-१ अंश के ३० खण्ड होते हैं। विषमराशियों में मेष से प्रारम्भ कर गणना होती है। समराशियों में तुला राशि से प्रारम्भ कर गणना होती है। आर्षमत को शुद्धत्रिशांश कहते हैं।

शुद्धत्रिंशांशचक्रम्—

अंश	मे. मि. सि. तु. ध. कु.	वृ. क. क. वृ. म. मी.	अंश	मे. मि. सि. तु. ध. कु.	वृ. क. क. वृ. म. मी.
१	१	७	१६	४	१०
२	२	८	१७	५	११
३	३	९	१८	६	१२
४	४	१०	१९	७	१
५	५	११	२०	८	२
६	६	१२	२१	९	३
७	७	१	२२	१०	४
८	८	२	२३	११	५
९	९	३	२४	१२	६
१०	१०	४	२५	१	७
११	११	५	२६	२	८
१२	१२	६	२७	३	९
१३	१	७	२८	४	१०
१४	२	८	२९	५	११
१५	३	९	३०	६	१२

जन्माङ्गम् (गृहाङ्गम्)

८ मं०	७	६ शु० सू० के०
९		५ श० बु०
१०	लग्न ६।१४।१२।३०	४
११ बृ०		३
१२ रा०	१	२ च०

होराचक्रम्

५ च० बृ०
४ रा० के० सू० मं० बु० शु० श०

द्रेष्काणचक्रम्

१२ मं० रा०	११	१० सू० च०
१ बु० श०		९
२	लग्न ६।१४।१२।३०	८
३ बृ०		७
४	५	६ शु० के०

सप्तमांशचक्रम्

११ बु० श०	१०	९
१२		८
१ बृ० शु० चं० के०	लग्न ६।१४।१२।३०	७ रा०
२		६
३ सू०	४ मं०	५

नवमांशचक्रम्

१२ शु०के०	११	१० बृ०
१		९ बु० श०
२ सू०	लग्न ६।२४।२२।३०	८
३		७ मं०
४ च०	५	६ रा०

द्वादशांशचक्रम्

१	मं० १२	सू० ११
२		चं० १०
३ बृ०रा०	लग्न ६।२४।२२।३०	९ के०
४ बु० श०		८ शु०
५	६	७

त्रिंशांशचक्रम्

१० चं०	९ बृ०	८
११		७ बु० श०
१२ सू०	लग्न ६।२४।२२।३०	६ मं० शु० रा० के०
१		५
२	३	४

आर्षत्रिंशांशचक्रम्

४ च०	३ रा०के०	२ शु०
५ श०		१
६ बु० मं०	लग्न ६।२४।२२।३०	१२
७		११ बृ०
८	९ सू०	१०

ग्रहाणां सप्तवर्गीचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ग्रह
बु. ६	शु. २	मं. ८	सू. ५	श. ११	बु. ६	सू. ५	गृह
चं. ४	सू. ५	चं. ४	चं. ४	सू. ५	चं. ४	चं. ४	होरा
श. १०	श. १०	बृ. १२	मं. १	बु. ३	बु. ६	मं. १	द्रेष्काण
बु. ३	मं. १	चं. ४	श. ११	मं. १	मं. १	श. ११	सप्तमांश
शु. २	चं. ४	शु. ७	बृ. ९	श. १०	बृ. १२	बृ. ९	नवमांश
श. ११	श. १०	बृ. १२	चं. ४	बु. ३	मं. ८	चं. ४	द्वादशांश
बृ. १२	श. १०	बु. ६	शु. ७	बृ. ९	बु. ६	शु. ७	त्रिंशांश
बृ. ९	चं. ४	बु. ६	बु. ६	श. ११	शु. २	सू. ५	आर्ष त्रिंशांश

ग्रहों का सप्तवर्गीबल साधन—

गृहबल—

सूर्य—सूर्य बुध की राशि में है। सूर्य का बुध मित्र है। अतः सूर्य का बल = ०।१५।०।

चन्द्र—चन्द्र अपने मूलत्रिकोण राशि में है। अतः चन्द्र का बल = ०।४५।० ।

मङ्गल—मङ्गल अपनी राशि में हैं। अतः मङ्गल का बल = ०।३०।० ।

बुध—बुध सूर्य की राशि में है। सूर्य बुध का अधिमित्र है। अतः बुध का बल = ०।२२।३०।

गुरु—गुरु शनि की राशि में हैं। शनि गुरु का शत्रु है। अतः गुरु का बल = ०।३।४५।

शुक्र—शुक्र बुध की राशि में है। बुध शुक्र का अधिमित्र है। अतः शुक्र का बल=०।२२।३०।

शनि—शनि रवि की राशि में है। रवि शनि का सम है। अतः शनि का बल=०।७।३०।

होराबल—

सूर्य—सूर्य चन्द्रमा की होरा में है। चन्द्र सूर्य का सम है। अतः सूर्य का होराबल=०।७।३०।

चन्द्र—चन्द्र रवि की होरा में है। रवि चन्द्र का सम है। अतः चन्द्र का होराबल=०।७।३०।

मङ्गल—मङ्गल चन्द्र की होरा में हैं। चन्द्र मङ्गल का सम है। अतः मङ्गल का होरा बल = ०।७।३०।

बुध—बुध चन्द्र की होरा में है। चन्द्र बुध का सम है। अतः बुध का होराबल=०।७।३०।

गुरु—गुरु सूर्य की होरा में है। सूर्य गुरु का सम है। अतः गुरु का होराबल=०।७।३०।

शुक्र—शुक्र चन्द्र की होरा में है। चन्द्र शुक्र का अधिशत्रु है। अतः शुक्र का होरा बल=०।१।५२

शनि—शनि चन्द्र की होरा में है। चन्द्र शनि का सम है। अतः शनि का होरा बल=०।७।३०।

द्रेष्काणबल—

सूर्य—सूर्य शनि के द्रेष्काण में है। शनि सूर्य का सम है। अतः सूर्य का द्रेष्काणबल=०।७।३०।

चन्द्र—चन्द्र शनि के द्रेष्काण में है। शनि चन्द्र का मित्र है। अतः चन्द्र का द्रेष्काणबल=०।१५।०।

मङ्गल—मङ्गल गुरु के द्रेष्काण में है। गुरु मङ्गल का अधिमित्र है। अतः मङ्गल का द्रेष्काणबल=०।२२।३०।

बुध—बुध मङ्गल के द्रेष्काण में है। मङ्गल बुध का मित्र है। अतः बुध का द्रेष्काणबल=०।१५।० ।

गुरु—गुरु बुध के द्रेष्काण में है। बुध गुरु का अधिशत्रु है। अतः गुरु का द्रेष्काण बल=०।१।५२ ।

शुक्र—शुक्र बुध के द्रेष्काण में है। बुध शुक्र का अधिमित्र है। अतः शुक्र का द्रेष्काण बल=०।२२।३० ।

शनि—शनि मङ्गल के द्रेष्काण में है। मङ्गल शनि का सम है। अतः शनि का द्रेष्काण बल=०।७।३० ।

सप्तमांशबल—

सूर्य—सूर्य बुध के सप्तमांश में है। बुध सूर्य का मित्र है। अतः सूर्य का सप्तमांश बल=०।१५।० ।

चन्द्र—चन्द्र मङ्गल के सप्तमांश में है। मङ्गल चन्द्र का शत्रु है। अतः चन्द्र का सप्तमांशबल=०।३।४५ ।

मङ्गल—मङ्गल चन्द्र के सप्तमांश में है। चन्द्र मङ्गल का सम है। अतः मङ्गल का सप्तमांशबल=०।७।३०

बुध—बुध शनि के सप्तमांश में है। शनि बुध का शत्रु है। अतः बुध का सप्तमांश बल=०।३।४५

गुरु—गुरु मङ्गल के सप्तमांश में है। मंगल गुरु का अधिमित्र है। अतः गुरु का सप्तमांश बल=०।२२।३० ।

शुक्र—शुक्र मङ्गल के सप्तमांश में है। मङ्गल शुक्र का मित्र है। अतः शुक्र का सप्तमांश बल=०।१५।० ।

शनि—शनि अपनी राशि में है। अतः शनि का सप्तमांश बल=०।३०।०

नवमांशबल—

सूर्य—सूर्य शुक्र के नवमांश में है। शुक्र सूर्य का अधिशत्रु है। अतः सूर्य का नवमांशबल=०।१।५२

चन्द्र—चन्द्र अपनी राशि के नवमांश में है। अतः चन्द्र का नवमांश-बल=०।३०।०

मङ्गल—मङ्गल शुक्र के नवमांश में है। शुक्र मङ्गल का मित्र है। अतः मङ्गल का नवमांश बल=०।१५।०

बुध—बुध गुरु के नवमांश में है। गुरु बुध का शत्रु है। अतः बुध का नवमांश बल=०।३।४५

गुरु—गुरु शनि के नवमांश में है। शनि गुरु का शत्रु है। अतः गुरु का नवमांश बल=०।३।४५

शुक्र—शुक्र गुरु के नवमांश में है। गुरु शुक्र का शत्रु है। अतः शुक्र का नवमांशबल=०।३।४५

शनि—शनि गुरु के नवमांश में है। गुरु शनि का शत्रु है। अतः शनि का नवमांशबल=०।३।४५

द्वादशांशबल—

सूर्य—सूर्य शनि के द्वादशांश में है। शनि सूर्य का सम है। अतः सूर्य का द्वादशांश बल=०।७।३०।

चन्द्र—चन्द्र शनि के द्वादशांश में है। शनि चन्द्र का मित्र है। अतः चन्द्र का द्वादशांश बल=०।१५।०

मङ्गल—मङ्गल गुरु के द्वादशांश में है। गुरु मङ्गल का अधिमित्र है। अतः मङ्गल का द्वादशांश बल=०।२२।३०

बुध—बुध चन्द्र के द्वादशांश में है। चन्द्र बुध का सम है। अतः बुध का द्वादशांश बल=०।७।३०।

गुरु—गुरु बुध के द्वादशांश में है। बुध गुरु का अधिशत्रु है। अतः गुरु का द्वादशांश बल=०।१।५२।

शुक्र—शुक्र मङ्गल के द्वादशांश में है। मङ्गल शुक्र का मित्र है। अतः शुक्र का द्वादशांश बल=०।१५।०।

शनि—शनि चन्द्र के द्वादशांश में है। चन्द्र शनि का सम है। अतः शनि का द्वादशांश बल=०।७।३०

त्रिंशांशबल—

सूर्य—सूर्य गुरु के त्रिंशांश में हैं। गुरु सूर्य का सम है। अतः सूर्य का त्रिंशांश बल=०।७।३०

चन्द्र—चन्द्र अपनी राशि में है। अतः चन्द्र का त्रिंशांश बल=०।३०।०

मङ्गल—मङ्गल बुध के त्रिंशांश में है। बुध मङ्गल का सम है। अतः मङ्गल का त्रिंशांश बल=०।७।३०

बुध—बुध अपनी राशि के त्रिशांश में हैं। अतः बुध का त्रिशांश-बल=०।३०।० ।

गुरु—गुरु शनि के त्रिशांश में है। शनि गुरु का शत्रु है। अतः गुरु का त्रिशांश बल=०।३।४५ ।

शुक्र—शुक्र अपनी राशि के त्रिशांश में है। अतः शुक्र का त्रिशांश-बल=०।३०।० ।

शनि—शनि रवि के त्रिशांश में है। रवि शनि का सम है। अतः शनि का त्रिशांश बल=०।७।३० ।

ग्रहाणां सप्तवर्गीबलचक्रम्

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	ग्रह
०।१५। ०	०।४५।०	०।३०।०	०।२२।३०	०। ३।४५	०।२२।३०	०। ७।३०	गृहबल
०। ७।३०	०। ७।३०	०। ७।३०	०। ७।३०	०। ७।३०	०। १।५२	०। ७।३०	होराबल
०। ७।३०	०।१५।०	०।२२।३०	०।१५।०	०। १।५२	०।२२।३०	०। ७।३०	द्रेष्काणबल
०।१५। ०	०। ३।४५	०। ७।३०	०। ३।४५	०।२२।३०	०।१५। ०	०।३०। ०	सप्तमांशबल
०। १।५२	०।३०।०	०।१५।०	०। ३।४५	०। ३।४५	०। ३।४५	०। ३।४५	नवमांशबल
०। ७।३०	०।१५।०	०।२२।३०	०। ७।३०	०। १।५२	०।१५। ०	०। ७।३०	द्वादशांशबल
०। ७।३०	०।३०।०	०। ७।३०	०।३०। ०	०। ३।४५	०।३०। ०	०। ७।३०	त्रिंशांशबल
१। १।५२	२।२६।१५	१।५२।३०	१।३०। ०	०।४४।५६	१।५०।३७	१।११।१५	बलयोग

अथ युग्मायुग्मराशिनवांशबलं केन्द्रादिबलमाह—

शुक्रेन्दू समभांशके हि विषमेऽन्ये दद्युरङ्घ्रिं बलं
केन्द्राद्येषु च रूपकार्धचरणान् यच्छन्ति खेटाः क्रमात् ।
स्त्रीखेटौ चरमे नराः प्रथमके क्लीबौ च मध्ये तथा
द्रेष्काणे वितरन्ति पादमुदितं स्यात् स्थानवीर्यं त्विदम् ॥६॥

अन्वयः—शुक्रेन्दू समभांशके अङ्घ्रिं बलम्, अन्ये विषमे स्थिता अङ्घ्रिबलं दद्युः । केन्द्राद्येषु खेटाः क्रमात् रूपकार्धचरणान् यच्छन्ति । स्त्रीखेटौ चरमे नराः प्रथमके क्लीबौ च मध्ये द्रेष्काणे पादं बलं वितरन्ति । इदमुदितं स्थानवीर्यं स्यात् ।

व्याख्या—शुक्रेन्दू समभांशके=समराशौ समनवांशे वा स्थितौ तदा अङ्घ्रिं=एकचरणबलं दद्याताम्, यदि समराशौ समनवांशे च स्थितौ तदा पादद्वयमितं बलमन्यथा शून्यं बलं दद्यातामित्यर्थत एव सिद्धं भवति । तथान्ये=रविभौमबुधगुरुशनयः विषमे=विषमराशौ विषमनवांशे वा स्थिताः सन्तस्तदा अङ्घ्रिं=एकचरणंबलं दद्युः, यदि च विषमराशौ विषमनवांशे च उभयत्र स्थितास्तदा पादद्वयमितं बलमन्यथा शून्यं बलं दद्युरिति शेषः ।

अथ केन्द्रादिबलम्—केन्द्राद्येषु=केन्द्रपणफरापोक्लिमेषु स्थिताः खेटाः=सर्वे ग्रहाः क्रमेण रूपकार्धचरणान् बलानि यच्छन्ति । अर्थात् केन्द्रस्था ग्रहाः रूपतुल्यम्, पणफरस्था ग्रहा अर्धम्, आपोक्लिमस्था च ग्रहाश्चरणमेकं बलं ददतीत्यर्थः ।

अथ द्रेष्काणबलम्—स्त्रीखेटौ=चन्द्रशुक्रौ चरमे=तृतीयद्रेष्काणे, नराः=पुरुषग्रहाः रविकुजगुरवः प्रथमके=प्रथमद्रेष्काणे तथा क्लीबौ=नपुंसकौ=शनिबुधौ मध्ये=द्वितीयद्रेष्काणे पादं=एकचरणमितं बलं वितरन्ति=ददतीति । इदं=पञ्चधोदितं स्थानवीर्यं=स्थानबलं स्यादिति ।

उप०—समराशीनां स्त्रीराशिसंज्ञा, चन्द्रशुक्रयोश्चापि स्त्रीग्रहेति संज्ञा । अतो एतयोः समभांशके तथाऽन्येषां पुरुषग्रहत्वात् विषमे पुरुषराशावेव बलप्रदत्वं यदुक्तं तत्तु समुचितमेव ।

केन्द्रादिबलज्ञानार्थं गर्गवचनं यथा—

"केन्द्रस्थः पूर्णबलो मध्यबलः पणफरस्थितस्तद्वत्।
आपोक्लिमगः प्रोक्तो हीनबलः खेचरो मुनिभिरिति॥"

अत एव केन्द्रस्थो ग्रहः पूर्णबलीत्वाद्रूपमितं बलम्, पणफरस्थो मध्यबलत्वादर्धम्, आपोक्लिमस्थो हीनबलत्वाच्चरणं बलं दद्दातुमर्हतीति समुचितमेव। अथ द्रेष्काणबलानयने युक्तिः—ग्रहास्तु पुंस्त्रीनपुंसकेति भेदात्त्रिधा सन्ति। तत्र पुरुषाणां प्रधानत्वात्प्रथमद्रेष्काणे, स्त्रीणां उत्तराधिकारत्वात्तृतीयद्रेष्काणे, नपुंसकानां तयोर्मध्ये स्थितित्वान्मध्यमद्रेष्काणे बलकथनं समुचितमेव। अत एव "स्त्रीखेटौ चरमे, नराः प्रथमके, क्लीबौ च मध्ये द्रेष्काणे पादमितं बलं वितरन्तीति यदुक्तं तत्साधुसङ्गच्छते।

हि० टी०—शुक्र और चन्द्र समराशि अथवा समराशि के नवमांश में रहने पर एकचरण बल देते है (समराशि एवं समराशि के नवमांश दोनों में रहे तो दो चरण बल और समराशि अथवा समराशि के नवमांश दोनों में से किसी में भी न रहे तो शून्य बल देते हैं। रवि, मङ्गल, बुध, गुरु और शनि विषम राशि के नवमांश में एकचरण बल देते हैं। यदि विषमराशि और विषमराशि के नवमांश दोनों में रहे तो दो चरण बल तथा दोनों में से किसी में न रहे तो शून्य बल देते हैं। केन्द्रादिबल में केन्द्र (१, ४, ७, १०) स्थित ग्रह १ तुल्य पूर्णबल (चार चरण); पणफरस्थित (२, ५, ८, ११) ग्रह दो चरण और आपोक्लिमस्थ (३, ६, ९, १२) ग्रह १ चरण बल देते हैं। स्त्री ग्रह शुक्र और चन्द्रमा तृतीय द्रेष्काण में, पुरुषग्रह रवि, भौम, गुरु प्रथम द्रेष्काण तथा नपुंसक ग्रह शनि एवं बुध मध्य (द्वितीय) द्रेष्काण में एक-एक चरण बल देते हैं। ये स्थानबल कहे गये हैं, (उच्चबल, सप्तवर्गजबल, युग्मायुग्मभांशबल, केन्द्रादि बल, द्रेष्काणबल) ये पाँच प्रकार के स्थान बल हैं)।

उदा०—युग्मायुग्मभांशबलसाधन—

सूर्य —सूर्य समराशि एवं समराशि के नवमांश में है। अतः सूर्य का नवमांशबल शून्य होगा।

चन्द्र —चन्द्र समराशि एवं समराशि के नवमांश दोनों में है। अतः चन्द्र का नवमांशबल=०।३०।० होगा।

मङ्गल —मङ्गल समराशि एवं विषमराशि के नवमांश में है। अतः मङ्गल का नवमांश बल=०।१५।० होगा।

बुध —बुध विषमराशि एवं विषमराशि के नवमांश दोनों में है। अतः बुध का नवमांशबल=०।३०।० होगा।

गुरु —गुरु विषमराशि एवं समराशि के नवमांश में है। अतः गुरु का नवमांश बल=०।१५।० होगा।

शुक्र —शुक्र समराशि एवं समराशि के नवमांश दोनों में है। अतः शुक्र का नवमांश बल=०।३०।० होगा।

शनि —शनि विषमराशि एवं विषमराशि के नवमांश दोनों में है। अतः शनि का नवमांश बल=०।३०।० होगा।

अथ युग्मायुग्मभांशबलचक्रम्

सू.	च.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
०।०।०	०।३०।०	०।१५।०	०।३०।०	०।१५।०	०।३०।०	०।३०।०

केन्द्रादिबलसाधन—

सूर्य, शुक्र—सूर्य और शुक्र आपोक्लिम में हैं। अतः इनका बल एक चरण (०।१५।०) होगा।

चन्द्र, मङ्गल, बुध, गुरु, शनि—ये ग्रह पणफर में स्थित हैं। अतः इनका दो चरण बल (०।३०।०) होगा।

अथ केन्द्रादिबलचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
०।१५।०	०।३०।०	०।३०।०	०।३०।०	०.३०।०	०।१५।०	०।३०।०

द्रेष्काणबलसाधन—

सूर्य —सूर्य पुरुषग्रह द्वितीयद्रेष्काण में है। अतः सूर्य का बल=०।०।० होगा।

चन्द्र —चन्द्र स्त्रीग्रह तृतीय द्रेष्काण में है। अतः चन्द्र का द्रेष्काण बल=०।१५।० होगा।

मङ्गल —मङ्गल पुरुषग्रह द्वितीयद्रेष्काण में है। अतः मङ्गल का द्रेष्काण-बल शून्य होगा।

बुध —बुध नपुंसक ग्रह तृतीय द्रेष्काण में है। अतः बुध का द्रेष्काण-बल शून्य होगा।

गुरु —गुरु पुरुषग्रह द्वितीय द्रेष्काण में है। अतः गुरु का द्रेष्काणबल शून्य होगा।

शुक्र —स्त्रीग्रह शुक्र प्रथम द्रेष्काण में है। अतः शुक्र का द्रेष्काणबल शून्य होगा।

शनि —शनि नपुंसक ग्रह तृतीय द्रेष्काण में है। अतः शनि का द्रेष्काण बल शून्य होगा।

अथ द्रेष्काणबलचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
०।०।०	०।१५।०	०।०।०	०।०।०	०।०।०	०।०।०	०।०।०

ग्रहाणां दिग्बलं कालबलं चाह—

मन्दाल्लग्नमिनात्कुजाच्च हिबुकं शोध्यं विधोर्भार्गवात्
माध्यं ज्ञाद् गुरुतोऽस्तमत्र रसभात्पुष्टं त्यजेच्चक्रतः।
दिग्वीर्यं रसहृत्त्वथो समयजं रूपं सदा स्याद्विद-
स्त्रिंशद्भक्तनतोन्नते शशिकुजार्कीणां परेषां बले॥ ७॥

अन्वयः—मन्दात् लग्नम्, इनात् कुजाच्च हिबुकं, विधोः भार्गवाच्च माध्यम्, ज्ञात् गुरुतश्चास्तं शोध्यम्, तद्रसभात् पुष्टं चक्रतस्त्यजेत्। तद्रसहृत् दिग्वीर्यं स्यात्। विदः समयजं बलं सदा रूपम्। त्रिंशद्भक्त-नतोन्नते क्रमेण परेषां शशिकुजार्कीणां बले भवतः।

व्याख्या—मन्दात्=शनैश्चरात् लग्नम्, इनात्=सूर्यात्, कुजात् =भौमात् च हिबुकं=चतुर्थलग्नम्, विधोः=चन्द्रात्, भार्गवात्= शुक्रात् च माध्यम्=दशमलग्नम्; ज्ञात्=बुधात्, गुरुतश्चास्तं=सप्तम-लग्नं शोध्यम्, तद्रसभात्पुष्टं=तत्षड्राशितोऽधिकं चेत्तदा चक्रतः= द्वादशराशिभ्यस्त्यजेत्। तद्रसहृत्=षड्भक्त दिग्वीर्यं=दिग्बलं स्यात्।

अथ कालबलम्—विदो = बुधस्य, समयजं बलं = कालबलं सदा = सर्वस्मिन् काले रूपं = पूर्णमेकमितं स्यात्। त्रिंशद्भक्तनतोन्नते क्रमेण शशिकुजार्कीणां परेषां च बले भवतः। अर्थात् त्रिंशद्भक्तनतं शशिकुजार्कीणां बलम्, त्रिंशद्भक्तोन्नतं रविगुरुशुक्राणां बलं भवतीति।

उप०—यो हि ग्रहो यस्यां दिशि बलवान् भवति, तत्सम्बन्धिबलं दिग्बलमित्युच्यते। ग्रहाणां दिग्विभागस्तु राशिचक्रानुरोधेन विद्यते। उक्तञ्च भास्कराचार्येण—"यत्र लग्नमपमण्डलं कुजे तद् गृहाद्यमिह लग्नमुच्यते। प्राचि पश्चिमकुजेऽस्तलग्नकं मध्यलग्नमिति दक्षिणोत्तरे" एतेन लग्नं पूर्वस्यां दिशि, सप्तमलग्नं प्रतीच्यां दिशि, चतुर्थलग्नमुत्तरस्यां दिशि, दशमलग्नञ्च दक्षिणदिशीति दृश्यते। ग्रहाणां दिग्विभागे वराहमिहिराचार्येणोक्तम्। तद्यथा—

"दिक्षु बुधाङ्गिरसौ रविभौमौ सूर्यसुतः सितशीतकरौ च"।

अनेन ग्रहाणां दिक्सम्बन्धेन बलोपचयापचयौ सिद्धौ। तत्र यथोक्तदिशि ग्रहः पूर्णबली भवति। ततश्च यथा-यथा ग्रहो दूरे याति तथा-तथा बलस्यापचयः, परमे दूरे संजाते ग्रहे बलाभाव इति युक्त्या सिध्यति। ग्रहाणां परमदूरत्वं तु षड्भान्तर एव भवितुमर्हति। यथा-शनेः प्रतीच्यां (सप्तमलग्ने) पूर्णबलम्, ततः क्रमापचयेन पूर्वस्यां (प्रथमलग्ने) बलाभावः, ततश्च क्रमोपचयेन प्रतीच्यां (सप्तमलग्ने) पुनः पूर्णं बलं भवति। अतो यथा-यथा बलाभावस्थानग्रहयोरन्तरमधिकं तथा-तथा बलाधिक्यं, यथा-यथा च बलाभावस्थानग्रहयोरन्तरमल्पं तथा २ बलस्याल्पत्वमिति सिध्यति। अतोऽनुपातेनेष्टदिग्बलानयनं युक्तियुक्तमेव। तद्यथा—यदि लग्नशन्योः परमान्तरेण षड्राशिमितेन पूर्णं रूपतुल्यं बलं लभ्यते तदेष्टलग्नशन्योरन्तरेण किमितीष्टस्थाने स्थिते शनौ शनेर्दिग्बलम्—

$\frac{१ \times (श - ल)}{६}$ । एवं सर्वेषां ग्रहाणां बलानयनं युक्तियुक्तमेव। तत्र स्थानग्रहयोरन्तरं षड्राशितोऽधिकं तदा षड्भाल्पान्तरग्रहणार्थं चक्रतस्त्यजेदिति कथनमुचितमेव।

अथकालबलोपपत्तिः—

"निशि शशिकुजसौराः सर्वदा ज्ञोऽह्नि चान्ये" इति वराहमिहिरा-

चार्यवचनप्रामाण्यात् बुधस्य सर्वदा रूप-(१) तुल्यं बलं भवति। शशि-कुजार्कीणां रात्रौ बलवत्त्वान्मध्यरात्रौ पूर्णं बलं रूपतुल्यं तत्र च नतं पूर्णं त्रिंशद्घटिकातुल्यम्। एतेषां दिने निर्बलत्वान्मध्याह्ने बलाभावस्तत्र नतमपि शून्यमतो नतवशेनैव बलोपचयापचयौ सिद्धौ। अतोऽनुपातेन यदि त्रिंशत्तुल्ये परमनते पूर्णं बलं रूपमितं तदेष्टनते किमितीष्टनते ग्रहाणां बलम् $= \frac{१ \times \text{नतघटी}}{३०} =$ शशिकुजार्कीणां बलम्। एवं रविगुरु-शुक्राणां दिने बलित्वान्मध्याह्ने पूर्णं बलं तत्रोन्नतं पूर्णं त्रिंशत्तुल्यम्, रात्रौ च निर्बलत्वान्मध्यरात्रौ बलाभावस्तत्रोन्नताभावोऽतोऽनुपातो यदि त्रिंशतुल्यपरमोन्नते रूप-(१) मितं बलं लभ्यते तदेष्टोनते किमिति रविगुरु-शुक्राणां कालबलम् $= \frac{१ \times \text{उन्नतघ०}}{३०}$ इत्युपपद्यते।

हि० टी० – स्पष्टशनि में लग्न, सूर्य और मङ्गल में चतुर्थ (सुख) भाव, चन्द्र और शुक्र में दशमभाव, बुध और गुरु में सप्तम भाव को घटावे। शेष ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटाकर शेष में, अन्यथा ६ राशि से अल्प हो तो उसी में ६ का भाग देने से लब्धि तुल्य ग्रहों का दिग्बल होता है। बुध का कालबल सर्वदा रूप (१) होता है। नतघटी में ३० का भाग देने से लब्धि चन्द्र मङ्गल, एवं शनि का कालबल तथा उन्नतघटी में ३० का भाग देने से लब्धि रवि, गुरु एवं शुक्र का कालबल होता है।

उदा०—दिग्बल—

शनि – लग्न = ४।२८।१४।२ – ६।१४।१२।३० = १०।१४।१।३२

$$\frac{१०।१४।१।३२ - ६ \text{ रा०}}{६} = \frac{४।१४।१।३२}{६} = ०।२२।२०$$

शनि का दिग्बल = ०।२२।२०

सूर्य– चतुर्थभाव = ५।१४।४३।२५ – ९।१६।४१।२६ = ७।२८।१।५९

$$\frac{७।२८।१।५९ - ६ \text{ रा०}}{६} = \frac{१।२८।१।५९}{६} = ०।९।४०$$

सूर्य का दिग्बल = ०।९।४०

मङ्गल—चतुर्थभाव = ७।११।१४।२४ – ९।१६।४१।२६ = ९।२४।३२।५८

$$\frac{\text{६।२४।३२।५८ − ६ रा०}}{\text{६}} = \frac{\text{३।२४।३२।५८}}{\text{६}} = \text{०।१६।५}$$

मंगल का दिग्बल = ०।१६।५

चन्द्र— दशमभाव = ११२१।५५।३६ − ३।१६।४१।२६ = १०।५।१४।१०

$$\frac{\text{१०।५।१४।१० − ६ रा०}}{\text{६}} = \frac{\text{४।५।१४।१०}}{\text{६}} = \text{०।२०।५२}$$

चन्द्र का दिग्बल = ०।२०।५२

शुक्र— दशमभाव = ५।७।१७।४ − ३।१६।४१।२६ = १।२०।३५।३८

१।२०।३५।३८ ÷ ६ = ०।८।२६

शुक्र का दिग्बल = ०।८।२६

बुध— सप्तमभाव = ४।२६।२२।१२ − ०।१४।१२।३० = ४।१५।६।४२

४।१५।६।४२ ÷ ६ = ०।२२।३२

बुध का दिग्बल = ०।२२।३२

गुरु— सप्तमभाव = १०।१०।३८।३८ − ०।१४।१२।३० = ६।२६।२६।८

$$\frac{\text{६।२६।२६।८ − ६ रा०}}{\text{६}} = \frac{\text{३।२६।२६।८}}{\text{६}} = \text{०।१६।२४}$$

गुरु का दिग्बल = ०।१६।२४

दिग्बलचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०
०।६।४०	०।२०।५२	०।१६।५	०।२२।३२	०।१६।२४	०।८।२६	०।२२।२०

कालबलसाधन (नतोन्नतबल)—

$$\text{चन्द्र, मङ्गल, शनि का कालबल} = \frac{\text{नतघटी}}{\text{३०}}$$

$$\frac{\text{६।११।५३}}{\text{३०}} = \text{०।१८।२४}$$

$$\text{रवि, गुरु, शुक्र का कालबल} = \frac{\text{उन्नतघटी}}{\text{३०}}$$

$$\frac{\text{२०।४८।७}}{\text{३०}} = \text{०।४१।२६}$$

कालबलचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
०।४१।३६	०।१८।२४	०।१८।२४	१।०।०	०।४१।३६	०।४१।३६	०।१८।२४

अथ पक्षबलं त्र्यंशबलं वर्षेशादिबलञ्चाह—

शुक्लेऽन्त्ये तिथिहृद्गतैष्यतिथयो वीर्यं सतां भूच्युतं
पापानां द्विगुणं विधोरिदमथाह्नस्त्र्यंशकेषु क्रमात्।
सौम्यार्कार्कभुवां निशः शशिसितारारणां च रूपं सदे-
ज्यस्याथाङ्घ्रिचयाद्बली किल समामासद्युहोरेश्वरः ॥ ८ ॥

अन्वयः—शुक्ले अन्त्ये तिथिहृद् गतैष्यतिथयः सतां वीर्यं स्यात्। सतां वीर्यं भूच्युतं पापानां वीर्यं स्यात्। विधोः इदं वीर्यं द्विगुणं स्यात्। अह्नः त्र्यंशकेषु क्रमात् सौम्यार्कार्कभुवां रूपं वीर्यम्, निशः त्र्यंशकेषु क्रमात् शशिसितारारणां च रूपं बलं स्यात्। इज्यस्य सदा रूपं वीर्यम्। अथ समामासद्युहोरेश्वरः क्रमादंघ्रिचयाद् किल बली स्यात्।

व्याख्या—ग्रहाणां पक्षबलम्—शुक्ले = शुक्लपक्षे, अन्त्ये = कृष्णपक्षे च क्रमेण तिथिहृद्गतैष्यतिथयः = शुक्ले तिथिभिः पञ्चदशभिर्हृता गततिथयः कृष्णे च पञ्चदशभक्ता एष्यतिथयः स्यादित्यर्थः। सतां = शुभग्रहाणां वीर्यम् = बलम् = पक्षबलं स्यात्। तन् शुभबलं भूच्युतं = रूपाद्विशुद्धम्, पापानां = पापग्रहाणां पक्षबलं स्यात्। विधोः चन्द्रस्य इदं पक्षबलं द्विगुणं स्यादिति।

अथ दिनरात्रित्रिभागबलम्—अह्नो = दिवसस्य, त्र्यंशकेषु त्रिभागेषु क्रमात् सौम्यार्कार्कभुवां प्रथमत्र्यंशे सौम्यस्य, द्वितीयत्र्यंशेऽर्कस्य, तृतीयत्र्यंशेऽर्कभुवः रूपं बलं स्यात्। तथा निशः = रात्रेस्त्र्यंशकेषु क्रमात् शशिसितारारणां = चन्द्रशुक्रकुजानां रूपं बलं स्यात्। इज्यस्य = गुरोः सदा रूपं बलं स्यात्।

अथ वर्षेशादिबलम्—समामासद्युहोरेश्वरः = वर्षमासदिनहोराणामधिपः क्रमादङ्घ्रिचयात् = चरणवृद्धितो बली स्यात्। अर्थात् वर्षेश्वरस्यैकचरणतुल्यं (०।१५), मासेश्वरस्य चरणद्वयं (०।३०), दिनेश्वरस्य चरणत्रयं (०।४५), होरेश्वरस्य चरणचतुष्टयं (१।०) बलं भवतीति।

उप०—शुक्लपक्षे शुभग्रहाः बलिनः पापग्रहाश्च निर्बलाः, कृष्णपक्षे पापग्रहा बलिनः शुभाश्च निर्बलाः सन्ति। उक्तञ्च वराहमिहिराचार्येण—

"बहुलसितगमाः स्युः क्रूरसौम्याः क्रमेण" इति। तत्र शुक्लपक्षे चन्द्रस्य शुक्लवृद्ध्या शुभग्रहाणां बलवृद्धिः, पापग्रहाणाञ्च बलक्षयः। एवं पूर्णिमान्ते चन्द्रशुक्लस्य परमत्वात् शुभग्रहाणां बलं परमं रूपमितम्, पापग्रहाणां बलाभावस्तत्र गतशुक्लतिथयः पञ्चदश, तथैष्यकृष्णतिथयः पञ्चदश इति। अतः शुक्ले गततिथिवृद्ध्या, कृष्णे च एष्य तिथिवृद्ध्या शुभग्रहाणां बलवृद्धिः सिध्यति। अतोऽनुपातवशेन शुक्लपक्षे शुभग्रहाणां बलम् $=\frac{१ \times \text{ग० ति०}}{१५}$। एवं कृष्णपक्षे शुभबलम् $=$

$$\frac{१ \times \text{ए० ति०}}{१५} \text{ ।}$$

पापग्रहाणां तु पूर्वोक्तानुसारेण शुक्ले एष्यतिथिवृद्ध्या कृष्णे च गततिथिवृद्ध्या बलवृद्धिस्ततोऽनुपातेन शुक्लपक्षे पापग्रहाणां बलम् $=$

$$\frac{१ \times \text{ए० ति०}}{१५} = \frac{१५ - \text{ग० ति०}}{१५} = १ - \frac{\text{ग० ति०}}{१५} \text{ ।}$$

एवं कृष्णपक्षे पापग्रहाणां बलम् $=$

$$\frac{१ \times \text{ग० ति०}}{१५} = \frac{१५ - \text{ए० ति०}}{१५} = १ - \frac{\text{ए० ति०}}{१५}$$

एतेन शुभबलोनं रूपं पापबलं सिद्धमतो "भूच्युतं पापानां" इत्युपपद्यते। तथा चन्द्रस्य यावदेव पक्षबलं तावदेव चेष्टाबलमपि भवति। अत एव चन्द्रस्य पक्षबलं द्विगुणं विधेयम्। अतो "द्विगुणं विधोरिदम्" इति सिध्यति।

"निशामुखे शीतरुचिर्बलीयान् भृगुर्निशीथे कुसुतो निशान्ते।
प्रातर्बुधो मध्यदिने दिनेशः शनिर्दिनान्ते धिषणः सदैव"॥

इति होरामकरन्दोक्तमेव दिनरात्रित्र्यंशबलोपपत्तौ प्रमाणम्। अथ च वर्षेशमासेशदिनेशहोरेशानां मध्ये वर्षाधिपस्य सर्वापेक्षयाऽधिकेन कालेनावृत्तिर्भवति, ततोऽल्पेन कालेन मासाधिपस्य, ततोऽप्यल्पेन कालेन दिवसाधिपस्य ततोऽप्यल्पेन कालेन होरेश्वरस्य पुनः पुनरावृत्तिर्भवति। अत एव आवृत्त्याधिक्यवशादेव पादवृद्ध्या वर्षेशादीनां बलानि पठितानि सन्तीति।

हि० टी०—शुक्लपक्ष में गततिथि को तथा कृष्णपक्ष में ऐष्य तिथि को १५ से भाग देनेपर लब्धि शुभग्रहों का पक्षबल होता है। शुभग्रह के पक्षबल को एक में घटाने पर पापग्रहों का पक्षबल होता है। चन्द्रमा के पक्षबल को द्विगुणित करना चाहिए। त्र्यंशबल—दिन के प्रथमत्र्यंश में बुध का, द्वितीयत्र्यंश में सूर्य का और तृतीयत्र्यंश में शनि का रूप (१) बल होता है। इसी प्रकार रात्रि के प्रथयत्र्यंश में चन्द्रमा का, द्वितीयत्र्यंश में शुक्र का तथा तृतीयत्र्यंश में मङ्गल का रूप (१) तुल्य बल होता है। गुरु का सदा रूप (१) बल होता है। वर्षेश, मासेश, दिनेश एवं होरेश क्रमशः चरणवृद्धि से बली होते हैं। अर्थात् वर्षेश का बल १ चरण (०।१५।०), मासेश का बल २ चरण (०।३०।०), दिनेश का बल ३ चरण (०।४५।०) तथा होरेश का बल ४ चरण (१।०।०) होता है।

उदा०—पक्षबलसाधन—

कृष्णपक्ष की षष्ठी तिथि का जन्म होने से ऐष्य तिथि पक्षबल साधन में ग्रहण होगी। जन्म के दिन गततिथि घट्यादि = ३९।३।७।

१५ तिथि—५।३९।३।० = ९।२०।५७।० = ऐष्य तिथि

९।२०।५७ ÷ १५ = ०।३७।२४ = शुभग्रहों का पक्षबल

१ – ०।३७।२४ = ०।२२।३६ = पापग्रहों का पक्षबल

०।३७।२४ × २ = १।१४।४८ = चन्द्रमा का पक्षबल

अथ पक्षबलचक्रम्

सू॰	च॰	मं॰	बु॰	बृ.	शु.	श.
०।२२।३६	१।१४।४८	०।२२।३६	०।३७।२४	०।३७।२४	०।३७।२४	०।२२।३६

सूर्यक्रूरग्रह, चन्द्र, गुरु, और शुक्र शुभग्रह तथा मङ्गल एवं शनि पापग्रह हैं। बुध शुभग्रह के साथ होने पर शुभग्रह तथा पापग्रह के साथ होने पर पापग्रह होता है।

त्र्यंशबलसाधन—

दिन के प्रथमत्र्यंश में जन्म होने से बुध का त्र्यंशबल = १।०।०। गुरु का सदा बल (१) होता है। अतः गुरु का त्र्यंशबल = १।०।० होगा।

अथ त्र्यंशबलचक्रम्

सू.	च	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
०।०।०	०।०।०	०।०।०	१।०।०	१।०।०	०।०।०	०।०।०

वर्षमासदिनहोरापतिबलसाधन—

मासपति एवं वर्षपति साधन हेतु ग्रन्थान्तरों में विधिनिर्दिष्ट है। यथा—

मासाब्ददिनसंख्याप्तं द्वित्रिघ्नं रूपसंयुतम्।
सप्तोद्धृतावशेषौ तु विज्ञेयौ मासवर्षपौ ॥

सूर्यसिद्धान्त

अहर्गण को दो स्थानों पर रख एक स्थान पर ३० से तथा दूसरे स्थान पर ३६० से भाग देना चाहिये। भाग देने पर जो पृथक् पृथक् लब्धि हो उसे ग्रहण कर शेष का त्याग करें। प्रथम स्थान पर जो लब्धि हो उसे दो से गुणा कर गुणनफल में १ जोड़कर योग फल में ७ का भाग देने से शेष तुल्य रव्यादि गणना से मासपति होते हैं। अहर्गण में ३६० का भाग देने पर जो लब्धि हो; उसमें ३ से गुणाकर १ जोड़कर योगफल में ७ का भाग देने से एकादिशेष में रव्यादि गणना से वर्षपति होते हैं। यथा—

जन्मकालिक अहर्गण = १८४५०६२

$$\text{मासेश} = \frac{१८४५०६२}{३०} = ६१५०३ \text{ लब्धि, शेष} = २$$

$$\frac{\{(६१५०३ \times २) + १\}}{७} = \frac{१२३००७}{७}$$

लब्धिः = १७५७२, शेष = ३। ३ शेष होने से मंगल हुआ। अतः मासेश मङ्गल हुआ।

$$\text{वर्षेश} = \frac{१८४५०६२}{३६०} = ५१२५ \text{ लब्धि, शेष} = ६२$$

$$\frac{(५१२५ \times ३) + १}{७} = \frac{१५३७६}{७} \text{ शेष} = ४$$

एकादिशेष में रव्यादि गणना होने से बुध वर्षेश हुआ।

दिनपति—सूर्योदय काल में जिस ग्रह की होरा होती है वही ग्रह पूरे दिन का अधिपति कहा जाता है। प्रकृत उदाहरण में सोमवार का जन्म होने से दिनपति सोम ही होगा।

होरापति—सूर्योदय काल से १ घण्टा (२ घ० । ३० प०) तक जो दिन हो उसी ग्रह की होरा होती है। सूर्य, शुक्र, बुध, चन्द्र, शनि, गुरु एवं मंगल इसी क्रम से एक-एक घण्टा के अधिपति होते हैं। प्रकृत उदाहरण में सोमवार का जन्म होने से सूर्योदय से २ घटी ३० पल तक इष्टकाल रहे तो सोम होरापति, ५ घटी तक इष्टकाल रहे तो सोम से द्वितीय क्रम शनि का है, अतः शनि होरेश होगा। ५ घटी से ७ घटी ३० पल तक इष्टकाल हो तो शनि से द्वितीय ग्रह गुरु है। अतः प्रकृत उदाहरण का होरेश गुरु होगा।

सूर्य सिद्धान्त में वर्ष, मास, दिन एवं होरापति का सुगम विवेचन दिया है। यथा—

"मन्दादधः क्रमेण स्युश्चतुर्था दिवसाधिपाः।
वर्षाधिपतयस्तद्वत् तृतीयाः परिकीर्तिताः॥
ऊर्ध्वक्रमेण शशिनो मासानामधिपाः स्मृताः।
होरेशाः सूर्यतनयादधोऽधः क्रमशस्तथा"॥

ग्रहों की कक्षा अधोधः क्रम से शनि, गुरु, भौम, रवि, शुक्र, बुध और चन्द्र की है। शनि से अधोधः चतुर्थ कक्षावर्ती ग्रह वारपति, तृतीयकक्षावर्ती ग्रह वर्षपति चन्द्र से ऊर्ध्व कक्षावर्ती ग्रह क्रमपूर्वक मासपति, एवं शनि से अधः कक्षावर्ती ग्रह होरापति होते हैं।

अथवर्षादिबलचक्रम्

सू.	चं.	मं०	बु.	बृ.	शु.	श.
०	०	०	०	१	०	०
०	४५	३०	१५	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०

ग्रहों का कालबल = नतोन्नतबल + पक्षबल + त्र्यंशबल + वर्षेशादिबल

सूर्य = ०।४१।३६ + ०।२२।३६ + ०।०।० + ०। ०।० = १। ४।१२

चन्द्र = ०।१८।२४ + ०।३७।२४ + ०।०।० + ०।४५।० = १।४०।४८

भौम = ०।१८।२४ + ०।२२।३६ + ०।०।० + ०।३०।० = १।११। ०

बुध = १। ०। ० + ०।३७।२४ + १।०।० + ०।१५।० = २।५२।२४

गुरु = ०।४१।३६ + ०।३७।२४ + १।०।० + १। ०।० = ३।१९। ०

शुक्र = ०।४१।३६ + ०।३७।२४ + ०।०।० + ०। ०।० = १।१९। ०

शनि = ०।१८।२४ + ०।२२।३६ + ०।०।० + ०। ०।० = ०।४१। ०

अथायनबलम्—

सदा क्रान्तिभागैर्युता ज्ञस्य सिद्धाः
शनीन्द्वोर्युतोनाः क्रमाद्याम्यसौम्यैः।
विलोमं परेषां गजाम्भोधिभक्ता
भवेदायनं वीर्यमर्कस्य द्विघ्नम् ॥ ९ ॥

अन्वयः—ज्ञस्य सदा याम्यसौम्यैः क्रान्तिभागैः सिद्धाः युताः, गजाम्भोधिभक्ता आयनं वीर्यं "स्यात्"। शनीन्द्वोः याम्यसौम्यैः क्रान्तिभागैः क्रमाद्युतोनाः सिद्धाः गजाम्भोधिभक्ता आयनं बलं स्यात्। परेषां विलोमम्। अर्कस्यायनं बलं द्विघ्नं 'विधेयम्'।

व्याख्या—ज्ञस्य = बुधस्य सदा याम्यैः सौम्यैर्वा क्रान्तिभागैर्युताः सिद्धाः = चतुर्विंशतिः, गजाम्भोधिभक्ता = अष्टचत्वारिंशद्भक्ता, आयनं-वीर्यम् = अयनसम्बन्धि = बलं भवेत्। शनीन्द्वोः = शनिचन्द्रयोर्याम्य-सौम्यैः क्रमाद्युतोना (याम्यक्रान्तिभागैर्युताः सौम्यक्रान्तिभागैश्चोना) सिद्धाः, गजाम्भोधिभिः = अष्टचत्वारिंशता भक्ता आयनं वीर्यं स्यात्। परेषां = रविकुजगुरुशुक्राणाम्, विलोमम्। अर्थाद्याम्यक्रान्तिभागैरूनाः सौम्यक्रान्तिभागैर्युताः सिद्धा गजाम्भोधिभिर्भक्ता आयनं वीर्यं भवेत्। अर्कस्य = सूर्यस्य आयनं वीर्यं = अयनसम्बन्धिबलम्, द्विघ्नं = द्विगुणं कार्यमिति।

उप०—अयनसम्बन्धिबलमायनं बलम्। उक्तञ्च सारावल्याम्—

उत्तरमयनं प्राप्ताः शुक्रकुजार्कसुरमन्त्रिणो बलिनः।
याम्ये शशिरविपुत्रौ द्वयमपि शशिजः स्ववर्गसंस्थश्च॥

इति वचनेन बुधोऽयनद्वयेऽपि बलवान्, अतो बुधस्य परमोत्तरगमनान्मिथुनान्ते परमं बलं रूपमितं भवति, परमदक्षिणगमनाद्धनुरन्ते च परमं रूपमितं बलम्। तयोर्मध्ये गोलसन्धौ तु रूपार्धं बलं भवितुमर्हत्ययनद्वयेऽपि सबलत्वात्। ततः क्रान्तिवृद्धिवशेन बलस्य वृद्धिः, अतोऽनुपातो यदि परमक्रान्त्यंशैश्चतुर्विंशत्यंशै रूपार्धतुल्यं बलमुपचीयते तदेष्टक्रान्त्यंशैः किमितीष्टक्रान्तौ बलवृद्धिः—

$\frac{\frac{1}{2}\times \text{बु०क्रा०}}{२४} = \frac{\text{बु० क्रा०}}{४८}$ । एतद्युतं गोलसन्धिजबलं बुधस्यायनं बलम् $\frac{1}{2} + \frac{\text{बु० क्रा०}}{४८} = \frac{२४+\text{बु० क्रा०}}{४८}$ अत उपपन्नं बुधस्यायनबलम्।

शनिचन्द्रयोर्दक्षिणायने बलत्वात् परमदक्षिणक्रान्तौ परमं रूपमितं बलं परमोत्तरक्रान्तौ बलाभावस्तयोर्मध्ये गोलसन्धौ रूपार्धं बलं भवितुमर्हति। तेन दक्षिणक्रान्तिवृद्ध्या बलवृद्धिः सौम्यक्रान्तिवृद्ध्या च क्रमेण बलस्य ह्रानिरित्यतोऽनुपातेन दक्षिणक्रान्तिभागैर्बलमानीय गोलसन्धिजबले योज्यम्, उत्तरक्रान्तिभागैर्बलं प्रसाध्य गोलसन्धिजायनबला-($\frac{1}{2}$) दस्माद्विशोध्यम्। एवं शनिचन्द्रयोरायनबलानयनमुपपद्यते। अन्येषां (रविकुजगुरुशुक्राणां) उत्तरायणे बलित्वादुक्तयुक्त्या उत्तरक्रान्तिवृद्ध्या बलवृद्धिर्याम्यक्रान्तिवृद्ध्या च बलह्रासस्तेन उत्तरक्रान्त्यंशैःबलं प्रसाध्य गोलसन्धिजबले योज्यम्, दक्षिणक्रान्त्युत्पन्नं बलं गोलसन्धिजबलाद् रूपार्धमिताच्छोध्यमतो "विलोमं परेषाम्" इत्युपपद्यते। रवेरायनबलतुल्यमेव चेष्टाबलमपि भवत्यत आयनबलमेव द्विगुणमित्युक्तम्।

हि० टी०—बुध का उत्तर और दक्षिण क्रान्त्यंश जो हो उसको २४ में जोड़कर ४८ का भाग देने से बुध का आयनबल होता है। शनि और चन्द्रमा की दक्षिणा क्रान्ति को २४ में जोड़कर, और उत्तरक्रान्ति को २४ में घटाकर शेष में ४८ का भाग देने से आयनबल होता है। रवि, मङ्गल, गुरु एवं शुक्र की दक्षिणाक्रान्ति को २४ में घटाकर और उत्तरक्रान्ति को २४ में जोड़कर ४८

का भाग देने से आयनबल होता है। इस प्रकार साधित सूर्य के आयनबल को द्विगुणित करने से चेष्टाबल सहित आयनबल होता है।

उदा०—ग्रहों का क्रान्तिसाधन कर आयनबल साधन होता है। अतः क्रान्तिसाधन हेतु ग्रहलाघवीय विधि—

> चत्वारिंशदशीतिरद्रिकुभुवः क्वक्षेन्दवो भूधृती
> षट्खाक्षीणि जिनाश्विनोऽङ्ग विकृती खाब्ध्यश्विनः सायनात्।
> खेटाद् दोर्लवदिग्लवक्रमगतोऽङ्कोऽसौ तदूनागता-
> च्छेषघ्नाद् दशलब्धियुक् दशहृतोंऽशाद्योपमः स्यात् स्वदिक् ॥

४०।८०।११७।१५१।१८१।२०६।२२४।२३६।२४० ये क्रान्तिसाधन के लिये ९ अंक पठित हैं। सायनग्रह के भुजांश में १० का भाग देने से लब्धि तुल्य उक्त अंकों में गतांक होता है। गतांक एवं अग्रिमाङ्कों के अन्तर को भुज के शेषांशों से गुणाकर लब्धि का दशमांश गताङ्क सम्बन्धिफल में जोड़कर १० का भाग देने से लब्धि अंशादि सायनग्रह जिस गोल में हो उस दिशा की क्रान्ति होती है।

सूर्य का आयनबल—

५।१४°।४३′।२५″ + २३°।६।१० = ६।७।५२।३५, भुजांश = ७°।५२।३५

७°।५२′।३५″ ÷ १०, लब्धि = ० = गताङ्क

गताङ्क का फल = ०, ऐष्य अङ्क का फल = ४०, अन्तर = ४०

$$\frac{७।५२।३५ \times ४०}{१०} = ३१।३०।२०$$

$$\frac{० + ३१।३०।२०}{१०} = ३।९।२ = \text{सूर्य की दक्षिणाक्रान्ति}$$

$$\frac{२४ - ३।९।२}{४८} = \frac{२०।५०।५८}{४८} = ०।२६।४ \text{ सूर्य का आयनबल}$$

चन्द्र का आयनबल—

१।२१।५५।३६ + २३।९।१० = २।१५।४।४६ सायनचन्द्र

भुज = २।१५।४।४६, भुजांश = ७५।४।४६

$\frac{७५।४।४६}{१०}$ लब्धि = ७, फल = २२४, गत ऐष्यान्तर = १२

शेष = ५।४।४६। $\frac{५।४।४६ \times १२}{१०}$ = ६।५ ४३

$\frac{२२४ + ६।५।४३}{१०}$ = २३।०।३४ चन्द्र की उत्तराक्रान्ति

$\frac{२४ - २३।०।३४}{४८}$ = ०।१।१४=आयनबल

मङ्गल का आयनबल—

७।११।१४।२४ + २३।६।१० = ८।४।२३।३४

भुज = २।४।२३।३४=६४°।२३'।३४''=भुजांश

$\frac{६४।२३।३४}{१०}$ लब्धि ६, शेष = ४।२३।३४

६ अङ्क का फल = २०६, गतगम्यान्तर = १८

(४।२३।३४ × १८) ÷ १० = ७।५४।२५

(२०६ + ७।५४।२५) ÷ १०=२१।२३।२६ मङ्गल की दक्षिणाक्रान्ति

{ २४ – (२१।२३।२६) } ÷ ४८ = ०।३।१६ आयनबल

बुध का आयनबल—

४।२६।२२।१२ + २३।६।१० = ५।२२।३१।२२ सायनबुध

७।२८।३८ = बुध का भुजांश

७।२८।३८ ÷ १०, ल० = ०, शेष = ७।२८।३८ गतगम्यान्तर =४०

(७।२८।३८ × ४०) ÷ १० = २६।५४।३२

(० + २६।५४।३२) ÷ १० = २।५६।२७ बुध की उत्तराक्रान्ति

(२४ + २।५६।२७) ÷ ४८ = ०।३३।४४ बुध का आयनबल

गुरु का आयनबल—

१०।१०।३८।३८ + २३।६।१० = ११।३।४७।४८ सायनगुरु

भुजांश २६।१२।१२ ÷ १०, लब्धि = २, शेष = ६।१२।१२

२ अङ्क का फल = ८०, अन्तर = ३७

{ (६।१२।१२) × ३७ } ÷ १० = २२।५७।८

$$\frac{८० + २२।५७।८}{१०} = १०।१७।४३$$ गुरु की दक्षिणाक्रान्ति

(२४ – १०।१७।४३) ÷ ४८ = ०।१७।८ गुरु का आयनवल

शुक्र का आयनवल—

५।७।१७।४ + २३।६।१० = ६।०।२६।१४ सायनशुक्र

भुजांश ०।२६।१४ ÷ १० लब्धि = ०, शेष = ०।२६।१४

लब्धि का फल = ०, अन्तर = ४०

$$\frac{(०।२६।१४) \times ४०}{१०} = १।४४।५६$$

$$\frac{० + १।४४।५६}{१०} = ०।१०।३०$$ शुक्र की दक्षिणाक्रान्ति

$$\frac{२४ - ०।१०।३०}{४८} = \frac{२३।४९।३०}{४८} = ०।२९।४७$$

शुक्र का आयनबल

शनि का आयनवल—

४।२८।१४।२ + २३।६।१० = ५।२१।२३।१२

$$\frac{\text{भुजांश } ८।३६।४८}{१०}$$, लब्धि = ०, शेष = ८।३६।४८

लब्धि का फल = ०, अन्तर = ४०

(८।३६।४८ × ४०) ÷ १० = ३४।२७।१२

(० + ३४।२७।१२) ÷ १० = ३।२६।४३ शनि की उत्तराक्रान्ति

(२४ – ३।२६।४३) ÷ ४८ = ०।२५।४२ शनि का आयनबल

अथ आयनबलचक्रम् –

सू.	च.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
०।२६।४	०।१।१४	०।३।१६	०।३३।४४	१०।१७।८	०।२९।४७	०।२५।४२

ग्रहाणां चेष्टाबलं नैसर्गिकबलञ्च—

मध्यस्पष्टयुतेर्दलोनितचलं चेष्टाख्यकेन्द्रं कुजात्

स्याच्चेत्तद्भगणाच्च्युतं षडधिकं षड्हृच्च चेष्टाबलम् ।

स्यादेकोत्तररूपमद्रिविहृतं नैसर्गिकं स्याद्बलम्
मन्दारज्ञसुरेज्यशुक्रशशभृत्तीक्ष्णद्युतीनां क्रमात् ॥ १० ॥

अन्वयः—मध्यस्पष्टयुतेर्दलोनितचलं कुजात् चेष्टाख्यकेन्द्रं स्यात्। तत् चेष्टाकेन्द्रं षडधिकं चेत् तदा भगणाच्च्युतं षड्हृत् चेष्टाबलं स्यात्। एकोत्तरं रूपं अद्रिविहृतं क्रमात् मन्दारज्ञसुरेज्यशुक्रशशभृत्तीक्ष्णद्युतीनां नैसर्गिकं बलं स्यात्।

व्याख्या—मध्यस्पष्टयुतेर्दलोनितचलं = मध्यस्पष्टग्रहयोगस्यार्धमूनितं चलं = शीघ्रोच्चं, कुजात् = कुजमारभ्य चेष्टाख्यकेन्द्रं स्यात्। तत् चेष्टाकेन्द्रं षडधिकम् = षड्राशिभ्योऽधिकं तदा भगणाद् = द्वादशराशितश्च्युतं = शुद्धं षड्हृत् चेष्टाबलं स्यात्। एकोत्तरं रूपं अद्रिविहृतं = सप्तभिर्भक्तं क्रमात् मन्दारज्ञसुरेज्यशुक्रशशभृत्तीक्ष्णद्युतीनां नैसर्गिकं = स्वाभाविकं बलं स्यात्। यथा-रूपं = एकं सप्तभक्तं मन्दस्य बलम्, एवं रूपद्वयं सप्तभिर्भक्तं भौमस्य बलम्, रुपत्रयं सप्तभिर्भक्तं बुधस्य बलमेवमेवं सर्वेषां बोध्यम्।

चेष्टाबलोपपत्तिः—कुजादयः पञ्चताराग्रहा नीचासन्ने वक्रतामुपयान्ति।

"उदगयने रविशीतमयूखौ वक्रसमागमगाः परिशेषाः।
विपुलकरा युधि चोत्तरसंस्थाश्चेष्टितवीर्ययुताः परिकल्प्याः ॥"

इति वराहमिहिरोक्तेन भौमादयो ग्रहाः वक्रतां प्राप्ते विपुलबिम्बत्वाच्चेष्टाबलसहिता भवन्ति। तत्र परमनीचासन्ने परमबिम्बत्वाच्चेष्टाबलं परमं रूपमितम्। तत्र शीघ्रकेन्द्रं षड्राशिसमम्। ततश्चाग्रे क्रमेण बिम्बस्यापचयाच्चेष्टाबलस्याप्यपचयः, परमोच्चस्थाने बिम्बस्याल्पत्वाच्चेष्टाबलाभावस्तत्र तु शीघ्रकेन्द्रं शून्यसमम्। अत एव शीघ्रोच्चग्रहान्तरयोर्वृद्धिवशाच्चेष्टाबलवृद्धिः सिध्यति। तेन शीघ्रोच्चग्रहान्तरं चेष्टाबलकेन्द्रत्वेनोक्तम्। शीघ्रोच्चग्रहान्तरज्ञानार्थं "षडधिकं भगणाच्च्युतम्" इत्युक्तम्। ततोऽनुपातो यदि षड्राशितुल्येन शीघ्रोच्चग्रहान्तरेण रूपमितं चेष्टाबलं लभ्यते तदेष्टशीघ्रोच्चग्रहान्तरेण किमितीष्ट चेष्टाबलम् =

$\frac{(\text{शीघ्रोच्च—ग्रह})}{६}$। एवं पञ्चताराग्रहाणां चेष्टाबलं सिध्यति। रवेश्चेष्टाबलं आयनबलतुल्यमेव। अतो आयनबलं द्विगुणितं तदा रवेश्चेष्टाबलसहितमायनबलं भवति। एवमेव चन्द्रस्य चेष्टाबलं पक्ष-

बलसमं भवति। तेन पक्षबलं द्विगुणितं चन्द्रस्य पक्षबलसहितं चेष्टाबलं जायते। अथात्र स्पष्टग्रहस्थाने "मध्यस्पष्टयुतेर्दलं" यदुक्तमाचार्येण तत्रागम एव प्रमाणम्।

नैसर्गिकबलोपपत्तिः—"शकुबुगुशुचराद्या वृद्धितो वीर्यवन्तः" इति वचनप्रामाण्यात् शन्यादयो ग्रहा वृद्धिक्रमेण बलिनो भवन्ति। तत्र सर्वापेक्षया सूर्यबिम्बं विपुलम्। तेन सूर्यस्याधिकं बलं रूपमितम्। शनेर्बिम्बं सर्वापेक्षया लघुः, अतः शनेर्बलं रूपसप्तमांशसमं भवितुमर्हत्येव। ततो द्विगुणितसप्तमांशसमं भौमस्य, त्रिगुणितसप्तमांशसमं बुधस्य चतुर्गुणितसप्तमांशसमं गुरोः, पञ्चगुणितसप्तमांशसमं शुक्रस्य, षड्गुणितसप्तमांशसमं चन्द्रस्य, सप्तगुणितसप्तमांशसमं रवेश्च बलं भवति। तत्र सर्वदा स्थिररूपत्वादस्य बलस्य नैसर्गिकबलमिति संज्ञा विद्यते।

हि० टी०—मध्यम ग्रह एवं स्पष्टग्रह के योग के आधा (योगार्ध) को शीघ्रोच्च में घटाने से भौमादि पञ्चतारा ग्रहों का चेष्टाकेन्द्र होता है। यदि शीघ्रोच्च में योगार्ध को घटाने पर शेष ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटाने पर चेष्टाकेन्द्र होता है। चेष्टाकेन्द्र में ६ का भाग देने से भौमादिग्रहों का चेष्टाबल होता है। (रवि का चेष्टाबल आयनबल के तुल्य होता है। अतः आयनबल को द्विगुणित करने पर रवि का चेष्टाबल सहित आयनबल होता है। इसी प्रकार चन्द्र का पक्षबल के तुल्य ही चेष्टाबल होता है। अतः पक्षबल को द्विगुणित करने पर चन्द्र का चेष्टाबल सहित पक्षबल होता है। एक से ७ तक अंकों को पृथक्-पृथक् सात से भाग देने पर क्रम से शनि, मङ्गल, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र एवं रवि का नैसर्गिक बल होता है। अर्थात् १ में ७ का भाग देने पर शनि का, २ में ७ का भाग देने पर मङ्गल का इसी तरह सभी ग्रहों का नैसर्गिक बल होता है।

उदा०—उक्त श्लोक में मध्यम एवं स्पष्टग्रह तथा शीघ्रोच्च का उल्लेख है। इन विषयों का ज्ञान थोड़ा कठिन है। जिज्ञासुओं के ज्ञानार्थ एवं श्लोक में वर्णित विषयों के ज्ञान हेतु संक्षिप्त विवेचन दिया जाता है—

मध्यमग्रह—ग्रहों की गति एकरूपवेग से मानकर अभीष्टदिन में ग्रहों की जो राश्यादि स्थिति है, उसे मध्यमग्रह कहते हैं। अहर्गण का साधन कर अनुपात द्वारा मध्यमग्रह का साधन होता है।

अहर्गण—दिनों के समूह का नाम अहर्गण है। सृष्ट्यादि, कल्पादि, इष्टयुगादि अथवा इष्टशकाब्द से अहर्गण का साधन होता है। सिद्धान्त एवं

करण ग्रन्थों में अहर्गणसाधन की विधियाँ वर्णित हैं। अहर्गण साधन की संक्षिप्त-विधि निम्नांकित है—

"शाको नवाद्रीन्दुकृशानुयुक्तः कलेर्भवेदब्दगणो व्यतीतः।
कल्यादब्दगणःप्रभाकरहतश्चैत्रादिमासैर्युतः ॥
त्रिष्ठः खाद्रिहृताप्तयुक्-सुरहृतैर्लब्धाधिमासैर्युतः।
खत्रिघ्नः सतिथिर्द्विधा शिवहतत्रिव्योमशैलोद्धृतै-
र्हीनो लब्धदिनावमैः सितनिशार्द्धे सावनोऽहर्गणः ॥"

अभीष्टशक में ३१७९ जोड़ने पर कलियुगादि से गताब्द होते हैं। कलि-गताब्द को १२ से गुणाकर चैत्रादिगतमास (चैत्रशुक्ल प्रतिपदा से वैशाख कृष्ण अमावास्या तक १ मास, ज्येष्ठ कृष्ण अमावस्या तक २ मास, इस तरह गणना करें) जोड़ने पर चैत्रादि गतमास होंगे। इसे तीन स्थानों पर रखें। अन्तिम स्थान पर ७० का भाग देकर लब्धि को द्वितीय स्थान में जोड़कर योगफल में ३३ का भागदेकर लब्धि को प्रथम स्थान में जोड़े। यह चान्द्रमास होगा। इसे ३० से गुणा कर गततिथि जोड़ने से गततिथियाँ होती हैं। इसे दो स्थानों पर रखें। द्वितीयस्थान पर ११ से गुणाकर ७०३ का भाग देने से जो लब्धि हो उसे प्रथम स्थान में घटावें तो रात्र्यर्धकालिक सावनाहर्गण होता है। वार गणना हेतु अहर्गण में ७ का भाग देने से एकादिशेष में शुक्रादिवार होते हैं।

विशेष—जिस वर्ष मलमास लगा हो उस वर्ष मलमास से पूर्व का अहर्गण साधन करना हो तो पूर्ववर्ष की अपेक्षा वर्तमान वर्ष में अधिमास का मान अधिक आता हो तो पूर्व वर्ष तुल्य हीं अधिमास का ग्रहण करें। अधिमास के बाद के मासों में अहर्गण साधन करने में पूर्ववर्ष तुल्य ही यदि अधिमास आए तो १ अधिक अधिमास गणना करें।

अधिमास के बाद अहर्गण साधन में गतचैत्रादिमास गणना में अधिमास का ग्रहण नहीं होगा। मध्य में अहर्गण साधन करना हो तो गततिथि ग्रहण में अधिमास की गततिथियों का ग्रहण होगा।

श्री शुभसंवत् २००७ शक १८७२ आश्विन कृष्ण षष्ठी सोमवार का अहर्गण साधन—

{ (१८७२ + ३१७९) × १२ } + ५ गतमास = ६०६१७ गतमास

{ ६०६१७ + (६०६१७ ÷ ७०) } ÷ ३३

[६०६१७ + { ६०६१७ + (६०६१७ ÷ ७०) } ÷ ३३] × ३० =
१८७४४००

[१८७४४०० + २१ गततिथि) × ११] ÷ ७०३ = २९३२९

१८७४४२१ − २९३२९ = १८४५०९२ = अहर्गण

१८४५०९२ ÷ ७ शेष = ४ अतः सोमवार वार गणना भी ठीक है।

सोमवार के अर्धरात्रि में सावनाहर्गण सिद्ध हुआ।

इसी अहर्गण को युगीयग्रहभगण से गुणाकर युगीयसावन दिन से भाग देने पर मध्यमग्रह सिद्ध होंगे। सभी ग्रहों के युगीय ग्रहभगण पठित हैं। युगीयसावनदिन सूर्यसिद्धान्तानुसार १५७७९१७८२८ है। कल्पकुदिन अथवा युगकुदिन में कल्पीय अथवा युगीयग्रहभगण तो अहर्गण में क्या ? यही अनुपात मध्यमग्रहसाधन के लिये सिद्ध है।

अहर्गणोत्पन्नमध्यमग्रह में ग्रन्थान्तरों में वर्णित संस्कार के द्वारा स्पष्टग्रह का साधन होता है।

अहर्गण से ग्रहों का मध्यमसाधन—

$$\text{रविमध्यम} = \frac{१८४५०९२ \times ४३२००००}{१५७७९१७८२८} = ५।१७।३४।२३$$

रवि ही शुक्र एवं बुध का मध्यम तथा मङ्गल गुरु और शनि का शीघ्रोच्च होता है।

$$\text{चन्द्रमध्यम} = \frac{१८४५०९२ \times ५७७५३३३६}{१५७७९१७८२८} = २।१।५६।५$$

$$\text{मङ्गलमध्यम} = \frac{१८४५०९२ \times २२९६८३२}{१५७७९१७८२८} = ८।२३।५७।४९$$

$$\text{बुधशीघ्रोच्च} = \frac{१८४५०९२ \times १७९३७०६०}{१५७७९१७८२८} = २।३।१७।६$$

$$\text{गुरुमध्यम} = \frac{१८४५०९२ \times ३६४२२०}{१५७७९१७८२८} = १०।१०।२३।४७$$

$$\text{शुक्रशीघ्रोच्च} = \frac{१८४५०९२ \times ७०२२३७६}{१५७७९१७८२८} = ४।२७।२९।४८$$

$$\text{शनिमध्यम} = \frac{१८४५०९२ \times १४६५६८}{१५७७९१७८२८} = ४।१८।३५।५८$$

सिद्ध मध्यमग्रह लंका के अर्धरात्रिकालिक हुए। इष्टकालिक मध्यमग्रह-साधन हेतु चालन एवं ग्रहों की मध्यमा गति के वश चालन सम्बन्धी फल को मध्यमग्रह में संस्कार करने से इष्टकालिक मध्यमग्रह होंगे।

इष्टकालिक मध्यम रवि=५।१७°।३४'।२३" – ४०'।२७"=५।१६।५३।५६

„ „ चन्द्र =२।१°।५६'।५" –६°।०'।५३"=१।२२।५५।१२

„ „ मङ्गल=८।२३°।५७'।४६" –२१'।३०" =८।२३।३६।१६

„ बुधशीघ्रोच्च=२।३°।१७'।६" –२°।४७'।५७=३। ०।२९। ६

„ मध्यम गुरु=१०।२०°।२३'।४७"–३'।२५" =१०।२०।२०।२२

„ शुक्रशीघ्रोच्च=४।२७°।२६'।४८"–१°।५'।४६" =४।२६।२४। २

„ मध्यम शनि=४।१८°।३५'।५८"–१'।२२" = ४।१८।३४।३६

	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
म. ग्र.	८।२३।३६।१६	५।१६।५३।५६	१०।२०।२०।२२	५।१६।५३।५६	४।१८।३४।३६
स्प. ग्र.	८।११।१४।२४	४।२९।२२।१२	१०।१०।३८।३८	५। ७।१७। ४	४।२८।१४। २
योग	४। ४।५०।४३	१०।१६।१६। ८	६। ०।५६। ०	१०।२४।११। ०	६।१६।४८।३८
यो. द.	३। २।२५।२२	५। ८। ८। ४	४।१५।२८।३०	५।२२। ५।३०	४।२३।२४।१९
शी.उ.	५।१६।५३।५६	३। ०।२९। ६	५।१६।५३।५६	४।२६।२४। २	५।१६।५३।५६
शी.यो.द.	३।१४।२८।३४	६।२२।२१। ५	१। १।२४।२६	११।१४।१८।३२	०।२३।२९।३७
चे. के.	३।१४।२८।३४	२। ७।३८।५५	१। १।२४।२६	०।१५।४१।२८	०।२३।२९।३७
के.÷६	०।१७।२४।४७	०।११।१६।२९	०। ५।१४। ४	०। २।३६।५५	०। ३।५४।५६
चेष्टाबल	०।१७।२४।४७	०।११।१६।२९	०। ५।१४। ४	०। २।३६।५५	०। ३।५४।५६

नैसर्गिकबलसाधन—

१ ÷ ७ =	०। ८।३४	शनि	का नैसर्गिक बल	
२ ÷ ७ =	०।१७। ९	मङ्गल	,,	,, ,,
३ ÷ ७ =	०।२५।४३	बुध	,,	,, ,,
४ ÷ ७ =	०।३४।१७	गुरु	,,	,, ,,
५ ÷ ७ =	०।४२।५१	शुक्र	,,	,, ,,
६ ÷ ७ =	०।५१।२६	चन्द्र	,,	,, ,,
७ ÷ ७ =	१। ०। ०	रवि	,,	,, ,,

अथ युद्धादिवलम्—

युद्धे बाणवियोगहृत्खचरयोर्वीर्यैक्ययोरन्तरं
स्वं सौम्यस्थखगे क्षयं च यमदिक्संस्थस्य कुर्याद्बले ।
सद्दृष्ट्यङ्घ्रियुगुग्रदृष्टिचरणोनं खेटवीर्यं भवेत् ॥

अन्वयः—खचरयोः युद्धे वीर्यैक्ययोः वाणवियोगहृत् 'युद्धवलं' भवति। सौम्यस्थस्य बले स्वम्, यमदिक्संस्थस्य बले क्षयं कुर्यात्। सद्दृष्ट्यङ्घ्रियुक्, उग्रदृष्टिचरणोनं खेटवीर्यं भवेत्।

व्याख्या—खचरयोः = भौमादिपञ्चताराग्रहाणामन्यतमयोर्द्वयोर्ग्रहयोः, युद्धे = राश्यंशादितुल्यत्वे युद्धलक्षणसंजाते सति तयोर्वीर्यैक्ययोः = साधित-षड्बलैक्ययोः, अन्तरं बाणवियोगहृत् = ग्रहयोर्दक्षिणोत्तरान्तररूपशरान्तरेण भक्तम्, युद्धबलं भवति। तत् सौम्यस्थस्य = उत्तरदिक्संस्थस्य बले स्वं = धनम्, यमदिक्संस्थस्य = दक्षिणदिक्संस्थस्य बले क्षयं = ऋणं कुर्यादितिशेषः। शरान्तरं त्वेकदिशोरन्तरेण भिन्नदिशोर्योगेन भवति, तथा च यस्य ग्रहस्य यद्दिक्शरो भवति स तद्दिक्स्थो बोध्यः। एकदिशस्थयोर्द्वयोर्ग्रहयोर्यस्य ग्रहस्याल्पः शरः स तद्भिन्नदिक्स्थो भवतीति सुधीभिर्विभाव्यम्। एवं पूर्वानीतबलं सद्दृष्ट्यङ्घ्रियुक् = शुभग्रहदृष्टियोगचतुर्थांशेन युक्तं उग्रदृष्टिचरणोनं = पापग्रहदृष्टियोगचतुर्थांशेन हीनं कार्यं तदा खेटवीर्यं = ग्रहबलं भवेत्।

उपपत्तिः—भौमादिपञ्चताराग्रहाणामन्यतमयोर्ग्रहयो राश्यंशादितुल्यत्वे ग्रहयुद्धं भवति। तत्र ग्रहयुद्धे सौम्यस्थस्य ग्रहस्य जयवशाच्चेष्टाबलवृद्धि-र्याम्यस्थस्य ग्रहस्य पराजयवशाच्च चेष्टाबलहानिर्भवति। सौम्यस्थस्य

ग्रहस्य यावदेव बलाधिक्यं तावदेव दक्षिणस्थस्य ग्रहस्य बलाल्पत्वमिति सिद्धमेव।

अत्रैककलातोऽल्पे शरान्तरेऽन्तराभावः स्वीकृतः। तत्र दक्षिणोत्तरान्तराभावेन जयपराजयाभावात् संस्काराभावः। ततश्च शरयोः कलातुल्येऽन्तरे दक्षिणोत्तरस्थत्वप्रवृत्तिस्तत्र ग्रहयोर्बलान्तरतुल्यो जयः पराजयश्च समुचितः। तत्रेष्टशरान्तरेणानुपातो यदि कलातुल्यशरान्तरेण बलान्तरतुल्यं बलं लभ्यते तदेष्टशरान्तरेण किमिति ? अत्रेष्टशरान्तरवृद्धौ बलस्य ह्रासात्, ह्रासे च वृद्ध्याः व्यस्तत्रैराशिकेन बलान्तरमेकेन गुणितम्, इष्टशरान्तरेण भक्तम् $= \frac{\text{ब अं} \times १}{\text{शरान्तरम्}}$। इदं फलं सौम्यस्थस्य ग्रहस्य जयित्वाद् बले धनं याम्यस्थस्य ग्रहस्य पराजयोक्तेर्बले क्षयं यदुक्तं तत्समुचितमेव।

दृष्टिसंस्कारोपपत्तिः—शुभग्रहदृष्ट।ग्रहः बलवान् पापग्रहदृष्टश्च निर्बलो भवति। तत्र चन्द्रगुरुशुक्राः शुभग्रहाः, रविभौमशनयश्च पापाः। बुधस्य शुभग्रहेण योगे संजाते शुभत्वं पापग्रहेण च योगे संजाते पापत्वमतः चन्द्र-बुध-गुरु शुक्राश्चत्वारः शुभाः, रविकुजबुधशनयश्च चत्वारो पापा अपि सन्ति। चत्वारो शुभग्रहाः पूर्णदृष्ट्या पश्येयुस्तदा रूपतुल्यं दृग्बलं धनं भवति। एवमेव यदि चत्वारश्च पापाः पूर्णदृष्ट्या पश्येयुस्तदा रूपतुल्यं दृग्बलमृणं भवितुमर्हत्येव। अत इष्टदृष्टियोगवशेनानुपातेनेष्टदृष्टियोगसम्बन्धिबलं सिध्यति। तद्यथा—यदि चतूरूपमितेन (रू ४) सर्वदृष्टियोगेन रूपं (१) बलं लभ्यते तदेष्टदृष्टियोगेन किमिति

$$= \frac{१ \times \text{दृष्टियोग}}{४}।$$

लब्धफलं शुभदृष्टियोगचतुर्थांशो धनं पापदृष्टियोगचतुर्थांश ऋणं यदुक्तं तत्समुचितमेव।

हि० टी—पञ्चताराग्रहों के राश्यंशादि तुल्य रहने पर ग्रहयुद्ध होता है। जिन दो ग्रहों के राश्यंशादि तुल्य हों उन दोनों ग्रहों के पूर्वोक्त विधि से साधित षड्बलैक्य के अन्तर में दोनों ग्रहों के शरान्तर कला से भाग देने पर लब्धि तुल्य युद्धबल होता है। उत्तर दिशा स्थित ग्रह के षड्बलैक्य में युद्धबल को धन तथा दक्षिण दिशा स्थित ग्रह के षड्बलैक्य में ऋण करना चाहिये। जिस ग्रह पर जितने शुभग्रहों की दृष्टि हो उन दृष्टियोग के चतुर्थांश को जोड़ना

चाहिए, और पापग्रह सम्बन्धि दृष्टियोग के चतुर्थांश को घटाने से ग्रहों का युद्धादिबल सिद्ध होता है।

ग्रहों का षड्बलैक्य ज्ञानहेतु स्थानबल, दिग्बल, कालबल, निसर्गबल, चेष्टाबल एवं दृग्बल सबका योग करने पर षड्बलैक्य सिद्ध होता है।

रवि का षड्बलैक्य—

स्थानबल	=	१।२१। ५
दिग्बल	=	०। ६।४०
कालबल	=	१। ४। ४
निसर्गबल	=	१। ०। ०
चेष्टाबल	=	०।२७।१६
दृग्बल	=	+०।२०। ६
योग	=	४।२२।१७

चन्द्र का षड्बलैक्य—

स्थानबल	=	४। ८। ६
दिग्बल	=	०।२०।५२
कालबल	=	१।४०।५६
निसर्गबल	=	०।५१।२६
चेष्टाबल	=	०।३७।३२
दृग्बल	=	−०।१२। ०
योग	=	७।२६।५२

भौम का षड्बलैक्य—

स्थानबल	=	२।५४।४२
दिग्बल	=	०।१६। ५
कालबल	=	१।१०।५२
निसर्गबल	=	०।१७। ६
चेष्टाबल	=	०।१७।२५
दृग्बल	=	+०। ८। ६
योग	=	५। ७।१६

बुध का षड्बलैक्य—

स्थानबल	=	२।५७।२४
दिग्बल	=	०।२२।३२
कालबल	=	२।३७,२८
निसर्गबल	=	०।२५ ४३
चेष्टाबल	=	०।११।१६
दृग्बल	=	+०।२१।३५
योग	=	६।५५।५८

गुरु का षड्बलैक्य—

स्थानबल	=	१।३५।५५
दिग्बल	=	०।१६।२४
कालबल	=	३।१६। ८
निसर्गबल	=	०।३४।१७
चेष्टाबल	=	०। ५।१४
दृग्बल	=	−०। ६।३२
योग	=	५।४४।२६

शुक्र का षड्बलैक्य—

स्थानबल	=	२।३८।५४
दिग्बल	=	०। ८।२६
कालबल	=	१।१६। ८
निसर्गबल	=	०।४२।५१
चेष्टाबल	=	०। २।३७
दृग्बल	=	+०।२०।३०
योग	=	५।१२।२६

शनि का षड्बलैक्य—

स्थानबल	=	२।३२।३७
दिग्बल	=	०।२२।२०
कालबल	=	०।४०।५२
निसर्गबल	=	०। ८।३४
चेष्टाबल	=	०। ३।५५
दृग्बल	=	+०।२१।३९
योग	=	२। ९।५७

ग्रहों के षड्बलैक्य का साधन कर जिन दो ग्रहों का युद्ध विचार करना हो उन दोनों ग्रहों के षड्बलैक्य के अन्तर को दोनों ग्रहों के रूपादिकलात्मक शरों के अन्तर से भाग देना चाहिये। लब्धि को उत्तर दिशा में स्थित ग्रह के षड्बलैक्य में धन (+) तथा दक्षिण दिशा में स्थित ग्रह के षड्बलैक्य में ऋण (−) करने पर दोनों ग्रहों का स्फुट षड्बलैक्य होता है।

शरसाधन—

शरसाधन की विधि ग्रन्थान्तरों में वर्णित है। यद्यपि सिद्धान्त ग्रन्थों में शरसाधन विधि है, किन्तु सुगमता के लिये करण ग्रन्थों के द्वारा साधित शर भी व्यवहार के लिये उपयुक्त ही होगा। ग्रहलाघवीय शरसाधन विधि निम्नाङ्कित है—

खाम्बुधयः खयमाः खभुजङ्गाः खाङ्कमिताः खदशाक्रमशः स्युः।
पातलवाः कुसुताद् बुधभृग्वोर्मध्यमचञ्चलकेन्द्रविहीनाः॥
कुद्वित्र्यब्धियुगाश्विनो दलचयश्चेत् षड्भपुष्टं चलं
केन्द्रं चक्रविशुद्धमस्य भमिताधैँक्यं लवघ्नागतात्।
त्रिंशल्लब्धयुतं कुजात् कुयमलाब्धीन्द्वद्रिभक्तं क्रमा—
त्तद्धीना धृतिरिष्विला गुणभुवो गोऽब्जा इना द्राक्श्रुतिः॥
मन्दस्पष्टखगात् स्वपातरहितात् क्रान्त्यंशकाः केवलात्
कर्णाप्तास्त्रियमाहता अथ गुरोश्चेल्लोचनाप्ताः पुनः।

स्वाङ्घ्र्यूना असृजोऽङ्गुलादिकशरः पातोनदिक् स्यादसौ
त्रिघ्नः स्यात् कलिकादिकः स्फुटतरस्तत्संस्कृतश्चापमः ॥

४०, २०, ८०, ६०, १०० ये क्रमशः भौमादि ग्रहों के पातांश हैं। बुध और शुक्र के पातांश में अहर्गणोत्पन्न मध्यम शीघ्रकेन्द्र घटाने से वास्तव पातांश होते हैं। १, २, ३, ४, ४, २, ये शीघ्रकर्णसाधनार्थ ६ खण्ड पठित हैं। कुजादि पञ्चतारा ग्रहों के शीघ्रकेन्द्र यदि ६ राशि से अधिक हों तो १२ राशि में घटाकर शेष जो बचे उसमें राशिसंख्यातुल्य खण्डों का योग करे, और अंशादि से गुणित अग्रिमखण्ड में ३० का भाग देकर लब्धि को खण्डों के योग में जोड़कर जो हो उसको ५ स्थानों में रखकर क्रमशः १, २, ४, १, ७ इनसे भाग देकर लब्धि को क्रमशः १८, १५, १३, १६, १२ इनमें घटाने से भौमादि ग्रहों के शीघ्रकर्ण होते हैं।

भौमादिपञ्चतारा ग्रहों के मन्दस्पष्ट में अपने २ पात को घटाकर शेष पर से विना अयनांश का संस्कार किये ही "चत्वारिंशदसीति" इत्यादि विधि से क्रान्ति साधन करके उसमें अपने २ शीघ्रकर्ण से भाग देकर लब्धि को २३ से गुणा करने पर अङ्गुलादिक शर का मान होता है। इस प्रकार साधित गुरु के शर में २ का भाग देने से, तथा मङ्गल के शर में स्वचतुर्थांश घटाने से वास्तविक शर होता है। अङ्गुलादिक शर को ३ से गुणा करने पर कलादिक शर होता है। इस साधित शर को मध्यमा क्रान्ति में संस्कार (एक दिशा में योग और भिन्न दिशा में अन्तर) करने से स्पष्टा क्रान्ति होती है।

इस प्रकार ग्रहों का शर साधन करना चाहिये। प्रकृत उाहरण में बुध ४।२६।२२।१२ एवं शनि ४।२८।१४।२ है। दोनों का युद्ध नहीं है। क्योंकि युति व्यतीत हो चुकी है।

अथ भावानां त्रिविधबलम्—

भावानां बलमीशजं च नृचतुष्पादाख्यकीटाम्बुजाः ॥११॥
जायाम्ब्वाद्यखभोनिताः खलु ततो दिग्वीर्यवत्तद्युतं
सद्दृष्टयंङ्घ्रियुगुग्रदृष्टिचरणोनं ज्ञेज्यदृग्युक् पुनः ॥

अन्वयः—भावानां ईशजं बलम्, नृचतुष्पादाख्यकीटाम्बुजाः 'क्रमेण जायाम्ब्वाद्यखभोनिताः दिग्वीर्यवत् बलम्, तद्युतं स्वामिबलं कार्यम्'। सद्दृष्ट्यङ्घ्रियुक् उग्रदृष्टिचरणोनं पुनर्ज्ञेज्यदृग्युक्, एवं भावबलं स्यात्।

व्याख्या—भावानां = तन्वादिद्वादशभावानाम्, ईशजं बलं = स्वामिबलं स्यात्। अथ च नृचतुष्पादाख्यकीटाम्बुजाः = द्विपद्चतुष्पदकीटजलचरसंज्ञकराशयो भावाः क्रमेण जायाम्ब्वाद्यखभोनिताः = सप्तमचतुर्थप्रथमदशमभावै रहितास्ततो दिग्वीर्यवत् यथा दिग्बलमानयनं भवति, तद्वत् बलं साध्यम्। तद् द्वितीयं दिग्बलं भवति। तद्युतं = तेन युतं स्वामिबलं कार्यमिति। तत् सद्दृष्ट्यङ्घ्रियुक् = शुभग्रहदृष्टियोगचतुर्थांशयुतम्, उग्रग्रहदृष्टिचरणोनं = पापग्रहदृष्टियोगचतुर्थांशोनं कार्यम्। एवं स्वामिबलदिग्बलयोगो भावबलं भवति।

उप०—स्वस्वामिनि बलवति सर्वे बलिनो भवन्ति स्वामिनि निर्बले च सर्वे निर्बला भवन्ति, तद्वदेव स्वस्वस्वामिबलेनबलिनो भवितुमर्हन्त्येवातो "भावानां बलमीशजं" इति युक्तियुक्तमेवोक्तम्। अथ नरराशयो लग्ने बलिनो भवन्ति, लग्नतः परमान्तरे सप्तमभावे निर्बला भवन्त्येव।

"कण्टककेन्द्रचतुष्टयसंज्ञा सप्तमलग्नचतुर्थखभानाम्।
तेषु यमाभिहितेषु बलाढ्याः कीटनराम्बुचराः पशवश्च॥"

इति वराहमिहिरेण प्रतिपादितम्।

अत एव नरराशयो यथा यथा सप्तमभावेनान्तरिता भवेयुस्तथा-तथा बलयुता भवन्ति। अत एव सप्तमभावस्य नरराशिभावस्य चान्तरेणानुपातेन भावदिग्बलानयनं युक्तियुक्तमेव। यथा—यदि नरराशिभावसप्तमभावयोरन्तरेण षण्मितेन रूपमितं (१) बलं लभ्यते तदेष्टान्तरेण किमितीष्टान्तर सम्बन्धिबलम् = $\frac{(\text{नरराशिभाव} - \text{सप्तमभाव}) \times १}{६}$

नरराशिभावदिग्बलम्।

एवमेव वराहमिहिराचार्योक्तवचनेनैव चतुष्पदभावादीनामपि भावानां दिग्बलानयनमुपपद्यते। अतः परं सुगमम्।

हि० टी०—भावों के त्रिविधबल होते हैं—

१—अपने अपने स्वामी का बल २—भावों का दिग्बल ३—भावों का दृग्बल। भाव यदि नरराशि हो तो उसमें सप्तम भाव को, यदि चतुष्पद संज्ञक हो तो चतुर्थभाव को, यदि कीटराशि संज्ञक हो तो लग्न को और यदि जलचर राशि संज्ञक हो तो उसमें दशमभाव को घटाकर शेष द्वारा ग्रहों के दिग्बल साधन की विधि से भावों का बल साधन करे। (यदि अन्तर ६ राशि से अल्प हो तो उसी

में, यदि ६ राशि से अधिक हो तो अन्तर को १२ राशि में घटाकर शेष में ६ का भाग देने पर लब्धि दिग्बल संज्ञक है। यह भावों का दिग्बल कहा जाता है। इस दिग्बल को भावों के स्वामी के बल में जोड़े और उस भाव पर जितने शुभग्रहों की दृष्टि हो उनके योग के चतुर्थांश को उसमें जोड़े, तथा पापग्रहों के दृष्टियोग के चतुर्थांश को घटावे। यदि भाव पर बुध और गुरु की दृष्टि हो तो उनकी सम्पूर्ण दृष्टि को जोड़े। यह भावों का तृतीय बल दृग्बल संज्ञक है। इस प्रकार भावों का स्पष्टबल होता है।

उदा०—भावों के स्वामी का बल—

ग्रहों का पूर्वोक्त सिद्धबल भावों के स्वामी का बल होता है—

भावानां स्वामिबलचक्रम्—

त.	ध.	स.	सु.	सु.	रि.	जा.	आ.	ध.	क.	आ.	व्य.
शु.	मं.	बृ.	श.	श.	बृ.	मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.
५	५	५	२	२	५	५	५	६	७	४	६
१२	७	४४	९	९	४४	७	१२	५५	२६	२२	५५
२६	१९	२६	५७	५७	२६	१९	२६	५८	५२	१७	५८

भावों का दिग्बल—

इस विषय के ज्ञान हेतु नर, चतुष्पदादि राशियों की संज्ञा ज्ञात होना चाहिये। मिथुन, कन्या, तुला, धनु का पूर्वार्द्ध एवं कुम्भ राशियाँ पुरुष (द्विपद), मेष, वृष, सिंह, धनु का उत्तरार्द्ध और मकर का पूर्वार्द्ध चतुष्पद, कर्क, मीन एवं मकर का उत्तरार्द्ध जलचर तथा वृश्चिक कीट संज्ञक है।

तनु —६।१४।१२।३० − ०।१४।१२।३० = ६।०।०।०

६।०।०।० ÷ ६ = १।०।०

धन —७।१५।२।८।४० − ६।१४।१२।३० = १।०।४९।३८।४०

$$\frac{१।०।४९।३८।४०}{६} = ०।५।८।१६$$

सहज—८।१५।५१।४७।२० − ९।१६।४१।२६।० = १०।२९।१०।२१।२०

(१२ रा० − १०।२९।१०।२१।२०) ÷ ६ = ०।५।८।१६

सुख—६।१६।४१।२६।० – ३।१६।४१।२६ = ६।०।०।०।०
६।०।०।० ÷ ६ = १।०।०

सुत—१०।१५।५१।४७।२० – ०।१४।१२।३० = १०।१।३६।१७।२०
(१२ रा० – १०।१।३६।१७।२०) ÷ ६ = ०।६।४३।२७

रिपु—११।१५।२।८।४० – ३।१६।४१।२६। ० = ७।२८।२०।४२।४०
(१२ रा० – ७।२८।२०।४२।४०) ÷ ६ = ०।२०।१६।३३

जाया—०।१४।१२।३० – ६।१६।४१।२६। ० = २।२७।३१।४।०
२।२७।३१।४।० ÷ ६ = ०।१४।३५।१०

आयु—१।१५।२।८।४० – ६।१६।४१।२६। ० = ३।२८।२०।४२।४०
३।२८।२०।४२।४० ÷ ६ = ०।१६।४३।२७

धर्म—२।१५।५१।४७।२० – ०।१४।१२।३०।० = २।१।३६।१७।२०
२।१।३६।१७।२० ÷ ६ = ०।१०।१६।३३

कर्म—३।१६।४१।२६ – ३।१६।४१।२६ = ०।०।०।०
०।०।०।० ÷ ६ = ०।०।०

आय—४।१५।५१।४७।२० – ६।१६।४१।२६।० = ६।२६।१०।२१।२०
(१२ रा० – ६।२६।१०।२१।२०) ÷ ६ = ०।२५।८।१६

व्यय—५।१५ २।८।४० – ०।१४।१२।३०। ० = ५।०।४६।३८।४०
५।०।४६।३८।४० ÷ ६ = ०।२५।८।१६

भावानां दिग्बलचक्रम्

त.	ध.	स.	सु.	सु.	रि.	जा.	आ.	ध.	क.	आ.	व्य.
१	०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	०
०	५	५	०	६	२०	१४	१६	१०	०	२५	२५
०	८	८	०	४३	१७	३५	४३	१७	०	८	८

भावानां दृग्बलचक्रम्

त.	ध.	स.	सु.	सु.	रि.	जा.	आ.	ध.	क.	आ.	व्य.
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	०
५६	४७	३८	१०	१८	३४	४४	४२	३५	८	३	५६
५३	४८	१२	१८	३३	५१	२६	१४	२२	२२	५८	४

भावानां स्फुटबलचक्रम्

त.	ध.	स.	सु.	सु.	रि.	जा.	आ.	ध.	क.	आ.	व्य.
७	६	९	३	२	६	६	६	७	७	५	८
९	०	२७	२०	३८	३९	६	१४	४१	३५	५१	१७
१९	१५	४६	१५	१३	३४	२३	२३	३७	१४	२३	१०

अथ कष्टेष्टसाधनार्थं चन्द्रार्कयोश्चेष्टाबलम्—

व्यर्केन्दुस्त्रिभयुक्तसायनरविश्चेष्टाख्यकेन्द्रे तयो-
र्गोकष्टेष्टविधौ बले कुरु ततः प्राग्वन्नवीर्याय ते ॥ १२ ॥

अन्वयः—व्यर्केन्दुः त्रिभयुक्तसायनरविः तयोः चेष्टाख्यकेन्द्रे स्तः। ततः गोकष्टेष्टविधौ प्राग्वत् बले कुरु। ते वीर्याय न 'भवेताम्'।

व्याख्या—व्यर्केन्दुः = सूर्योनचन्द्रः, त्रिभयुक्तसायनरविः = त्रिराशिसहितः सायनसूर्यः, क्रमेण तयोः = चन्द्रार्कयोश्चेष्टाकेन्द्रे स्याताम्। अर्थात् अर्कोनचन्द्रश्चन्द्रस्य चेष्टाकेन्द्रम्; त्रिभयुक्तसायनरविः सूर्यस्य च चेष्टाकेन्द्रं भवति। ततः = ताभ्यां चेष्टाकेन्द्राभ्यां गोकष्टेष्टविधौ = रश्मिकष्टेष्टसाधनविधौ, प्राग्वत् = भौमादिपञ्चताराग्रहाणां चेष्टाबलसाधनवत्, तयोश्चन्द्रार्कयोर्बले कुरु। ते = चन्द्रार्कयोश्चेष्टाबले वीर्याय न स्याताम् = बलैक्ये उपयोगिनी न भवेतामिति।

उप०—रवेः परमोत्तरगमनकाले चेष्टाबलं परमं भवति। तत्र तन्मानं रूप-(१) मितम्। एवमेव रवेः परमदक्षिणगमनकाले च चेष्टाबलं शून्यसमं भवति। तत्र सायनमिथुनान्ते परमोत्तरगमनाद् बलस्य परमत्वाच्चेष्टाबलस्य परमत्वम्, सायनधनुरन्ते च रवेः परमदक्षिणगमनत्वाच्चेष्टाबलस्य शून्यत्वम्। तस्माच्चेष्टाकेन्द्रमपि शून्यं भवितुमर्हति, तत्तु तत्र त्रिभयुक्तसायनरविणा एव भवति। ततः चेष्टाकेन्द्रप्रवृत्तिः। सायनमिथुनान्ते चेष्टाकेन्द्रं षड्राशिसमं भवति, तदपि सत्रिभसायनसूर्येणैव भवति। अत एवेष्टकालेऽपि त्रिभयुक्तसायनरवितश्चेष्टाकेन्द्रसाधनं युक्तियुक्तमुक्तम्। इदं चेष्टाकेन्द्रं किञ्चित्स्थूलं व्यवहारोपयुक्तम्। यतोहि दक्षिणोत्तरगमनं क्रान्त्यनुरोधेन भवति। अतः क्रान्त्यनुपातेन चेष्टाबलं सूक्ष्मं भवितुमर्हतीति विबुधैर्विमृग्यम्। एवमेव

चेष्टारश्मिपरमत्वे चन्द्रस्य चेष्टाकेन्द्रं परमम्, चेष्टारश्मिशून्यत्वे च चन्द्रस्य चेष्टाकेन्द्रं शून्यसमं भवितुमर्हति, तत्तु चन्द्रार्कयोरन्तराभावे अमावास्यान्ते चेष्टारश्मेरभावाच्चेष्टाकेन्द्रस्याप्यभावः, पूर्णिमान्ते-चेष्टारश्मिपरमत्वे चेष्टाकेन्द्रं परमं षड्राशितुल्यं भवितुमर्हत्येव। इदं व्यर्केन्दुना भवत्यत इष्टसमयेऽपि व्यर्केन्दुवशेनैव चेष्टाकेन्द्रसाधनं युक्तियुक्तमेव। चेष्टाकेन्द्रसाधनान्तरं पञ्चताराग्रहाणां चेष्टाबलवत् सुगममेव। तत्र साधितचन्द्रचेष्टाबलं पक्षबलतुल्यं भवति। अत एव षड्बलैक्यसाधनार्थं पूर्वमेव पक्षबलं द्विगुणितमिति स्वीकृतम्। एवमेव रवेश्चेष्टाबलमायनबलतुल्यमत एव पूर्वमेव रवेरायनबलं द्विगुणितमिति। केवलमत्र चेष्टारश्मिकष्टेष्टसाधनार्थमेव चन्द्रार्कयोर्बले साधिते न तु वीर्याय, इति सर्वमुपपन्नम्।

हि० टी०—स्पष्ट सूर्य को स्पष्टचन्द्र में घटाने पर चन्द्रमा का चेष्टाकेन्द्र और सायन सूर्य में ३ राशि जोड़ने पर सूर्य का चेष्टाकेन्द्र होता है। इस चेष्टाकेन्द्र से भौमादि पञ्चताराग्रहों के चेष्टाबलसाधनविधि से चेष्टाबल साधन करे। (यदि चेष्टाकेन्द्र ६ राशि से अल्प हो तो चेष्टाकेन्द्र में ६ का भाग देना चाहिये, और यदि चेष्टाकेन्द्र ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटाकर ६ का भाग देने से चन्द्र और सूर्य का चेष्टाबल होता है)। इस बल का उपयोग षड्बलैक्य में नहीं होता बल्कि चेष्टारश्मि से कष्ट इष्ट साधन करने में उपयोग होता है।

उदा०—चन्द्र का चेष्टाबल—

१।२१।५५।३६ = स्पष्टचन्द्र
५।१४।४३।२५ = स्पष्टसूर्य
____
८। ७।१२।११ = चेष्टाकेन्द्र
१२ राशि
____
३।२२।४७।४९ = १२ रा० – चे० के०

(३।२२°।४७′।४९″) ÷ ६ = =०।१८।४८

चन्द्र का चेष्टाबल = ०।१८।४८

सूर्य का चेष्टाबल—

५।१४।४३।२५ = स्पष्टरवि
२३। ६।१० = अयनांश

६। ७।५२।३५ = सायनरवि
+३ राशि

६। ७।५२।३५ = चेष्टाकेन्द्र
१२ रा०

२।२२। ७।२५ = १२ राशि – चे० के०

(२।२२°।७′।२५″) ÷ ६ = ०।१३।४१

सूर्य का चेष्टाबल = ०।१३।४१

अथ इष्टकष्टसाधनम्—

ये चेष्टोच्चबले रसैर्विनिहते सैके निजा रश्मय-
श्चेष्टातुङ्गबलाहतेः पदमिहेष्टं स्याद्बलोनैक्ययोः ।
घातान्मूलमिदं हि कष्टमथ तद्रूपं दशायाः फलं
वीर्यं द्दक् पृथगिष्टकष्टगुणिते द्वे चेष्टकष्टाह्वये ॥ १३ ॥

अन्वयः—ये चेष्टोच्चबले 'ते' रसैर्विनिहते सैके निजा रश्मयः भवन्ति । इह चेष्टातुङ्गबलाहतेः पदं इष्टं स्यात् । बलोनैकयोः घातान्मूलं इदं हि कष्टं स्यात् । तद्रूपं दशायाः फलं भवति । वीर्यं द्दक् च द्वे पृथक् इष्टकष्टगुणिते इष्टकष्टाह्वये भवतः ।

व्याख्या—ये चेष्टोच्चबले = रव्यादिग्रहाणां चेष्टोच्चबले ये पूर्वसाधिते ते रसैः = षड्भिर्विनिहते गुणिते निजाः = स्वकीयाः रश्मयः = किरणा भवन्ति । अर्थात् चेष्टाबलानुरोधेन चेष्टारश्मयः, उच्चबलानुरोधेन चोच्चरश्मयो भवन्तीत्यर्थः । इह चेष्टातुङ्गबलाहतेः = चेष्टाबलोच्च बलयोर्घातात्पदं = मूलं इष्टं स्यात् । तथा बलोनैकयोः = चेष्टाबलोनरूपतुङ्गबलोनरूपयोर्घातान्मूलं फलं यत्तत्कष्टं स्यात् । हि = पादपूरणार्थमेव । अथ दशाफलम्—तद्रूपं = इष्टकष्टानुरूपं दशायाः फलं भवति । अर्थात्

इष्टाधिक्ये शुभफलाधिक्यं कष्टाधिक्ये चाशुभफलाधिक्यम्। तत्र च इष्टकष्टसाम्ये शुभाशुभफलयोरपि साम्यमेव। ग्रहस्य वीर्यं = षड्बलैक्यम्, दृक् = दृष्टिश्च द्वे पृथक् २ इष्टकष्टगुणिते ते इष्टकष्टाह्वये भवतः। अर्थादिष्टगुणितमिष्टबलं कष्टगुणितञ्च कष्टबलम्। एवमेवेष्टगुणिता दृष्टिरिष्टदृष्टिः कष्टगुणिता च दृष्टिः कष्टदृष्टिरिति भवति।

उप०—स्वपरमोच्चस्थाने स्थिते ग्रहे परमाधिकाः सप्तमिता रश्मिः, परमनीचस्थाने च स्थिते ग्रहे परमाल्पो रूप-(१) तुल्यो रश्मिर्भवतीति प्राचीनानां मतम्। तत्रोच्चतुल्ये ग्रहे नीचग्रहान्तरं परमं षड्राशितुल्यं जायते; नीचतुल्ये च ग्रहे नीचग्रहान्तरं शून्यं भवति। अतो नीचग्रहान्तरवशेनैव रश्मिसाधनं युक्तियुक्तम्। तत्रानुपातो यदि षड्राशितुल्येन नीचग्रहान्तरेण षण्मिता ग्रहरश्मिवृद्धिर्भवति तदेष्टनीचग्रहान्तरेण किमिति

फलमिष्टरश्मिवृद्धिः= $\frac{६\times(\text{ग्र.} \backsim \text{नी.})}{६}$ = ६×उच्चबलम्। यतो हि

नीचग्रहान्तरं षड्भक्तमुच्चबलं भवत्येव। अनया नीचस्थानीया रश्मिः रूप-(१) युता जाता इष्टोच्चरश्मिः=

१+(६×उच्चबलं)। एवं षण्मिते चेष्टाकेन्द्रे चेष्टारश्मिः = ७, शून्ये च चेष्टारश्मिः = १। अतोऽनुपातेनेष्टचेष्टारश्मिवृद्धिः =

$\frac{६\times\text{चेष्टाबलम्}}{६}$ = ६×चे० ब०। अत इष्टचेष्टारश्मिः =

१+६×चे० ब०। अत उपपन्नम्।

इष्टकष्टोपपत्तिः—स्वोच्चराशिस्थिते ग्रहे रूपमितं शुभफलं पूर्णम्, अशुभफलं च तत्र शून्यसमं, तत्रोच्चबलमपि पूर्णं रूपमितं जायते। नीचस्थे ग्रहे विपरीतम्। तत्र षण्मिते चेष्टाकेन्द्रे शुभफलं पूर्णं रूपमितमशुभफलाभावश्च। तत्र चेष्टाबलमपि पूर्णमेव रूपमितम्। शून्ये चेष्टाकेन्द्रे अशुभफलं पूर्णं शुभफलं च शून्यं, तत्र चेष्टाबलमपि शून्यमेव। एतेन चेष्टोच्चबलवशेनैव शुभाशुभफलयोर्वृद्धिह्रासाविति विज्ञाय चेष्टोच्चबलयोगत एव शुभाशुभरूपयोरिष्टकष्टयोरानयनं युक्तियुक्तम्। अतोऽनुपातो यदि परमोच्चबलचेष्टाबलयोर्योगेन रूपद्वयेन शुभफलं पूर्णं रूपमितं लभ्यते तदेष्टबलचेष्टाबलयोर्योगेन किमिति लब्धमिष्टशुभम्।

इष्टम् $= \frac{१ \times (\text{चे० ब० + उ० ब०})}{२}$। तत्रेष्टशुभफलोनं रूपं कष्ट

भवत्यतो कष्टम् $= १ - \frac{(\text{चे० ब० + उ० ब०})}{२}$

$\frac{२ - (\text{चे० ब + उ० ब०})}{२} = \frac{२ - \text{चे० ब०} - \text{उ ब०}}{२}$

$= \frac{१ - \text{चे० ब} + १ - \text{उ ब०}}{२}$। अत्र बलयोगार्धबलोनैकयोगार्धस्थाने

स्वल्पान्तरात् तद्घातमूलं स्वीकृतम्। तत्र यदि चे० ब =

$\frac{\text{चे० ब + उ० ब०}}{२} = \frac{(\text{चे० ब० + उ० ब०}) \sqrt{\text{चे० ब०} \times \text{उ० ब०}}}{२ \times \sqrt{\text{चे० ब०} \times \text{उ० ब०}}}$

$= \frac{२ \times \text{चे० ब०} \sqrt{\text{चे० ब०} \times \text{उ० ब०}}}{२ \sqrt{\text{चे० ब० २}}}$

$= \sqrt{\text{चे० ब०} \times \text{उ० ब०}}$ अत उपपन्नम्। वस्तुतोऽत्र

बलयोगार्धमिष्टम्, बलोनैकयोगार्धं कष्टमित्येव युक्तियुक्तम्।

ग्रहस्य शुभाशुभफलं ग्रहबलग्रहदृष्टिवशादेव जायेते। अत एव "वीर्यं दृक् पृथगिष्टकष्टगुणिते द्वे चेष्टकष्टाह्वये" इत्यपि साधुसङ्गच्छते।

हि० टी०—आनीत चेष्टाबल को ६ से गुणाकर गुणनफल में १ जोड़ने पर चेष्टारश्मि तथा उच्चबल को ६ से गुणाकर १ जोड़ने पर उच्चरश्मि होती है। चेष्टाबल और उच्चबल के गुणनफल का मूल लेने पर इष्ट होता है। चेष्टाबल को एक में घटाकर जो हो उसे एक में घटा हुआ उच्चबल से गुणाकर गुणनफल का मूल लेने से कष्ट होता है। इष्ट और कष्ट के अनुरूप ही दशा का फल होता है। अर्थात् इष्ट यदि अधिक हो तो शुभ फल की अधिकता और कष्ट यदि अधिक हो तो अशुभ फल की अधिकता होती है। इष्ट और कष्ट यदि दोनों तुल्य हों तो शुभ और अशुभ फल तुल्य होते हैं। ग्रहों के पूर्वानीत षड्बलैक्य को इष्ट से गुणा करने पर इष्टबल तथा कष्ट से गुणा करने पर कष्टबल होता है। ग्रहों की दृष्टि को इष्ट से गुणा करने पर इष्ट दृष्टि तथा कष्ट से गुणा करने पर कष्ट दृष्टि होती है।

उदा०— चेष्टारश्मि—

सूर्य — { (०।१३।४१) × ६ } + १ = २।२२।६

चन्द्र— { (०।१८।४८) × ६ } + १ = २।५२।४८

भौम— { (०।१७।२५) × ६ } + १ = २।४४।३०

बुध — { (०।११।१६) × ६ } + १ = २।७ ।३६

गुरु — { (० । ५।१४) × ६ } + १ = १।३१।२४

शुक्र— { (० । २।३७) × ६) + १ = १।१५।४२

शनि— { (० । ३।५५) × ६) + १ = १।२३।३०

उच्चरश्मिसाधन—

सूर्य — { (० । ४।१३) × ६ } + १ = १।२५।१८

चन्द्र— { (०।२६।५१) × ६ } + १ = ३।४१।६

भौम— { (०।१७।१२) × ६ } + १ = २।४३।१२

बुध — { (०।२७।२४) × ६ } + १ = ३।४४।२४

गुरु — { (० । ५।५६) × ६ } + १ = १।३५।३६

शुक्र — { (० । ३।१७) × ६ } + १ = १।१९।४२

शनि— { (०।२१।२२) × ६ } + १ = ३। ८।१२

इष्टसाधन—

इष्ट = √ चेष्टाबल × उच्चबल

सूर्य = √ (०।१३।४१) × (०।४।१३) = ०।०।७।३३

चन्द्र = √ (०।१८।४८) × (०।२६।५१) = ०।०।२२।२८

भौम = √ (०।१७।२५) × (०।१७।१२) = ०।०।१७।१७

बुध = √ (०।११।१६) × (०।२७।२४) = ०।०।१७।३३

गुरु = √ (०।५।१४०) × (० । ५।५६) = ०।०। ५।३६

शुक्र = √ (०।२।३७) × (० । ३।१७) = ०।०। ३

शनि = √ (०।३।५५) × (०।२१।२२) = ०।०।९

कष्टसाधन—

कष्ट=√(१−चेष्टाबल)×(१−उच्चबल)

सूर्य=√(१−०।१३।४१)×(१−०।४।१३) =०।०।५०।५०

चन्द्र=√(१−०।१८।४८)×(१−०।२६।५१)=०।०।३६।५७

भौम=√(१−०।१७।३५)×(१−०।१७।१२।)=०।०।४२।४१

बुध=√(१−०।११।१६)×(१−०।२७।२४) =०।०।३६।५२

गुरु=√(१−०।५।१४)×(१−०।५।२६)=०।०।५२।३२

शुक्र=√(१−०।२।३७)×(१−०।३।१७)=०।०।५७।०

शनि=√(१−०।३।५५)×(१−०।२१।२२)=०।०।४६।३३

इष्टबलसाधन—षड्बलैक्य×इष्ट=इष्टबल

सूर्य—(४।२२।१७)× ०।०।८ =०।०।३५

चन्द्र—(७।२६।५२)× ०।०।२२=०।२।४४

भौम—(५। ७।१६)× ०।०।१७=०।१।२७

बुध—(६।५५।५८)× ०।०।१८=०।२। ५

गुरु—(५।४४।२६)× ०।०।६ =०।०।३४

शुक्र—(५।१२।२६)× ०।०।३ =०।०।१६

शनि—(२। ९।५७)× ०।०।१६=० ।०।१६

कष्टबलसाधन—षड्बलैक्य×कष्ट=कष्टबल

सूर्य—(४।२२।१७)×०।०।५१=०।३।४३

चन्द्र—(७।२६।५२)×०।०।३७=०।४।३६

भौम—(५।७।१६)×०।०।४३=०।३।४०

बुध—(६।५५।५८)×०।०।४०=०।४।३७

गुरु—(५।४४।२६)×०।०।५३=०।५। ४

शुक्र—(५।१२।२६)×०।०।५७=०।४।५७

शनि—(२। ६।५७)×०।०।४७=०।१।४२

इष्टदृष्टिसाधन—ग्रहदृष्टि × इष्ट = इष्टदृष्टि

कष्टदृष्टिसाधन—ग्रहदृष्टि × कष्ट = कष्टदृष्टि

अथ ग्रहोपरि इष्टदृष्टिचक्रम्

दृश्यग्रह

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
सू.	०।०।०	०।०।४	०।०।२	०।०।०	०।०।३३	०।०।०	०।०।०
चं.	०।०।२१	०।०।०	०।०।१४	०।०।१५	०।०।८	०।०।१४	०।०।१५
मं.	०।०।०	०।०।१७	०।०।०	०।०।२	०।०।१७	०।०।१	०।०।२
बु.	०।०।०	०।०।६	०।०।८	०।०।०	०।०।७	०।०।०	०।०।०
बृ.	०।०।५	०।०।५	०।०।१	०।०।५	०।०।०	०।०।५	०।०।५
शु.	०।०।०	०।०।१	०।०।१	०।०।०	०।०।०	०।०।०	०।०।०
श.	०।०।०	०।०।८	०।०।८	०।०।०	०।०।४	०।०।०	०।०।०

द्रष्टाग्रह

अथ ग्रहोपरिकष्टदृष्टिचक्रम्

दृश्यग्रह

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
सू.	०। ०। ०	०। ०।२२	०। ०।११	०। ०। ०	०। ०। ३	०। ०। ०	०। ०। ०
चं.	०। ०।२१	०। ०। ०	०। ०।२४	०। ०।२२	०। ०।१३	०। ०।२३	०। ०।२६
मं.	०। ०। ०	०। ०।४३	०। ०। ०	०। ०। ४	०। ०।४२	०। ०। ०	०। ०। ५
बु.	०। ०। ०	०। ०।१२	०। ०।१८	०। ०। ०	०। ०।१५	०। ०। ०	०। ०। ०
बृ.	०। ०।४२	०। ०।४५	०। ०।१३	०। ०।४५	०। ०। ०	०। ०।४१	०। ०।४५
शु.	०। ०। ०	०। ०।२२	०। ०।१८	०। ०। ०	०। ०। ६	०। ०। ०	०। ०। ०
श.	०। ०। ०	०। ०।४२	०। ०।४२	०। ०। ०	०। ०।१८	०। ०। ०	०। ०। ०

भावोपरि इष्टदृष्टिचक्रम् (द्रष्टाग्रह)

	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
तनु	०।०।०	०।०।३	०।०।०	०।०।२	०।०।५	०।०।०	०।०।५
धन	०।०।२	०।०।१७	०।०।०	०।०।६	०।०।१	०।०।१	०।०।८
सहज	०।०।६	०।०।१८	०।०।१	०।०।११	०।०।०	०।०।२	०।०।६
सुख	०।०।४	०।०।१५	०।०।७	०।०।४	०।०।०	०।०।१	०।०।२
सुत	०।०।०	०।०।७	०।०।१६	०।०।१०	०।०।०	०।०।१	०।०।५
रिपु	०।०।८	०।०।१	०।०।७	०।०।१६	०।०।०	०।०।३	०।०।८
जाया	०।०।६	०।०।०	०।०।२	०।०।११	०।०।२	०।०।२	०।०।६
आयु	०।०।४	०।०।०	०।०।१७	०।०।७	०।०।५	०।०।१	०।०।७
धर्म	०।०।२	०।०।०	०।०।१६	०।०।२	०।०।५	०।०।१	०।०।४
कर्म	०।०।०	०।०।५	०।०।८	०।०।०	०।०।१	०।०।०	०।०।०
आय	०।०।०	०।०।१४	०।०।४	०।०।०	०।०।६	०।०।०	०।०।०
व्यय	०।०।०	०।०।१२	०।०।०	०।०।०	०।०।५	०।०।०	०।०।०

भावोपरि कष्टदृष्टिचक्रम्

द्रष्टाग्रह

	सू॰	चं॰	मं॰	बु॰	बृ॰	शु॰	श॰
तनु	०।०।०	०।०।५	०।०।०	०।०।५	०।०।४८	०।०।३	०।०।२५
धन	०।०।११	०।०।२६	०।०।०	०।०।२०	०।०।११	०।०।२२	०।०।४०
सहज	०।०।३८	०।०।३०	०।०।२	०।०।२४	०।०।०	०।०।३६	०।०।२८
सुख	०।०।२४	०।०।२०	०।०।१६	०।०।८	०।०।०	०।०।२०	०।०।९
सुत	०।०।२	०।०।११	०।०।४०	०।०।२२	०।०।०	०।०।१६	०।०।२८
रिपु	०।०।५१	०।०।२	०।०।१६	०।०।३५	०।०।२	०।०।५३	०।०।४०
जाया	०।०।३६	०।०।०	०।०।४	०।०।२५	०।०।१६	०।०।४०	०।०।२६
आयु	०।०।२५	०।०।०	०।०।४३	०।०।१५	०।०।४२	०।०।२५	०।०।३५
धर्म	०।०।१२	०।०।०	०।०।४०	०।०।४	०।०।४४	०।०।१०	०।०।१६
कर्म	०।०।०	०।०।८	०।०।२०	०।०।०	०।०।११	०।०।०	०।०।०
आय	०।०।०	०।०।२४	०।०।६	०।०।०	०।०।५१	०।०।०	०।०।०
व्यय	०।०।०	०।०।२१	०।०।०	०।०।०	०।०।४२	०।०।०	०।०।०

अथ सप्तवर्गशुभाशुभनिर्णयार्थं सप्तवर्गेष्टकष्टसाधनमाह—

स्वोच्चे रूपं त्रिकोणे चरणविरहितं स्वर्क्षगेऽर्धं त्रयोष्टां-
शाश्चाधीष्टर्क्षं इष्टर्क्षयुजि च चरणः स्यात्समर्क्षेऽष्टमांशः ।
भूपांशो वैरिगेहेऽध्यरिभयुजि रदांशश्च नीचे खमीशा-
दिष्टं गेहे तदूनैकमसदथ दलं षट्सु कार्यं तदैक्ये ॥ १४ ॥
षड्क्त्योः सप्तसुकोष्ठयोः प्रथमयोरिष्टासदैक्ये कृताप्ते
स्थाप्ये भदलादिषट्सु च तदर्धे वर्गपानां पृथक् ।
कृत्वोक्त्या सदसद्युती निजनिजे तन्निघ्न इष्टाशुभे
वर्गेट्तत्स्थखगोजसोः सदसतोर्घातात्पदघ्ने स्फुटे ॥ १५ ॥

अन्वयः—स्वोच्चे रूपं बलम्, त्रिकोणे चरणविरहितम्, स्वर्क्षगे अर्धम्, अधीष्टर्क्षे त्रयोष्टांशाः, इष्टर्क्षयुजि चरणः, समर्क्षे अष्टमांशः, वैरिगेहे भूपांशः, अध्यरिभयुजि रदांशः, नीचे खं बलं स्यात्। ईशाद् इष्टं गेहे स्यात्, तद् ऊनैकम् असत् स्यात्। अथ षट्सु दलम्, तदैक्ये कार्यं ॥ १४ ॥ सप्तसुकोष्ठयोः पङ्क्त्योः प्रथमयोः इष्टासदैक्ये कृताप्ते स्थाप्ये। भदलादिषु च तदर्धे स्थाप्ये। वर्गपानां पृथक् उक्त्या सदसद्युती कृत्वा तन्निघ्ने निजनिजे इष्टाशुभे वर्गेट्तत्स्थखगोजसोः सदसतोर्घातात्पदघ्ने स्फुटे भवतः ॥ १५ ॥

व्याख्या—स्वोच्चे = स्वोच्चराशौ रूपं = एकतुल्यं बलम्, त्रिकोणे = स्वमूलत्रिकोणराशौ विद्यमाने ग्रहे चरणविरहितं = पादोनमेकं बलं स्यात्। स्वर्क्षगे = स्वराशौ स्थिते ग्रहे अर्धं = रूपार्धम्, अधीष्टर्क्षे = स्वाधिमित्रराशौ त्रयोष्टांशाः = त्रिगुणिताष्टमांशाः बलं स्यात्। वैरिगेहे = स्वशत्रुराशौ विद्यमाने भूपांशः = रूपषोडशांशः, अध्यरिभयुजि = अधिशत्रुराशौ रदांशः = रूपद्वात्रिंशद्भागः बलं स्यात्। ईशाद् = ग्रहेशवशात् इष्टं = शुभं गेहे = गृहे भवेत्। तदूनैकम् = इष्टोनमेकं गृहेऽसत् कष्टं स्यात्। अथ = अनन्तरं षट्सु = होरादिषड्वर्गेषु आगतबलं दलम् = अर्धं स्थाप्यम्। सप्तसुकोष्ठयोः = सप्तगृहहोराद्रेष्काणसप्तमांशनवमांशद्वादशांशत्रिंशांशाः सुकोष्ठा विद्यन्ते ययोस्ते सप्तसुकोष्ठे तयोः सप्तसु-

कोष्ठयोः, पङ्क्त्योः = शुभाशुभपङ्क्त्योः, प्रथमयोः = गृहस्थानीय-कोष्ठयोः, इष्टासदैक्ये = शुभाशुभैक्ये, कृताप्ते = चतुर्भिर्भक्ते स्थाप्ये। इष्टैक्यं चतुर्भिर्भक्तं शुभपङ्क्तिगृहकोष्ठे, कष्टैक्यञ्च चतुर्भिर्भक्तम-शुभपंक्तिगृहकोष्ठे स्थाप्यमिति भावः। भदलादिषु = होरादिषु षड्वर्गेषु च तदर्धे = गृहस्थापितशुभाशुभयोरर्धे दले स्थाप्ये। वर्गपानां = गृहादिसप्तवर्गेशानां, पृथक् पृथक् उक्त्या = पूर्वोक्तयुक्त्या, सदसद्युती = शुभाशुभयोगौ कृत्वा तन्निघ्ने निजनिजे = इष्टाशुभे कार्ये! ते मध्यमे शुभाशुभे भवतः। ते च वर्गेट्तत्स्थखगोजसोः सदसतोर्घातात्प-दघ्ने = वर्गेशवर्गस्थग्रहशुभाशुभबलैक्यघातमूलगुणिते स्फुटे शुभाशुभे भवतः॥ १४+१५।

उपपत्तिः—अथेशादिष्टमित्यादेरुपपत्तिर्यथा — शुभाशुभफलयोर्योगं रूपतुल्यमतो स्वामिवशाद् यद् गृहे शुभं तदूनं रूपं गृहेऽशुभफलं भवितु-मर्हत्येव। तथा च "प्रधानता राशिफलस्य नूनं होरादिवर्गाद्द्विगुणं गृहं यत्" इति वचनात् होराद्यपेक्षया गृहस्य द्विगुणत्वाद् गृहस्थापितस्य बलस्य दलं होरादिषु स्थापनीयमिति सयुक्तिकमेव। तथा चाग्रे वर्गेश-शुभाशुभयोगेन गुणनीयमस्त्यतः कार्ये तदैक्ये इति योगकरणमपि युक्तियुक्तमेव।

अथ तद्गृहादिफलं चतुर्गुणितगृहफलसमं भवति, यतोहि गृहफलार्धं षड्गुणितं त्रिगुणितगृहफलं—

$$\frac{\text{गृहफलं}}{२} \times ६ = ३ \text{ गृहफलं, होरादिषु षड्वर्गेषु वर्तते;}$$

तद् गृहफलसहितं पूर्वोक्तैक्यम् = ऐक्यम् = गृहफलम् × ४

$$\text{अतो, } \frac{\text{ऐक्यम्}}{४} = \text{गृहफलम्।}$$

अत एव शुभाशुभपंक्त्योः प्रथमयोरिष्टासदैक्ये कृताप्ते स्थाप्ये इत्युक्तम्। होरादिषु अर्धं पूर्वोक्तविधिनात्रापि समुचितमेव। तथा च भावाधिपे बलयुक्ते सति भावस्थग्रहफलं सकलं भवत्यत एव वर्गेशस्य सदसदैक्यनिजनिजे इष्टाशुभे गुणिते ते मध्यमशुभाशुभे गृहीते। एवं वर्गेशवर्गस्थशुभाशुभबलवशादेव तत्फलस्य स्फुटता भवेदतोऽनुपातो यदि

वर्गेशवर्गस्थयोर्ग्रहयोः परमशुभाशुभबलयोगेन रूपद्वयेन (२) सम्पूर्णं फलं रूप-(१) तुल्यं प्राप्यते तदेष्टवर्गस्थवर्गेशयोः शुभाशुभबलयोगेन किमितीष्टबलयोगानुपातेनेष्टफलम्—

$$= १ \times \frac{(\text{वर्गस्थशुभबलम्} + \text{वर्गेशशुभबलम्})}{२}$$

$$= २ \; (\text{वर्गस्थशुभबलम्} + \text{वर्गेशशुभबलम्})$$

$$= \sqrt{(\text{वर्गस्थशुभब०} \times \text{वर्गेशशुभब०})}$$

एवम्, अशुभबलयोगानुपातेनाशुभफलं भवति। तत्र अशुभफलम्—

$$= \frac{१ \times (\text{वर्गस्थ अशुभबलम्} \times \text{वर्गेशअशुभबलम्})}{२}$$

$$= \sqrt{(\text{वर्गस्थ अशुभब०} \times \text{वर्गेश अशुभब०})}।$$

अतो आभ्यां गुणिते पूर्वोक्तशुभाशुभे स्फुटे भवितुमर्हतः।

हि० टी०—ग्रह अपनी उच्चराशि में स्थित हो तो रूप (१) तुल्य बल प्राप्त होता है। अपने मूलत्रिकोण में स्थित हो तो चतुर्थांश रहित अर्थात् तीन चरण ($१ - \frac{१}{४}$ = ०।४५), अपनी राशि में स्थित हो तो आधा ($१-\frac{१}{२}$) बल, अपने अधिमित्र की राशि में स्थित हो तो त्रिगुणित अष्टमांश (०।२२।३०) अपने मित्र की राशि में स्थित हो तो चतुर्थांश ($\frac{१}{४}$ = ०।१५) बल, समराशि में स्थित हो तो अष्टमांश ($\frac{१}{८}$ = ०।७।३०) बल, शत्रु की राशि में स्थित हो तो षोडशांश ($\frac{१}{१६}$ = ०।३।४५) बल, अधिशत्रु की राशि में स्थित हो तो बत्तीसवां भाग (३२वांश) बल ($\frac{१}{३२}$ = ०।१।५२) एवं नीचराशि में स्थित हो तो शून्यबल प्राप्त होते हैं। इस प्रकार वर्गेश वश साधित बल गृह स्थान का शुभ बल होता है। उसको एक में घटाने पर गृह स्थान का अशुभ बल होता है। होरादि षड्वर्ग में गृहवत् जो बल आवे उसका आधा स्थापन करना चाहिए। पुनः सप्तवर्गस्थ बलों का योग करे। सात-सात कोष्ठक के शुभ एवं अशुभ की दो पङ्क्ति लिखकर शुभपङ्क्ति के प्रथम (गृह कोष्ठक) में उपरोक्त शुभैक्य का चतुर्थांश और अशुभपङ्क्ति के प्रथम (गृह कोष्ठक) में अशुभैक्य का चतुर्थांश रखे। होरादि षड्वर्ग में गृह स्थापित बल का आधा स्थापन करना चाहिये। पुनः वर्गेशों के पृथक्-पृथक् शुभाशुभ के योग से पृथक् पृथक् इष्ट कष्ट को गुणा करने पर मध्यम शुभाशुभ होता है। वर्गेश एवं वर्गस्थ दोनो ग्रहों के शुभाशुभ बलों के घात का मूल स्फुट शुभाशुभ होता है।

उदाहरणं—

शुभबलचक्रम्

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	ग्रह
०।१५। ०	०।४५।०	०।३०।०	०।२२।३०	०। ३।४५	०।२२।३०	०। ७।३०	गृहबल
०। ३।४५	०। ३।४५	०। ३।४५	०। ३।४५	०। ३।४५	०। ०।५६	०। ३।४५	होराबल
०। ३।४५	०। ७।३०	०।११।१५	०। ७।३०	०। ०।५६	०।११।१५	०। ३।४५	द्रेष्काणबल
०।[illegible]२०	०। १।५२	०। ३।४५	०। १।५२	०।११।१५	०। ७।३०	०।१५। ०	सप्तमांशबल
०। ०।५६	०।१५।०	०। ७।३०	०। १।५२	०। १।५२	०। १।५२	०। १।५२	नवमांशबल
०। ३।४५	०। ७।०	०।११।१५	०। ३।४५	०। ०।५६	०। ७।३०	०। ३।४५	द्वादशांशबल
०। ३।४५	०।१५।०	०। ३।४५	०।१५। ०	०। १।५२	०।१५। ०	०। ३।४५	त्रिंशांशबल
०।३८।२६	१।३५।७	१।११।१५	०।५६।१४	०।२४।२१	१। ६।३३	०।३६।२२	बलयोग

अशुभबलचक्रम्

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	
०।४५। ०	०।१५। ०	०।३०। ०	०।३७।३०	०।५६।१५	०।३७।३०	०।५२।३०	गृहबल
०।२६।१५	०।२६।१५	०।२६।१५	०।२६।१५	०।२६।१५	०।२६। ४	०।२६।१५	होराबल
०।२६।१५	०।२२।३०	०।१८।४५	०।२२।३०	०।२६। ४	०।१८।४५	०।२६।१५	द्रेष्काणबल
०।२२।३०	०।२८। ८	०।२६।१५	०।२८। ८	०।१८।४५	०।२२।३०	०।१५। ०	सप्तमांशबल
०।२६। ४	०।१५। ०	०।२२।३०	०।२८। ८	०।२८। ८	०।२८। ८	०।२८। ८	नवमांशबल
०।२६।१५	०।२२।३०	०।१८।४५	०।२६।१५	०।२६। ४	०।२२।३०	०।२६।१५	द्वादशांशबल
०।२६।१५	०।१५। ०	०।२६।१५	०।१५। ०	०।२८। ८	०।१५। ०	०।२६।१५	त्रिंशांशबल
३।२१।३४	२।३४।२३	२।४८।४५	३। ३।४६	३।३५।३६	२।५३।२७	३।२०।३८	बलयोग

शुभपङ्क्तिचक्रम्

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	
०। ६।३७	०।२३।४७	०।१७।४६	०।१४। ४	०। ६। ५	०।१६।३८	०।६। ५०	गृहबल
०। ४।४८	०।११।५४	०। ८।५५	०। ७। २	०। ३। २	०। ८।१६	०।४। ५५	होराबल
०। ४।४८	०।११।५४	०। ८।५५	०। ७। २	०। ३। २	०। ८।१६	०।४। ५५	द्रेष्काणबल
०। ४।४८	०।११।५४	०। ८।५५	०। ७। २	०। ३। २	०। ८।१६	०।४। ५५	सप्तमांशबल
०। ४।४८	०।११।५४	०। ८।५५	०। ७। २	०। ३। २	०। ८।१६	०।४। ५५	नवमांशबल
०। ४।४८	०।११।५४	०। ८।५५	०। ७। २	०। ३। २	०। ८।१६	०।४। ५५	द्वादशांशबल
०। ४।४८	०।११।५४	०। ८।५५	०। ७। २	०। ३। २	०। ८।१६	०।४। ५५	त्रिशांशबल

अशुभपङ्क्तिचक्रम्

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	
०।५०।२४	०।३६। ६	०।४२।११	०।४५।५६	०।५३।५५	०।४३।२२	०।५०।१०	गृहवल
०।२५।१२	०।१८। ३	०।२१। ६	०।२२।५८	०।२६।५७	०।२१।४१	०।२५। ५	होरावल
०।२५।१२	०।१८। ३	०।२१। ६	०।२२।५८	०।२६।५७	०।२१।४१	०।२५। ५	द्रेष्काणवल
०।२५।१२	०।१८। ३	०।२१। ६	०।२२।५८	०।२६।५७	०।२१।४१	०।२५। ५	सप्तमांशवल
०।२५।१२	०।१८। ३	०।२१। ६	०।२२।५८	०।२६।५७	०।२१।४१	०।२५। ५	नवमांशवल
०।२५।१२	०।१८। ३	०।२१। ६	०।२२।५८	०।२६।५७	०।२१।४१	०।२५। ५	द्वादशांशवल
०।२५।१२	०।१८। ३	०।२१। ६	०।२२।५८	०।२६।५७	०।२१।४१	०।२५। ५	त्रिंशांशवल

वर्गेश शुभयुति गुणित शुभपङ्क्ति साधन—

ग्रह जिस ग्रह की राशि में हो उसके शुभपङ्क्ति के योग से ग्रह के गृहादि शुभपङ्क्ति को गुणा करने पर वर्गेश शुभयुति गुणित शुभपङ्क्ति चक्र में ग्रह का गृहादि में फल होता है। जैसे रवि बुध के गृह में है। बुध का शुभवलयोग ०।५६।१४ है। रवि का शुभपङ्क्ति में गृह में फल ०।६।३७ है। अतः दोनों का गुणा करने पर फल ०।६।१ हुआ। अतः वर्गेश शुभयुति गुणित शुभपङ्क्ति चक्र के रवि के गृह में ०।६।१ लिखा जायेगा। इसी प्रकार रवि चन्द्र की होरा में है। चन्द्र का शुभचक्र में योग १।३५।७ रवि का शुभपङ्क्ति होराचक्र में फल ०।४।४८ है। दोनों का गुणा करने पर गुणन फल ०।७।३७ है। अतः होरा के कोष्ठक में ०।७।३७ लिखा जायेगा। इसी प्रकार द्रेष्काण आदि में होगा।

वर्गेशशुभयुतिगुणितशुभपङ्क्तिचक्रम्

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
गृ.	०।६। १	०।२६।३२	०।२१। ६	० । ६। १	०।३।५६	०।१५।३५	०।६।२०
हो.	०।७।३७	० । ७।३७	०।१४। ८	०।११। ६	०।१।५६	०।१३।११	०।७।४८
द्रे.	०।३। ६	० । ७।४८	० । ३।३७	० । ८ २१	०।२।५१	० । ७।५८	०।५।५०
स.	०।४।३०	०।१४। ८	०।१४। ८	० । ४।३७	० ३।३६	० । ६।५३	०।३।१४
न.	०।५।१६	०।१८।५२	० । ६।५३	० । २।५१	०।१।५९	० । ३।२३	०।२। ०
द्वा.	०।३। ६	० । ७।४८	० । ३।३७	०।११। ६	०।२।५१	० । ६।५३	०।७।४८
त्रि.	०।१।५७	० । ७।४८	० । ८।२१	० । ७।४८	०।०।५०	० । ७।५८	०।५।२७

वर्गेश अशुभयुतिगुणित अशुभपङ्क्तिसाधन—

ग्रह जिस ग्रह की राशि में हो उसके अशुभपङ्क्ति के योग से ग्रह के गृहादि अशुभपङ्क्ति को गुणा करने पर वर्गेशाशुभयुतिगुणिताशुभपङ्क्ति चक्र में ग्रह का गृहादि में फल होता है। जैसे रवि बुध के गृह में है। बुध का अशुभबलयोग ३।३।४६ है। रवि का अशुभपङ्क्ति के गृह में फल ०।५०।२४ है। दोनों को गुणा करने पर गुणनफल २।३४।२२ हुआ। अतः वर्गेश अशुभयुतिगुणित अशुभपङ्क्ति चक्र के रवि के गृह में २।३४।२२ लिखा जायेगा। इसी प्रकार रवि चन्द्र की होरा में है। चन्द्र का अशुभचक्र में योग २।३४।२३ है। रवि

वर्गेश-अशुभयुतिगुणित-अशुभपंक्तिचक्रम्

ग्र.	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
गृ.	२।३४।२२	१।४४।२२	२।१०।३८	२।३४।१६	३। ०।१७	२।१२।४६	२।४८।३२
हो.	१। ०।३८	१। ०।३८	०।५०।४६	०।५५।१६	१।३०।३२	०।५२।११	१। ०।३२
द्रे.	१।२४।१६	१। ०।२१	१।१५।५०	१। ४।३४	१।२२।३२	१। ६।२५	१।१०।२३
स.	१।१७। ८	०।५०।४६	०।५०।४६	१।१६।४८	१।१५।४८	१। ०।५६	१।२३।५३
न.	१।१२।५१	०।४३।२६	१। १। ०	१।२२।३३	१।३०। ८	१।२१।३२	१।३०। ८
द्वा.	१।२४।१६	१। ०।२१	१।१५।५०	०।५५।१६	१।२२।३२	१। ०।५६	१। ०।२२
त्रि.	१।३०।३४	१। ०।२१	१। ४।३७	१। ६।२४	१।३६।५२	१। ६।२५	१।१२।३१

का अशुभपङ्क्ति होराचक्र में ०।२५।१२ है। दोनों का गुणा करने पर गुणनफल १।०।३८ है। अतः होरा के कोष्ठक में १।०।३८ लिखा जायेगा। इसी प्रकार द्रेष्काणादि अन्यग्रहों का भी समझना चाहिये।

वर्गेशतत्स्थग्रहयोरिष्टगुणितषड्बलैक्ययोर्घातमूलम्—

ग्रह जिस ग्रह के गृहादि सप्तवर्ग में हो उसके इष्टगुणित षड्बलैक्य को ग्रह के इष्टगुणितषड्बलैक्य से गुणा कर मूल लेने पर "वर्गेशतत्स्थग्रहयोरिष्टगुणितषड्बलैक्ययोर्घातमूलम्" इस चक्र में ग्रह का गृहादि वर्ग में फल होता है। जैसे रवि बुध के गृह में है। इष्टगुणित बुध का षड्बलैक्य ०।२।५ है। इसे इष्टगुणितसूर्य का षड्बलैक्य ०।०।३५ से गुणा कर मूल लेने पर ०।०।१ यह सूर्य के गृहस्थान में फल हुआ। इसी प्रकार सूर्य चन्द्र की होरा में है। अतः इष्टगुणित चन्द्र का षड्बलैक्य ०।२।४४ को इष्टगुणित रवि का षड्बलैक्य ०।०।३५ से गुणा कर मूल लेने पर ०।०।१ फल होरा स्थान में होगा। इसी प्रकार सप्तवर्ग में फल सभी ग्रहों का आनयन होता है।

स्पष्टार्थचक्रम्—

	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
गृ.	०।०।१	०।०।१	०।०।१	०।०।२	०।०।०	०।०।१	०।०।०
हो.	०।०।१	०।०।१	०।०।२	०।०।२	०।०।०	०।०।१	०।०।१
द्रे.	०।०।०	०।०।१	०।०।१	०।०।२	०।०।१	०।०।१	०।०।१
स.	०।०।१	०।०।२	०।०।२	०।०।१	०।०।१	०।०।०	०।०।०
न.	०।०।०	०।०।३	०।०।०	०।०।१	०।०।०	०।०।०	०।०।०
द्वा.	०।०।०	०।०।१	०।०।१	०।०।२	०।०।१	०।०।०	०।०।१
त्रिं.	०।०।०	०।०।१	०।०।१	०।०।१	०।०।०	०।०।१	०।०।०

वर्गेशतत्स्थग्रहयोः कष्टगुणितषड्बलैक्ययोर्घातमूलम्—

ग्रह जिस ग्रह के सप्तवर्गों में हो उसके कष्टगुणित षड्बलैक्य को ग्रह के कष्टगुणित षड्बलैक्य से गुणा कर मूल लेने पर "वर्गेशतत्स्थग्रहयोः कष्टगुणितषड्बलैक्ययोर्घातमूलम्" इस चक्र में ग्रह का गृहादिवर्ग में फल होता है। जैसे सूर्य बुध के गृह में है। कष्टगुणित बुध का षड्बलैक्य ०।४।२७ है। इसे कष्टगुणित सूर्य के षड्बलैक्य ०।३।४३ से गुणा कर मूल लेने पर ०।०।४ यह गृह स्थान

में फल होगा। इसी प्रकार सूर्य चन्द्र की होरा में है। कष्टगुणित चन्द्र का षड्बलैक्य ०।४।३६ तथा कष्टगुणित रवि का षड्बलैक्य ०।३।४३ दोनों को गुणाकर मूल लेने पर ०।०।४ यह होरा स्थान का फल हुआ। इसी प्रकार अन्य वर्ग एवं ग्रहों का आनयन होगा।

स्पष्टार्थचक्रम्

	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
गृ.	०।०।४	०।०।५	०:०।४	०।०।४	०।०।३	०।०।५	०।०।२
हो.	०।०।४	०।०।४	०।० ४	०।०।४	०।०।४	०।०।५	०।०:३
द्रे.	०।०।२	०।०।३	०।०।४	०।०।४	०।०।५	०।०।५	०।०।२
स.	०।०।४	०।०।४	०'०।४	०।० ३	०।०।४	०।० ४	०।०।२
न.	०।०।४	०।०।५	०।०।४	०।०।५	०:०।३	०।०।५	०।०।३
द्वा.	०।०।२	०।०।३	०।०।४	०।०'४	०।०।५	०।०।४	०।०।३
त्रिं.	०।०।४	०।०।३	०।०।४	०।०।५	०।०।५	०।०।५	०।०।३

स्फुटशुभसाधन—

ग्रहों के "वर्गेश शुभयुतिगुणित शुभपङ्क्तिचक्र" के गृहादिसप्तवर्ग का फल एवं "वर्गेशतत्स्थग्रहयोरिष्टषड्बलैक्ययोर्घातमूलम्" इस चक्र के गृहादिसप्तवर्ग का फल इन दोनों को गुणा करने पर स्फुटशुभचक्र में गृहादि वर्गों में फल होते हैं। यथा—रवि का ०।६।१ एवं ०।०।१ का गुणा करने पर ०।०।० यह स्फुटचक्र में गृह का फल है। इसी प्रकार सभी ग्रहों का आनयन होता है।

प्रकृत उदाहरण के स्फुटशुभचक्र में चन्द्रनवांश का फल ०।०।१ तथा शेष ग्रहों के सप्तवर्ग का फल शून्य है।

स्फुटाशुभसाधन—

"वर्गेशाशुभयुतिगुणिताशुभपङ्क्ति चक्र" के गृहादि फलों एवं "वर्गेशतत्स्थ-ग्रहयोः कष्टगुणितषड्बलैक्ययोर्घातमूलम्" इस चक्र के गृहादि फलों को गुणा

करने पर स्फुटाशुभ होता है। यथा रवि २।३४।१७ एवं ०।०।४ को गुणा करने पर ०।०।२ यह गृह स्थान का अशुभ फल हुआ। इसी प्रकार सभी ग्रहों का साधन होता है।

स्फुटाशुभचक्रम्

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
गृ.	०।०।२	०।०।९	०।०।९	०।०।१०	०।०।९	०।०।११	०।०।६
हो.	०।०।४	०।०।४	०।०।३	०।०। ४	०।०।६	०।०। ४	०।०।३
द्रे.	०।०।३	०।०।३	०।०।१	०।०। ४	०।०।७	०।०। ६	०।०।२
स.	०।०।५	०।०।३	०।०।३	०।०। ४	०।०।५	०।०। ४	०।०।३
न.	०।०।५	०।०।४	०।०।४	०।०। ७	०।०।५	०।०। ७	०।०।५
द्वा.	०।०।३	०।०।३	०।०।५	०।०। ४	०।०।७	०।०। ४	०।०।३
त्रिं.	०।०।६	०।०।३	०।०।४	०।०। ६	०।०।८	०।०। ७	०।०।४

योगजायुर्दायस्यामितायुर्दायस्योदाहरणपूर्वकमंशायुःसाधनार्थं चेष्टा-गुणकादिसाधनम्—

कर्कीन्दिवज्ययुतोदये बुधसितौ केन्द्रे त्र्यरीशेतरै-
रायुर्विद्धयमितं हि योगजमिहान्यत्रोच्यतेऽथोन्मितम्।
त्र्यल्पाश्चेत्किरणाः सरूपकिरणाङ्घ्रिश्चेत्त्रयोर्ध्वा विभू-
गोऽर्धं चैष्टिकतुङ्गसम्भवगुणौ तद्घातमूलं स्फुटः ॥१६॥

अन्वयः—कर्कीन्दिवज्ययुतोदये बुधसितौ केन्द्रे त्र्यरीशेतरैस्तदा अमितमायुर्विद्धि। अन्यत्र योगजमायुर्विद्धि। अत्रोन्मितमायुरुच्यते। चेत् किरणास्त्र्यल्पास्तदा सरूपकिरणाङ्घ्रिः, चेत्त्रयोर्ध्वा विभूगोऽर्धं चैष्टिकतुङ्गसम्भवगुणौ भवतः। तद्घातमूलं स्फुटः स्यात्।

व्याख्या—कर्कीन्दिवज्ययुतोदये = चन्द्रगुरुसहिते कर्कलग्ने, बुधसितौ=

बुधशुक्रौ केन्द्रे स्थितौ भवतस्तथा त्र्यरीशेतरैः = तृतीयषष्ठैकादशेष्वितरैः सूर्यभौमशनैश्चरैश्चेत्तदा योगेऽस्मिन्नमितायुर्विद्धि = जानीहि। अन्यत्र= अन्यस्मिन्ग्रन्थे योगजमायुर्विद्धि। अस्मिन्ग्रन्थे उन्मितम् = गणितागतमायुरुच्यते। चेद्यदि किरणाः = पूर्वसाधितचेष्टोच्चरश्मयस्त्र्यल्पाः = त्र्यूनास्तदा सरूपकिरणाङ्घ्रिः। चेद्यदि किरणास्त्रयोर्ध्वाः = त्र्यधिकास्तदा विभूगोऽर्धं = रूपोनकिरणार्धं चैष्टिकतुङ्गसम्भवगुणौ भवतः (चेष्टारश्मिवशाच्चेष्टागुणकः, उच्चरश्मिवशाच्चोच्चगुणक इति)। तद्घातमूलं = चेष्टोच्चगुणकयोर्घातमूलं स्फुटः = स्फुटगुणकः स्यात्।

उप०—ग्रहस्थितिवशादमितायुर्भवतीत्यत्र प्राचीनाचार्याणां वचनमेव प्रमाणम्। अथ चेष्टोच्चगुणकोपपत्तिः—

"शत्रुक्षेत्रे त्र्यंशं नीचेऽर्धं सूर्यलुप्तकिरणाश्च।
ह्रपयन्ति स्वादायान्नास्तं यातौ रविजशुक्रौ॥

तथा च—"वक्रोच्चयोस्त्रिगुणितम्" इति वराहमिहिराचार्योक्तेस्त्र्यंशायुषि परमोच्चस्थाने त्रितयं गुणः, परमनीचस्थाने चार्धहानिर्भवति। एवमेव परमोच्चस्थाने सप्तकिरणाः परमनीचे च रूपमितो रश्मिः स्यात्। नीचादग्रे यत्रैकरश्मितुल्योपचयस्तत्र हान्यभावो यत्र च रश्मिद्वयोपचयस्तत्रार्धं गुणोपचयोऽत एवानुपातो यदि रश्मिद्वये रूपार्धं गुणस्तदा रूपोनरश्मिभिः क इति =

$$\frac{१}{२} \times \frac{(\text{रश्मि} - १)}{२} = \frac{(\text{रश्मि} - १)}{४}$$ एतेन रूपार्धमितगुणो युत इष्टगुणः =

$$\frac{(\text{रश्मि} - १)}{४} + \frac{१}{२} = \frac{(\text{रश्मि} + १)}{४}$$ इति त्रयाल्पे रश्मिसंजाते सिध्यति। रश्मित्रयाधिक्येऽनुपातो यदि रश्मित्रयाधिकैश्चतुर्भिस्तैर्द्विमितौ गुणस्तदेष्टरश्मित्रयोनरश्मिभिः क इति =

$$२ \times \frac{(\text{रश्मि} - ३)}{४} = \frac{(\text{रश्मि} - ३)}{२}$$ अनेन फलेन रूपमितो गुणो युतो जात इष्टगुणः। अतो

$$\text{इष्टगुणः} = १ + \frac{\text{रश्मि} - ३}{२} = \frac{\text{रश्मि} - १}{२}$$। एवमेव

परमवक्रस्थानेऽपि बोध्यम्। तद्घातमूलं स्फुटो भवतीति पूर्ववदेव बोध्यम्।

हि० टी०—जन्मसमय में वर्क लग्न में चन्द्र और गुरु विद्यमान हों, बुध और शुक्र केन्द्र (१, ४, ७, १०) में विद्यमान हों और शेष ग्रह (सूर्य, मङ्गल, शनि) तृतीय, षष्ठ, एकादश (३, ६, ११) स्थान में विद्यमान हों तो अमितायु योग होता है। योगसम्बन्धी आयु अन्यत्र ग्रन्थों से ज्ञात करें। इस ग्रन्थ में गणितागत आयुर्दाय कहता हूँ। चेष्टागुणकसाधन—पूर्वसाधित रश्मि यदि ३ से अल्प हो तो रश्मि में १ जोड़कर योगफल का चतुर्थांश ग्रहण करना, यदि पूर्वसाधितरश्मि ३ से अधिक हो तो रश्मि में १ घटाकर आधा करने से चेष्टारश्मि द्वारा चेष्टागुणक एवं उच्चरश्मि द्वारा उच्चगुणक होता है। चेष्टा एवं उच्च दोनों गुणकों के घात का मूल स्फुटगुणक होता है।

उदा०—स्फुटगुणक साधन—

सूर्य — (२।२२।६ + १) / ४ = ३।२२।६ = ०।५०।३२ = चेष्टागुणक

(१।२५।१८ + १) × ४ = ०।३६।२० = उच्चगुणक

√(०।५०।३२) × (०।३६।२०) = ०। ०।४३ = स्फुटगुणक

चन्द्र — (२।५२।४८ + १) × ४ = ०।५८।१२ = चेष्टागुणक

(३।४१। ६ − १) ÷ २ = १।२०।३३ = उच्चगुणक

√(०।५८।१२) × (१।२०।३३) = ०। १। ८ = स्फुटगुणक

भौम — (२।४४।३० + १) ÷ ४ = ०।५६। ८ = चेष्टागुणक

(२।४३।१२ + १) ÷ ४ = ०।५५।४८ = उच्चगुणक

√(०।५६। ८) × (०।५५।४८) = ०। ०।५६ = स्फुटगुणक

बुध — (२। ७।३६ + १) ÷ ४ = ०।४६।५४ = चेष्टागुणक

(३।४४।२४ − १) ÷ २ = १।२२।१२ = उच्चगुणक

√(०।४६।५४) × (१।२२।१२) = ०। १। २ = स्फुटगुणक

गुरु — (१।३१।२४+१) ÷ ४ = ०।३७।५१ = चेष्टागुणक

(१।३५।३६+१) ÷ ४ = ०।३८।५४ = उच्चगुणक

√(०।३७।५१)×(०।३८।५४) = ०।०।३८ = स्फुटगुणक

शुक्र — (१।१५।४२ + १) ÷ ४ = ०।३३।५५ = चेष्टागुणक

(१।१६।४२ + १) ÷ ४ = ०।३४।५५ = उच्चगुणक

$\sqrt{(\text{०।३३।५५} \times (\text{०।३४।५५})}$ = ०। ०।३४ = स्फुटगुणक

शनि — (१।२३।३० + १) ÷ ४ = ०।३५।५२ = चेष्टागुणक

(३।८।१२ − १) ÷ २ = १। ४। ६ = उच्चगुणक

$\sqrt{(\text{०।३५।५२}) \times (\text{१।४।६})}$ = ०। ०।४८ = स्फुटगुणक

चेष्टागुणकचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
०	०	०	०	०	०	०
५०	५८	५६	४६	३७	३३	३५
१	१२	८	५४	५१	५५	५२

उच्चगुणचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
०	१	०	१	०	०	१
३६	२०	५५	२२	३८	३४	४
२०	३३	४८	१२	५४	५५	६

स्फुटगुणकचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
०	०	०	०	०	०	०
०	१	०	१	०	०	०
४६	८	५६	२	३६	३४	४८

अथाश्रयगुणकसाधनम्—

यः स्वाधीष्टसुहृत्समार्यधिरिपोर्वर्गे धृतिश्चेष्विला-
विश्वाङ्केषुगुणा गृहे द्विगुणिता योगः क्रमात्तं हरेत् ।
तद्भे षड्वसुगोऽशुमद्धृतिजिनैः षड्घ्नैश्च वर्गोत्तम-
स्वांशत्र्यंशगते सदा रसगुणैः स्यादाश्रयाख्यो गुणः ॥१७॥

अन्वयः—यः स्वाधीष्टसुहृत्समार्यधिरिपोर्वर्गे स्थितस्तस्य क्रमात् धृतिः इष्विला-विश्व-अङ्क-इषु-गुणाः अङ्काः स्थाप्याः, गृहे द्विगुणिताः स्थाप्याः। योगं तद्भे क्रमात् षड्वसुगोऽशुमद्धृतिजिनैः षड्घ्नैः हरेत्। वर्गोत्तम-स्वांशत्र्यंशगते सदा रसगुणैः हरेत्। एवं कृते आश्रयाख्यो गुणः स्यात्।

व्याख्या—यो ग्रहः स्वाधीष्टसुहृत्समार्यधिरिपोर्वर्गे = गृहहोरादि-सप्तवर्गे स्थितस्तस्य क्रमात् धृतिः, इष्विलाविश्वांकेषुगुणाः=क्रमेण अष्टादश-पञ्चदश-त्रयोदश-नव-पञ्च-त्रीणि अङ्काः गृहहोरादि वर्गेषु स्थाप्याः। अर्थात् स्वगृहे धृतिः = १८, अधीष्टभे इष्विलाः १५, मित्रभे विश्व = १३ समभे अङ्काः = ९, अरिभे इषवः = १५, अधिशत्रुभे गुणाः ३ अङ्का स्थाप्याः। तत्र गृहे = गृहवर्गे द्विगुणिताः स्थाप्याः, होरादौ च पठिताङ्का एव स्थाप्याः। यथा—स्वगृहे षट्त्रिंशत् = ३६, स्वहोरादावष्टादश = १८, अधिमित्रगृहे त्रिंशत् = ३०, अधिमित्रहोरादौ पञ्चदश = १५, इति ज्ञेयम्। एवं सप्तवर्गस्थापिताङ्कानां योगः कार्यस्तं योगं तद्भे = तेषां स्वाधीष्टसुहृत्स-मादीनां भे = गृहे स्थिते ग्रहे सति क्रमात् षड्वसुगोऽशुमद्धृतिजिनैः षड्घ्नैः = षड्गुणितैर्हरेत् (अर्थात् स्वगृहे षड्गुणितषड्भिः (३६), अधिमित्रगृहे षड्घ्नवसुभिः (४८), मित्रगृहे षड्गुणितनवभिः (५४), समराशौ षड्गुणितद्वादशभिः (७२) शत्रुभे षड्घ्नधृतिभिः (१०८), अधिशत्रुभे षड्गुणितजिनैः (१४४) भजेत्। तथा च वर्गोत्तमस्वांश-त्र्यंशगते ग्रहे सदा रसगुणैः = षट्त्रिंशता तं योगं भजेत्। एवं कृते लब्धिराश्रयाख्यो गुणः स्यात्।

उप०—गृहादिसप्तवर्गेषु होरादयः षड्वर्गास्तुल्यभागा एव। तथा च "होरादिवर्गाद् द्विगुणं गृहं यत्" इति वचनेन राशेर्द्विगुणत्वादष्टौ वर्गास्तेनाष्टभक्तो गुणो होरादिवर्गेषु भवितुमर्हति। तथा च गृहस्थाने द्विगुणितोऽष्टमांशः = $\frac{1 \times 2}{8} = \frac{1}{4}$ स्थाप्यः। एवमेव "वर्गोत्तमे स्वभवने

स्वनवांशके च स्वत्र्यंशके च गुणको द्वितयं निरुक्तः" इति वचनेन स्वगृहे गुणः २, पूर्वोक्त्याऽष्टभक्तः $=\frac{२}{८}=\frac{१}{४}$ अयं गृहादिके वर्गगणे स्वकीये द्विको गुणः ...×२, इत्यादियुक्त्या द्विगुणितः $\frac{१}{२}=\frac{१८}{३६}$ ।

= स्वहोरादौ गुणः एवमेवाधि मित्र गृहे गुणः $=\frac{३}{२}$,

अष्टभक्तः $\frac{३}{२}\div\frac{८}{१}=\frac{३}{२}\times\frac{१}{८}=\frac{३}{१६}$

अयं अधिमित्र गुणकेन $\frac{५}{३}$ गुणितः $=\frac{३}{१६}\times\frac{५}{३}=\frac{१५}{४८}=$ अधिमित्रहोरादौ गुणकः । एवं मित्रगृहे गुणः १, अष्टभक्तः $\frac{१}{८}$ । अयं "गृहादिके वर्गगणे" इत्यादिना मित्रगृहगुणकेन $\frac{१३}{९}$ अनेन गुणितः $=$ $\frac{१}{८}\times\frac{१३}{९}=\frac{१३}{७२}=$ मित्रहोरादौ गुणः । एवमेव सप्तवर्गगुणाङ्का हराश्चोत्पद्यन्ते । राशिस्थाने "होरादिवर्गाद् द्विगुणं गृहं यत्" इति वाक्याद् द्विगुणः कार्य एव । अथ च वर्गोत्तमस्वांशस्वत्र्यंशगते ग्रहे पूर्वयुक्त्या गुणः २, अयं चतुर्भक्तः $=\frac{२}{४}=\frac{१}{२}$ । अतोऽनुपातो यदि तत्तद्गृहगुणकेन तत्तद्होरादिगुणो लभ्यते तदा ($\frac{१}{२}$) अनेन किमिति गुणास्तावन्तः पाठपठिता एव हरस्थाने षट्त्रिंशत् ३६ अङ्का उपपद्यन्ते । अत एव "सदा रसगुणैः" इत्युपपद्यते ।

हि०टी०—अपने वर्ग मे ग्रह रहने पर १८, अधिमित्र के वर्ग में १५, मित्र के वर्ग में १३, सम के वर्ग में ९, शत्रु के वर्ग में ५, अधिशत्रु के वर्ग में ३, होरादि षड्वर्गों में अंक स्थापित करे। गृहस्थान में उक्त अंकों को द्विगुणित कर स्थापित करे। सम्पूर्ण अङ्कों का योग कर ग्रह अपनी राशि का हो तो ३६ से यदि अधिमित्र की राशि में हो तो ४८ से अपने मित्र की राशि में हो तो ५४ से अपने सम ग्रह की राशि में हो तो ७२ से अपने शत्रु की राशि में हो तो १०८ तथा अपने अधिशत्रु की राशि में ग्रह स्थित हो तो १४४ से उक्त योग में

भाग देने से आश्रय गुणक होता है। ग्रह स्वनवांश अथवा वर्गोत्तम नवांश या स्वद्रेष्काण में स्थित हो तो योगाङ्क में केवल ३६ का भाग देने से आश्रय गुणक होता है।

उदा०—आश्रयगुणकसाधन—

सूर्य बुध के घर में बैठा है। बुध रवि का मित्र है। मित्र के घर में १३ अङ्क है। गृहस्थान में द्विगुणित अङ्क लिखना चाहिये। अतः रवि के गृह स्थान में २६ अङ्क लिखा जायगा। इसी प्रकार सूर्य चन्द्र की होरा में है। चन्द्र रवि का सम है। सम में ६ अङ्क होने से रवि के होरा कोष्ठक में ६ अङ्क लिखा जायगा। द्रेष्काण विचार से रवि शनि के द्रेष्काण में है। शनि रवि का सम है। अतः रवि के द्रेष्काण कोष्ठक में ६ अङ्क लिखा जायगा। सप्तमांश चक्र में रवि बुध के सप्तमांश में है। बुध रवि का मित्र है। अतः रवि के सप्तमांश कोष्ठक में १३ अङ्क लिखा जायगा। इसी प्रकार रवि के नवमांश कोष्ठक विचार से रवि शुक्र के नवमांश में है। शुक्र रवि का अधिशत्रु है। अतः रवि के नवमांश कोष्ठक में ३ अङ्क होगा। द्वादशांश चक्र में रवि शनि के द्वादशांश में है। शनि रवि का सम है। अतः रवि के द्वादशांश कोष्ठक में ६ अङ्क होगा। त्रिंशांश में रवि गुरु के त्रिंशांश में है। गुरु रवि का सम है। अतः त्रिंशांश कोष्ठक में ६ अङ्क लिखा जायेगा। इसी प्रकार अन्य ग्रहों का सभी वर्गों में साधन करना चाहिये।

गृहादिवर्गेष्वङ्कबोधकचक्रम्

	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
गृ.	२६	१०	३६	३०	१०	३०	१८
हो.	६	६	६	६	६	३	६
द्रे.	६	१३	१५	१३	३	१५	६
स.	१३	५	६	५	१५	१३	१८
न.	३	१८	१३	५	५	५	५
द्वा.	६	१३	१५	६	३	१३	६
त्रि.	६	१३	६	१५	१८	१५	१५
यो.	७८	८१	१०६	८६	६३	६४	८३

सूर्य—सूर्य अधिमित्र की राशि में है। अतः योग ७८ में ४८ का भाग देने पर लब्धि १।३७।३० है। अतः रवि का आश्रय गुणक= १।३७।३० हुआ।

चन्द्र—चन्द्र स्वनवांश में है। अतः योग ८१ में ३६ का भाग देने पर चन्द्र का आश्रयगुणक=२।१५।० हुआ।

भौम—मङ्गल अपनी राशि का है। अतः योग १०६ में ३६ का भाग देने पर मङ्गल का आश्रयगुणक=२।५६।४० हुआ।

बुध—बुध अधिमित्र की राशि में है। अतः योग ८६ में ४८ का भाग देने पर बुध का आश्रयगुणक=१।४७।३० हुआ।

गुरु—गुरु शत्रु की राशि में है। अतः योग ६३ में १०८ का भाग देने पर गुरु का आश्रयगुणक=०।३५।० हुआ।

शुक्र—शुक्र अधिमित्र की राशि में है। अतः योग ९४ में ४८ का भाग देने पर शुक्र का आश्रयगुणक=१।५७।३० हुआ।

शनि—शनि सम की राशि में है। अतः योग ८३ में ७२ का भाग देने पर शनि का आश्रयगुणक=१।९।१० हुआ।

आश्रयगुणकबोधकचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
१	२	२	१	०	१	१
३७	१५	५६	४७	३५	५७	९
३०	०	४०	३०	०	३०	१०

अथाश्रयगुणके संस्कारविशेषं, कर्म्मयोग्यगुणकमंशायुर्दायोपगिनो दायांशाश्चाह—

चेद्वर्गोत्तमपूर्वगोऽथ्यरिसुहृद्भे तद्गृहाङ्कात् त्रिषड्-
लब्ध्योनो युगरीष्टभेऽङ्घिनवकाप्त्या स्वे समे केवलः।
कार्यस्त्वाश्रयकः स तत्स्फुटहतेर्मूलं स योग्यो गुणः
खेटानां च तनोर्लवाः खयुगहृच्छेषा इहांशायुषः॥१८॥

अन्वयः—चेद् वर्गोत्तमपूर्वगो भवेत् तदा तद्गृहाङ्कात् त्रिषड्लब्ध्या आश्रयगुणकः अध्यरिभे ऊनः अधिसुहृद्भे युक्, अरीष्टभे वर्गोत्तमपूर्वगश्चेत् तदा गृहाङ्कात् अब्धिनवकाप्त्या लब्धोनो युगाश्रयगुणकः कार्यः। तथा स्वे समे वा ग्रहो भवेत्तदा केवलः आश्रयगुणकः। तत्स्फुटहृतेर्मूलं स योग्यो गुणः स्यात्। इह खेटानां तनोर्लवाः च खयुगह्च्छेषा अंशायुषो भवन्ति।

व्याख्या—चेद् यदि ग्रहो वर्गोत्तमपूर्वगो = वर्गोत्तमनवांशस्वनवांशस्वद्रेष्काणेष्वन्यतमस्थो भवेत्तदा तद्गृहाङ्कात् = गृहवर्गस्थापिताङ्कात्, त्रिषड्लब्ध्या = त्रिषष्टिभक्तलब्धफलेन क्रमेणाश्रयगुणक ऊनो युक् अर्थात् अधिशत्रुराशौ ग्रहे ऊनोऽधिमित्रराशौ स्थिते ग्रहे युक्तः कार्य इति शेषः। एवं अरीष्टभे ग्रहो अर्थाद्वर्गोत्तमपूर्वगश्चेच्छत्रुमित्रगृहे भवेत्तदा गृहाङ्कात् अब्धिनवकाप्त्या = चतुर्णवत्या लब्ध्योनोयुगाश्रयगुणकः कार्यः। तथा वर्गोत्तमपूर्वगः स्वे = स्वराशौ, समे = समराशौ वा ग्रहो भवेत्तदा = पूर्वसाधितएवाश्रयगुणको भवेत्। तत्स्फुटहृतेर्मूलं = आश्रयगुणकस्पष्टगुणकयोर्घातान्मूलं स योग्यो गुणः = कर्मयोग्यो गुणो भवति। इह खेटानां = ग्रहाणां, तनोः = लग्नस्य लवाः = अंशाः, खयुगह्च्छेषा अंशायुषो दायांशा भवन्ति।

उप०—यदि वर्गोत्तमादिस्थानेष्वन्यतमस्थानस्थितो ग्रहोऽध्यरिभे भवेत्तदा "यः स्वाधीष्टेत्यादिना" गृहगुणकः = $\frac{\text{गृहाङ्कः}}{३६}$।

तथा च अध्यरिभे त्रयोनगांशाः $\frac{(३)}{७}$ त्रिगुणितसप्तमांशो वास्तवगुणः स्यात्। अतो वास्तवगुणः =

$$\frac{\text{गृहाङ्क}\times\frac{३}{७}}{३६} = \frac{\text{गृहाङ्क}}{३६}\times\left(१-\frac{४}{७}\right)$$

$$\frac{\text{गृहाङ्क}}{३६} - \frac{\text{गृहाङ्क}\times४}{३६\times७}$$

$$= \frac{\text{गृहाङ्क}}{३६} - \frac{\text{गृहाङ्क}}{६३}$$ । एतेन अध्यरिभे गृहाङ्कात् त्रिषड्लब्ध्योन इत्युपपद्यते। तथा च "नगांशका रुद्रमिता अधीष्टराशौ" इति वचनेन

अधिमित्रभे वास्तवगुणः $= \frac{\text{गृहाङ्क}}{३६} \times \frac{११}{७} = \frac{\text{गृहाङ्क}}{३६} \times १ - \frac{४}{७}$

$$\frac{\text{गृहाङ्क}}{३६} + \frac{\text{गृहाङ्क} \times ४}{३६ \times ७} = \frac{\text{गृहाङ्क}}{३६} + \frac{\text{गृहाङ्क}}{६३}$$ । एतेन

अधिसुहृद्भे गृहाङ्कात् त्रिषष्टिलब्ध्या युक् इत्युपपन्नं भवति। तथा च "सुहृद्वेश्मनि मूर्च्छनांशा नवाश्विनः"

$\frac{२९}{२१}$ इति वचनेन मित्रराशौ वास्तवगुणः

$$= \frac{\text{गृहाङ्क}}{३६} \times \frac{२९}{२१} = \frac{\text{गृहाङ्क}}{३६}\left(१ + \frac{८}{२१}\right) = \frac{\text{गृहाङ्क}}{३६} + \frac{\text{गृहाङ्क} \times ८}{३६ \times २१}$$

$$= \frac{\text{गृहाङ्क}}{३६} + \frac{\text{गृहाङ्क} \times २}{१८९} = \frac{\text{गृहाङ्क}}{३६} + \frac{\text{गृहाङ्क}}{९४\frac{१}{२}} = \frac{\text{गृहाङ्क}}{३६} + \frac{\text{गृहांक}}{९४}$$

स्वल्पान्तरात्। एवं "कुदृग्व्यंशका विश्वमिता द्विषद्भे" इतिवचनेन शत्रुभेऽब्धिनवकाप्त्योन इत्युपपद्यते। अथ समभे स्वराशौ च रूपगुणत्वात् "केवलः" यथागत एवाश्रयगुण इत्यपि साधुसङ्गच्छते। घातमूलं स्फुटं भवत्येव।

दायांशोपपत्तिः—प्राचीनाचार्याणां वचनप्रामाण्यात् "ग्रहभुक्तनवांशराशितुल्यं" आयुर्वर्षप्रमाणमिति सिध्यति। अतो भुक्तनवांशज्ञानार्थमनुपातो भवति। यदि त्रिंशदंशैर्नव नवांशसंख्या लभ्यते तदा ग्रहलग्नभुक्तांशैः किमिति ग्रहलग्नभुक्तनवांशसंख्या। सा च राशीनां द्वादशत्वाद् द्वादशभिर्भक्ता, अतो लब्धिः =

$$\frac{\text{भुक्तांश} \times ९}{३० \times १२} = \frac{\text{भुक्तांश}}{४०}$$ शेषराश्यादि तुल्या अंशायुषो

(दायांशाः) भवन्तीत्युपपद्यते।

हि० टी०—यदि ग्रह वर्गोत्तम, स्वनवांश अथवा स्वद्रेष्काण में स्थित होकर अधिशत्रु की राशि में स्थित हो तो गृहाङ्क को ६३ से भाग देकर लब्धि को आश्रयगुणक में घटाने से वास्तव आश्रयगुणक होता है। यदि वर्गोत्तमनवांश, स्वनवांश अथवा स्वद्रेष्काण में स्थित होकर अधिमित्र की राशि में स्थित हो तो लब्धि को आश्रयगुणक में जोड़ने से वास्तव आश्रयगुणक होता है। यदि ग्रह

शत्रु की राशि में स्थित हो तो गृहाङ्क को ६४ से भाग देकर लब्धि को आश्रयगुणक में घटाने से तथा मित्र की राशि में स्थित हो तो लब्धि को जोड़ने से वास्तव आश्रयगुणक होता है। यदि ग्रह सम की राशि अथवा स्वगृह में हो तो केवल पूर्वसाधित आश्रयगुणक ही ग्रहण करना चाहिये। आश्रयगुणक और स्फुटगुणकों के घात का मूल लेने पर कर्मयोग्यगुणक होता है। लग्न अथवा ग्रह को अंशात्मक बनाकर ४० का भाग देने से शेष आयुर्दाय (दायांश) होता है।

उदा०—चन्द्र स्वनवांश में स्थित होकर शत्रु की राशि में है। अतः चन्द्र के गृहाङ्क १० में ६४ का भाग देकर लब्धि ०।६।२३ को चन्द्र का आश्रयगुणक २।१५।० में घटाने पर शेष २।८।३७ चन्द्र का वास्तव आश्रयगुणक हुआ। शेष ग्रहों का पूर्व आश्रयगुणक में संस्कार नहीं होगा।

$$\sqrt{\text{आश्रयगुणक} \times \text{स्फुटाश्रयगुणक}} = \text{कर्मयोग्यगुणक}$$

कर्मयोग्यगुणकबोधचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
१	२	२	१	०	१	१
३७	१२	५६	४७	३५	५७	६
३०	४८	४०	३०	०	३०	१०

दायांशसाधन—

लग्न अथवा ग्रह का अंशादिमान ÷ ४० = दायांश (शेष)

दायांशबोधकचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.
३४	११	२१	२६	३०	३७	२८	३४
४३	५५	१४	२२	३८	१७	१४	१२
२५	३८	२४	२२	३८	४	२	३०

अथ चक्रार्धहानिमाह—

षड्भाल्पे सति खेचरोन उदयेऽस्यांशोद्धृतैःखाग्निभि-
स्त्वेकाल्पेऽस्य च खाग्निभाजितलवैः सौम्योनितेत्वर्धितैः ।
ऊना भूर्गुण एकभे द्विबहुषु त्वेकस्य बह्वोजसः
कार्यस्तद्गुणिताः स्वदायजलवाश्चक्रार्धहानिस्त्वियम् ॥१९॥

अन्वयः—खेचरोने उदये षड्भाल्पे सति अस्यांशोद्धृतैः खाग्नि-भिरूना भूर्गुणः स्यात् । एकाल्पे चास्य खाग्निभाजितलवैः ऊना भूर्गुणः स्यात् । सौम्योनिते उदये त्वर्धितैः खाग्निभाजितलवैः ऊना भूर्गुणो भवति । एकभे द्विबहुषु तु एकस्य बह्वोजसः गुणः कार्यः । तद्गुणिताः स्वदायजलवाश्चक्रार्धहानिर्भवेत् ।

व्याख्या—खेचरोने=ग्रहोने उदये=लग्ने षड्भाल्पे सति अस्य=षड्भाल्पस्य लग्नोनखेचरस्यांशोद्धृतैः खाग्निभिरूना भूः=एको गुणः स्यात् । षडधिके ग्रहोनोदये हानिर्नेति सिध्यति । तथा च ग्रहोनोदये एकाल्पे सति अस्य खाग्निभाजितलवैः=त्रिंशद्भक्तांशैरूना भूर्गुणो भवति । सौम्योनिते=शुभग्रहोने उदये तु अर्धितैः=दलितैरंशोद्धृतैः खाग्निभिः अर्धितैः खाग्निभाजितलवैर्वा ऊना भूर्गुणो भवति । एकभे=एकराशौ द्विबहुषु=द्वित्र्यादिषु ग्रहेषु सत्सु एकस्य बह्वोजसः अधिक-बलस्य गुणः कार्यः न तु सर्वस्य । तद्गुणिताः स्वदायजवाः कार्याः, इयं चक्रार्धहानिर्भवेत् ।

उप०—

"सर्वार्धं त्रिचरणपञ्चषष्टभागाः क्षीयन्ते व्ययभवनादसत्सु वामम् ।
सत्स्वर्धं ह्रसति तथैकराशिगानामेकोंऽशं हरति बली तथाह सत्यः ॥"

इति प्राचीनाचार्याणां वचनप्रामाण्याल्लग्नाद्व्ययस्थाने स्थिते पापग्रहे आयुषः सर्वांशः क्षीयते । एवमेव लग्नतः द्वादशे गते च शुभग्रहे आयुषोऽर्धभागो हरति । तत्र खेचरोनोदयो राशितुल्यम् । एवमेव लग्नत एकादशस्थाने स्थिते पापेऽर्धांशो नश्यति । तत्र तु ग्रहोनलग्नो राशिद्वय-तुल्यः, दशमे च स्थिते ग्रहे ग्रहोनलग्नस्य प्रमाणं राशित्रयमितम्, तत्र त्र्यंशहानिः, नवमे पापग्रहे तु द्वयोरन्तरं राशिचतुष्टयं, तत्र चतुर्थांशहानिः । एवमेव यथा यथा अन्तरं वर्धते तथा तथा आयुषो हानिह्रस्वद्धिर्भवत्यतोऽनुपातो यदि त्रिंशदंशैरेको हरस्तदेष्टखेचरोनोदयांशैः क इति इष्टहरः=

$\frac{\text{इष्टान्तरं}\times १}{३०}$। अनेन लब्धफलेनायुर्लवा भक्ता जाता हानिलवाः $=$ $\frac{\text{आ० अं०}\times ३०}{\text{इ० अं०}}$। अनेन फलेन हीना आयुषोंऽशा जाता इष्टायुर्लवाः

$$= \text{आ० अं०} - \frac{\text{आ० अं०}\times ३०}{\text{इ० अं०}} = \frac{\text{इ० अं०}\times\text{आ० अं} - \text{आ० अं}\times ३०}{\text{इ० अं०}}$$

$$= \frac{\text{आ० अं०}\,(\text{इ० अं०} - ३०)}{\text{इ० अं०}} = \left(१ - \frac{३०}{\text{इ०अं०}}\right)$$

। एकराशितोऽल्पे ग्रहोनोदये तदंशभक्तत्रिंशतो एकाधिकत्वात् रूपान्न शुद्ध्यतीति व्यस्त-त्रैराशिकेन खाग्निभाजितलवैरित्युपपद्यत इति सर्वमुपपन्नम्।

हिं० टी०—लग्न में ग्रह को घटाने पर शेष यदि ६ राशि से अल्प हो तो अंश बनाकर ३० में भाग देने पर जो लब्धि हो उसे एक में घटाने पर शेष गुणक होता है। ग्रहोन लग्न १ राशि से अल्प हो तो अंशादि अन्तर में ३० का भाग देने पर लब्धि को १ में घटाने पर गुणक होता है। इस प्रकार पापग्रहों का गुणक सिद्ध होता है। यदि शुभग्रह का गुणक साधन करना हो तो लब्धि का आधा १ में घटाने पर गुणक होता है। यदि एक राशि में दो या दो से अधिक ग्रह हों तो उनमें सबसे बली ग्रह का ही गुणक साधन करना चाहिये। साधित गुणक एवं दायांश को गुणा करने पर चक्रार्धहानि होती है। लग्न में ग्रह घटाने पर शेष ६ राशि से अधिक हो तो चक्रार्धहानि नहीं होती है।

उदा०—सूर्य, शुक्र कन्या राशि तथा शनि, बुध सिंह राशि में हैं। सूर्य और शुक्र में शुक्र बली तथा बुध एवं शनि में बुध बली है। अतः चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र पाँच ग्रहों का ही गुणक साधन किया जायगा। लग्न में भौम तथा गुरु को घटाने पर शेष ६ राशि से अधिक है। अतः चन्द्र, बुध एवं शुक्र तीन ग्रहों का गुणक सिद्ध होगा। तीनों शुभ ग्रह हैं। अतः लग्न में ग्रह को घटाकर शेष को अंशादि बनाकर ३० में भाग देने पर लब्धि के आधा को १ में घटाने पर गुणक होगा। साधितगुणक एवं दायांश (आयुर्दायभाग) को गुणा करने पर चक्रार्धहानि होगी।

गुणकबोधकचक्रम्

चं०	बु०	शु०
०	०	०
५१	३६	३५
४१	५५	३७

चक्रार्धहानिबोधकचक्रम्

चं०	बु०	शु०
१०	१६	२२
४०	३२	७
१८	२१	५७

चक्रार्धहानिसंस्कृतदायांशाः

सू.	च.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.
३४	१०	२१	१६	३०	२२	२८	३४
४३	४०	१४	३२	३८	७	१४	१२
२५	१८	२४	२१	३८	५७	२	३०

अथ वर्षाद्यंशायुरानयनम्—

दायांशोत्थकलाः स्वयोग्यगुणकघ्नाः खाभ्रनेत्रोद्धृता
अंशायुर्द्युसदां समादि च तनोर्दायांशकास्त्र्याहताः ।
दिग्भक्ता हि समादि चेत्तु बलवल्लग्नं तदा लग्नभै-
स्तुल्याब्दैः सहितं द्विनिघ्नशरहृद्भागादितो मासयुक् ॥२०॥

अन्वयः—द्युसदां दायांशोत्थकलाः स्वयोग्यगुणकघ्नाः खाभ्रनेत्रोद्धृताः लब्धं समादि अंशायुः । तु तनोर्दायांशकाः त्र्याहताः दिग्भक्ताः लग्नस्य समाद्यंशायुर्भवति । चेत्तु बलवल्लग्नं तदा लग्नभैस्तुल्याब्दैः सहितं कार्यम् । तथा द्विनिघ्नशरहृद्भागादितो मासयुक् लग्नायुः स्फुटं स्यात् ।

व्याख्या—द्युसदां = ग्रहाणां दायांशोत्थकलाः = चक्रार्धहानिसंस्कृतदायांशकलाः स्वयोग्यगुणकघ्नाः = स्वकर्मयोग्यगुणकेन गुणिताः, खाभ्रनेत्रोद्धृताः = द्विशत्या हृता लब्धं समादि = वर्षाद्यमंशायुर्भवति । तु = पुनः तनोः = लग्नस्य दायांशकाः त्र्याहताः = त्रिभिर्निहता दिग्भक्ताः = दशभिर्हृता लब्धं लग्नस्य समादि=वर्षाद्यमंशायुर्भवति । चेत्तु बलवल्लग्नं षड्रूपाधिकबलं लग्नं चेत्तदा लग्नभैः = लग्नभुक्तराशिभिस्तुल्याब्दैः सहितं कार्यम् । तथा द्विनिघ्नशरहृद्भागादितो मासयुक् अर्थात् द्विगुणिताद् लग्नवर्तमानराश्यंशादितः पञ्चभक्ताल्लब्धमासाद्यं मासादौ युक्तं कार्यमिति । एवं कृते लग्नायुः स्फुटं भवति । लग्नबलं यदि षड्रूपाल्पं तदा "दायांशकास्त्र्याहता दिग्भक्ताः" एव लग्नायुः स्यादिति ।

उप०—"ग्रहभुक्तनवांशराशिमितमायुः" इतिवचनप्रामाण्यादनुपातो भवति यद्येकनवांशकलाभि (२००') रेकं वर्षं तदा स्वयोग्यगुणक-

गुणितदायांशकलाभिः किमिति ग्रहाणामंशायुः प्रमाणं वर्षाद्यम्। अतो वर्षाद्यंशायुः $= \frac{\text{दायांश} \times \text{यो० गु०}}{२००'}$। अथ च लग्नायुः साधनार्थमनुपातो यदि त्रिंशदंशैर्नववर्षाणि तदा लग्नदायांशैः किमिति लग्नांशायुः प्रमाणम्। अतो लग्नांशायुः=

$$\frac{९ \times \text{ल० दा० अं०}}{३०} = \frac{३ \times \text{ल० दा० अं०}}{१०}$$ । तथा

"वीर्योन्विता राशिसमं च होरा" इति वराहमिहिराचार्योक्तेः "लग्नभैस्तुल्याब्दैः सहितम्" इत्यपि युक्तियुक्तमेव। अथ चांशादिफलमनुपातेन— यदि त्रिंशदंशैर्द्वादशमासा लभ्यन्ते तदा लग्नांशैः किमिति मासादिफलम्=

$$\frac{१२ \times \text{ल० अं०}}{३०} = \frac{२ \times \text{ल० अं०}}{५}$$ । अनेन फलेन युक्तं

स्फुटं वर्षाद्यं लग्नायुः प्रमाणं जायते। लग्नस्य चक्रार्धहान्यादि संस्कारो न भवतीति सुधीभिर्विभाव्यम्।

हि० टी०—कलात्मक चक्रार्धहानि संस्कृत दायांशकला को स्वकर्मयोग्य-गुणक से गुणा कर २०० का भाग देने से वर्षादि ग्रहों की अंशायु होती है। लग्न के दायांश को ३ से गुणाकर गुणनफल में १० का भाग देने से लब्धि तुल्य वर्षादि लग्न की अंशायु होती है। लग्न का बल ६ से अधिक रहे तो लग्न की भुक्तराशि तुल्य वर्ष और जोड़ना चाहिये और लग्न के अंशों को दो से गुणा कर ५ का भाग देने से लब्धि तुल्य मासादि फल जोड़ने पर लग्न की स्पष्टायु होती है।

उदा०—स्पष्टायुसाधन—

सूर्य—३४°।४३'।२५"=२०८३'।२५"=दायांशकलाचक्रार्धहानि सं०

(२०८३'।२५"×१।३७।३०)÷२००=ल० १६, शेष १८५।३३।८

(१८५।३३।८×१२)÷२००=ल० ११ मास, शेष २६।३७।३६

(२६।३७।३६×३०)÷२००=ल० ३ दिन, शेष १९८।४८

(१९८।४८।०×६०)÷२००=ल० ५९ घ०, शेष १२८।०

(१२८।०।०×६०)÷२००=ल० ३८ प०, शेष ८०

(८०।०।०×६०)÷२००=ल० २४ विपल

अतः रवि का वर्षाद्यायुः=१६।११।३।५९।३८।२४

चन्द्र—१०°।४०'।१८"=६४०'।१८"=चक्रार्धहानिसंस्कृतदायांशकला

$\frac{(६४०'।१८" \times २।१२।४८)}{२००}$ = ७।१।०।५७।१६ वर्षाद्यंशायुः

भौम—२१°।१४'।२४"=१२७४'।२४"=चक्रार्धहानिसंस्कृतदायांशकला

$\frac{(१२७४'।२४" \times २।५६।४०}{२००}$ = १८।९।४।१६।१२ वर्षाद्यंशायुः

बुध—१६°।३२'।२१"=११७२'।२१"=चक्रार्धहानिसंस्कृतदायांशकला

$\frac{(११७२'।२१ \times १।४७।३०)}{२००}$ = १०।६।०।४६।४४।२४ वर्षाद्यंशायुः

गुरु—३०°।३८'।३८=१८३८'।३८"=चक्रार्धहानिसंस्कृतदायांशकला

$\frac{१८३८'।३८" \times ०।३५।०}{२००}$ = ५।४।१०।३३।५४ वर्षाद्यंशायुः

शुक्र—२२°।७।५७"=१३२७'।५७"=चक्रार्धहानिसंस्कृतदायांशकला

$\frac{(१३२७'।५७" \times १।५७।३०)}{२००}$ = १३।०।१।१।२५ ३० वर्षाद्यंशायुः

शनि—२८°।१४'।२=१६६४'।२" चक्रार्धहानिसंस्कृतदायांशकला

$\frac{(१६६६'।२" \times १।६।१०)}{२००}$ = ६।६।६।१३।६ वर्षाद्यंशायुः

लग्न—३४°।१२'।३०" दायांशाः

$\frac{\{(३४।१२।३०) \times ३\}}{१०}$ = १०।३।४।३०

लग्न का वर्षादि मान ६ से अधिक है। अतः अग्रिम क्रिया यथा—

लग्न की भुक्त राशि=६, अंशादि भुक्त=१४।१२।३०

{(१४।१२।३०)×२}÷५=५।२०।३० मासादिफल

लग्न की सिद्ध वर्षाद्यायुः = १०।३। ४।३०

लग्न की भुक्तराशि = ६ वर्ष

मासादि अंश सम्बन्धिफल = ५।२०।३०

लग्न की स्पष्टायुः = १६।९।२५। ०

वर्षाद्यंशायुबोधकचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	यो.	
१६	७	१८	१०	५	१३	९	१६	९८	व.
२१	१	९	६	४	०	९	८	१	मा.
३	०	४	०	१०	१	९	२५	२५	दि.
५९	५७	१९	४९	३३	१	१३	०	५४	घ.
३८	१९	१२	४४	५४	२५	९	०	२२	प.
२४	०	०	२४	०	३०	०	०	१८	वि.

अथ पिण्डनिसर्गजीवशर्मायुर्दायोपयोगिनो दायांशानाह—

स्वोच्चोनो द्युचरोऽङ्गभात्समधिको ग्राह्योऽल्पकोनार्कभं
तद्भागा द्युचरोऽरिभे यदि गुणांशोना विना वक्रगम् ।
द्व्याप्ता अस्तमिते विना शनिसितौ हानिद्वयेऽत्राधिकै-
काथो पिण्डनिसर्गजीवगदिते चक्रार्धहानिर्भवेत् ॥ २१ ॥

अन्वयः—स्वोच्चोनो द्युचरः अङ्गभात् समधिको ग्राह्यः । अङ्गभादल्पकोनार्कभं ग्राह्यम् । तद्भागाः पिण्डनिसर्गजीवायुः गदिते । यदि वक्रगं विना द्युचरोऽरिभे 'तदा' तद्भागा गुणांशोनाः । अस्तमिते शनिसितौ विना तद्भागा द्व्याप्ता । अत्र हानिद्वये अधिकैकद्व्याप्ता । अथ पिण्डनिसर्गजीवगदिते चक्रार्धहानिर्भवेत् ।

व्याख्या—स्वोच्चोनो द्युचरः=स्वकीयोच्चेन हीनो ग्रहोऽङ्गभात्=षड्राशितः समधिको ग्राह्यः । अङ्गभादल्पकोनार्कभं=षड्राशितोऽल्पश्चेत्तदा द्वादशराशिभ्यो विशोध्य शेषं ग्राह्यम् । तद्भागाः=तदीयांशाः कार्याः । ते पिण्डनिसर्गजीवायुर्भागा ज्ञेयाः । वक्रगं=वक्रगतिकग्रहं विना द्युचरः अरिभे = शत्रुराशौ स्थितस्तदा तद्भागाः=तदीयांशाः गुणांशोनाः = स्वतृतीयांशेन हीनाः कार्याः । तथाऽस्तमिते = अस्तंगते ग्रहे शनिसितौ विना तद्भागा द्व्याप्ताः = अर्धिताः कार्याः । हानिद्वये प्राप्ते अधिका=अधिकैकैवार्धहानिरेव कार्या । अथानन्तरं पिण्डनिसर्गजीवगदितेऽपि चक्रार्धहानिर्भवेत् । अत्र शत्रुनैसर्गिको ज्ञेयः, न तु

स्तात्कालिक इति। अत्रेदमवधेयं यत् वक्रगतिको ग्रहः स्वत्र्यंशं नैवापहरति। तथा च शनि शुक्रावस्तं प्राप्तावपि स्वार्धं नैवापहरत इति।

उप०—स्वोच्चस्थे ग्रहे पठितायुः प्रमाणं स्वनीचस्थे च ग्रहे तदर्धमायुः प्रमाणं भवति। तत्र नीचस्थानात्षड्भान्तरिते स्वोच्चस्थे ग्रहे आयुरर्धतुल्य उपचयः स्यात्। मध्ये त्वनुपातेन इष्टोपचयः स्यात्। उक्तञ्च वराहमिहिराचार्येण—

"नीचेऽतोऽर्धं ह्रसति हि ततश्चान्तरस्थेऽनुपातः"।

अतोऽनुपातो यदि षड्राशितुल्येन नीचग्रहान्तरेणायुरर्धतुल्य उपचयस्तदेष्ट नीचग्रहान्तरेण किमितीष्टोपचयः।

अत इष्टोपचयः $= \frac{\text{आ०} \times (\text{ग्र} - \text{नी})}{२ \times ६}$, अनेन फलेन युतं नीचस्थानीयायुरर्धमिष्टायुः प्रमाणम् =

$$\frac{\text{अ}}{२} + \frac{\text{आ०} (\text{ग्र} - \text{नी})}{१२} = \frac{(६ \times \text{आ०} + \text{आ०} \ \text{ग्र०} - \text{नी})}{१२}$$

$$= \frac{\text{आ०} \times (६ + \text{ग्र} - \text{नी})}{१२} = \frac{\text{आ०} \times (\text{ग्र} - \text{उ०})}{१२}।$$

अत्र तु द्वादशराशिर्यदि पठितायुः प्रमाणं तदोच्चोनग्रहराशिभिः किमित्यनुपातो लक्ष्यते। तत्राचार्येणांशानुपात एव कृतो यथा—यदि द्वादशराशिसम्बन्धिरंशैः (३६०°) पठितायुः प्रमाणं लभ्यते तदोच्चोनग्रहांशैः किमिति ? अत एव "दायांशाः स्वगुणैर्हता हि भागणांशाल्पा" इत्यग्रे आचार्यो वक्ष्यति। तथा चात्र $६ < ६ + \text{ग्र} - \text{नी} = \text{ग्र} - \text{उ}$।

"अतः षड्राशिअधिकेनोच्चग्रहान्तरेण भवितव्यमतः" अङ्गभात् समधिको ग्रह्योऽल्पकोनार्कभम् इत्युपपद्यते। "हित्वा वक्रं रिपुगृहगतैर्हीयते सत्रिभागः सूर्योच्छिन्नद्युतिषु च दलं प्रोज्झ्य शुक्रार्कपुत्रौ"। इत्यादि वचनप्रामाण्यात् त्र्यंशार्धहानिरुपपद्यते।

ग्रह में उच्च को घटाने पर शेष यदि ६ राशि से अधिक हो तो अंशात्मक बनाने पर पिण्डादि त्रिकायुर्भाग होता है। यदि ग्रह में उच्च को घटाने पर शेष ६ राशि से अल्प हो तो १२ राशि में घटाकर अंशात्मक बनाने पर पिण्डादि त्रिकायुर्भाग होता है। ग्रह शत्रुराशि का हो तो आयुर्भाग में तृतीयांश घटाना चाहिये। यदि वक्रगतिक ग्रह हो तो उस ग्रह में भी त्र्यंश हानि नहीं होती।

यदि ग्रह अस्त हो तो आयुर्भाग में आधा कम होता है। शुक्र और शनि यदि अस्त हों तो अर्द्ध हानि नहीं होती है। अर्धहानि एवं त्र्यंशहानि दोनों यदि प्राप्त हों तो अर्धहानि ही होती है। पिण्डादित्रिकायु (पिण्ड-निसर्ग-जीवायु) में भी चक्रार्धहानि होती है। शत्रु का विचार नैसर्गिक ग्रहण करना चाहिये तात्कालिक नहीं।

उदा०—५।१४।४३।२५ − ०।१०।०।० = ५।४।४३।२५
१२ रा − ५।४।४३।२५ = २०५°।१६′।३५ = पिण्डादित्रिकायु सूर्य का अंशात्मक इसी प्रकार सभी ग्रहों का साधन होता है।

पिण्डादित्रिकायुबोधकचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ग्र०
२०५	३४१	२८३	३४४	२१५	१६६	३०८	अं०
१६	४	१४	२२	३८	४२	१४	क०
३५	२४	२४	१२	३८	५६	२	वि०

अथ लग्ने पापग्रहे हानिमाह—

दायांशा द्युसदां पृथक् तनुलवादिघ्नाः खषट्त्र्युद्धृता
आप्त्योनास्तनुगे खले च यदि सद्दृष्टेऽर्धयाथापरे।
निघ्न्योग्रोदयभावजेन तनुगोग्रौ चेद्बलिष्ठस्य तत्
साम्ये पुष्टफलेन नेति तनुपेऽस्मिन्नोंशजेऽसौ क्रिया॥ २२॥

अन्वयः—खले तनुगे सति द्युसदां दायांशाः पृथक् स्थाप्याः। ते तनु-लवादिघ्नाः खषट्त्र्युद्धृताः आप्त्या ऊनाः। तनुगे खले सद्दृष्टे अर्धया ऊनाः। अथ अपरे उग्रोदयभावजेन निघ्न्याऽऽप्त्या दायांशा ऊनाः। तनुगोग्रौ चेद्बलिष्ठस्य भावजेन। तत्साम्ये पुष्टफलेन निघ्न्या दायांशा ऊनाः कार्या, इति न। अस्मिन् तनुपे अंशजे असौ क्रिया न कार्या।

व्याख्या—खले = पापग्रहे तनुगे = लग्नगते सति द्युसदां = खेच-राणां दायांशाः पूर्वोक्तानीतदायांशाः पृथक् स्थाप्याः। ते तनुलवादिघ्नाः= लग्नस्य राशीन् त्यक्त्वा अंशादिना गुणिताः खषट्त्र्युद्धृताः = षष्ट्य-धिकशतत्रयेण भक्ता आप्त्या = लब्धेन अंशादिना पृथक्स्था ऊनाः कार्याः। तनुगे खले सद्दृष्टे = शुभग्रहेणावलोकिते सति अर्धया = आप्तफलार्धेन

अंशादिना पृथक्स्था ऊनाः कार्या। अथानन्तरमपरे आचार्याः (झालुगिरामकृष्णादयः) उग्रोदयभावजेन = लग्नस्थपापग्रहस्य भावजेन फलेन निघ्न्या = गुणिता आप्त्या दायांशाः ऊनाः कार्याः। तनुगोग्रौ = लग्ने द्वौ पापौ यदि भवतस्तदा बलिष्ठस्य भावजफलेन निघ्न्या आप्त्या दायांशाः ऊनाः कार्याः। तत्साम्ये = बलसाम्ये, पुष्टफलेन = अधिकफलेन निघ्न्याऽऽप्त्या दायांशा ऊना कार्या इति कथयन्ति। इति न = इदं तन्मतं समीचीनं न। अथ लग्नस्थक्रूरे लग्नेशे इयं हानिः कार्या न वेत्याशंकायां आचार्यो कथयति "तनुपेऽस्मिन्निति" अस्मिन् = लग्नस्थक्रूरे तनुपे = लग्नेशे सति तथांशजे = अंशायुर्दायेऽसौ क्रिया नः कार्या इति।

उप०—"सार्धोदितोदितनवांशहतात्समस्ताद्
भागोऽष्टयुक्तशतसंख्य उपैति नाशम्।
क्रूरे विलग्नसहिते विधिनात्वनेन
सौम्येक्षिते दलमतः प्रलयं प्रयाति"॥ इति बृहज्जातकोक्तेः

क्रूरे लग्नगे सति हानिभागः=

$$\frac{\text{दायांश} \times \text{लग्ननवांश}}{१०८}$$

। अत्र "यदि त्रिंशदंशैर्नव नवांशा लभ्यन्ते तदेष्टलग्नांशादिभिः किमिति लग्ननवांशम् =

$$\frac{९ \times \text{लग्नांशादि}}{३०^\circ}$$

। अनेनोत्थापनेन जातो हानिभागः =

$$\frac{\text{दायांशः}}{१०८} \times \frac{९ \times \text{लग्नांशादिः}}{३०}$$

$$= \frac{\text{दायांशः} \times \text{लग्नांशादिः}}{३६०^\circ}$$

। अनेन हीना दायांशाः स्फुटा भवितुमर्हन्तीति। अन्ये आचार्यास्तु यदि रूपमितेन पूर्णं तद्भावफलेन इयं हानिस्तदेष्टभावफलेन किमित्यनुपातेन लब्धफलेन दायांशा ऊनाः कृतास्तन्न बहुसम्मतम्। शेषमागम एव प्रमाणम्।

हि० टी०—यदि लग्न में पापग्रह विद्यमान हो तो ग्रह के दायांश को पृथक् रखकर लग्न के राशि को छोड़कर शेष अंशादि से गुणा कर ३६० का भाग देने से जो लब्धि हो उसे पृथक् स्थित दायांश (पिण्डादि आयुर्दाय) में घटावे।

लग्नस्थ पापग्रह पर यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो लब्धि का आधा आयुर्भाग में घटाने पर पिण्डायु होती है। अन्य आचार्यों का मत है कि आगत लब्धि को लग्नस्थ पापग्रह के भावफल से गुणाकर दायांश में घटावे। शुभग्रह से यदि लग्नस्थ पापग्रह दृष्ट हो तो गुणनफल का आधा घटावे। लग्न में दो पापग्रह हो तो अधिक बलयुक्त पापग्रह के भावफल से गुणा करे। बल साम्य होने पर जिस ग्रह का भावफल अधिक हो उससे गुणा करे। यह अन्य आचार्यों का मत ग्राह्य नहीं है। लग्नगत लग्नेश ही यदि क्रूरग्रह हो तो दायांश में यह हानि नहीं होती है।

उदा०—लग्न में पापग्रह नहीं है। अतः हानि नहीं होगी।

अथ पिण्डनिसर्गजीवशर्मायुर्वर्षाद्यानयनम्—

गोऽब्जास्तत्त्वतिथिप्रभाकरतिथिस्वर्गा नखाः पैण्डजे
नैसर्गे नखभूद्विगोधृतिनखाः पञ्चाशदर्काद् गुणाः।
दायांशाः स्वगुणैर्हता हि भगणांशाप्ताः समाद्यायुषी
स्वर्गाप्ताश्च समादि जैवमिभहृत्स्वांशैर्घटीष्वन्वितम् ॥ २३ ॥

अन्वयः—अर्कात् गोऽब्जास्तत्त्वतिथिप्रभाकरतिथिस्वर्गा नखाः पैण्डजे गुणाः, नैसर्गे नखभूद्विगोधृतिनखाः पञ्चाशत् गुणाः स्युः। दायांशाः स्वगुणैर्हता भगणांशाप्ताः समाद्यायुषी भवतः। दायांशाः स्वर्गाप्ताः जैवम्, इभहृत्स्वांशैः घटीष्वन्वितं कार्यमिति।

व्याख्या–अर्कात्=सूर्यमारभ्य सप्तग्रहाणां क्रमात् गोऽब्जास्तत्त्वतिथिप्रभाकरतिथिस्वर्गानखाः पैण्डजे=पिण्डायुषि गुणाः स्युः। नैसर्गे=निसर्गायुषि नखभूद्विगोधृतिनखाः पञ्चाशत् क्रमेण सूर्यादिग्रहाणां गुणाः स्युः। पैण्डजे नैसर्गे च दायांशाः स्वगुणैर्हता भगणांशाप्ताः=षष्ट्युत्तरशतत्रयेण-भक्ताः लब्धफलतुल्ये समाद्यायुषी=वर्षाद्यायुषी भवतः। तथा दायांशाः स्वर्गाप्ताः=एकविंशतिभक्ता लब्धं जैवम्=जीवशर्मोक्तं समाद्यायुर्भवति। तदिभहृत्स्वांशैः=अष्टभक्तदायांशैर्घटीष्वन्वितं कार्यं तदा वास्तवं स्यात्।

उप—"नवतिथिविषयाश्विभूतरुद्रदश सहिता दशभिः स्वतुङ्गभेषु" इति पिण्डायुषि, "एकं द्वौ नव विंशतिर्धृतिकृती पञ्चाशदेषां क्रमाच्चन्द्रा-रेन्दुजशुक्रजीवदिनकृत्प्राभाकरीणां समाः" इति च नैसर्गे वृहज्जातकोक्ता-

न्यायुर्वर्षाणि गृहीतानि। "दायांशाः स्वगुणैर्हता हि भगणांशाप्ताः समाद्यायुषी" इत्यस्योपपत्ति एकविंशतितमश्लोकोपपत्तौ प्रदर्शिता। अथ जैवे युक्तिः—"स्वमतेन किलाह जीवशर्मा ग्रहदायं परमायुषः स्वरांशम्" इति बृहज्जातकवचनप्रामाण्यादुच्चस्थे ग्रहे परमायुषः सप्तमांश-तुल्यमायुः $= \dfrac{(\text{१२०।०।५।०।०})}{\text{७}}$। तत्र उच्चस्थे दायांशाः भगणांश-तुल्या। अत इष्टस्थानेऽनुपातो यदि "भगणांशतुल्यदायांशैः परमायुस्स सप्तमांशतुल्यमायुः प्रमाणं तदेष्टदायांशैः किमितीष्टदायांशसम्बन्धिआयुः प्रमाणम् =

$$\frac{(\text{१२०।०।५})}{\text{७}} \times \frac{\text{दायांश}}{\text{३६०}} = \frac{\text{१२०} \times \text{दायांश}}{\text{७} \times \text{३६०}} + \frac{\text{५} \times \text{दायांश}}{\text{७} \times \text{३६०}}$$

$$= \frac{\text{दायांश}}{\text{२१}} + \frac{\text{६०} \times \text{५} \times \text{दा०}}{\text{७} \times \text{३६०}} = \frac{\text{दायांश}}{\text{२१}} + \frac{\text{५} \times \text{दा०}}{\text{४२}} = \frac{\text{दायांश}}{\text{२१}} +$$

$\dfrac{\text{दायांश}}{\text{८}}$ स्वल्पान्तरात्। अत उपपन्नं जैवानयनम्।

हि० टी०—सूर्यादि सात ग्रहों के क्रम से (१६।२५।१५।१२।१५।२१।२०) ये पिण्डायु में गुणक होते हैं। २०, १, २, ६, १८, २०, ५० ये अंक क्रम से सूर्यादि सात ग्रहों के निसर्गायु में गुणक होते हैं। ग्रहों के दायांश को अपने गुणक से गुणा कर ३६० का भाग देने पर लब्धि वर्षादिक पिण्डायु और निसर्गायु होती है। जीवशर्मायु साधन में दायांश को २१ से भाग देने पर लब्धि वर्षादि जीवायु होती है। दायांश में ८ का भाग देने पर घट्यादि फल को वर्षादि जीवायु में जोड़ने पर वास्तव आयु प्रमाण होता है।

उदा०—पिण्डायुसाधन—

सूर्य—{ (२०५।१६।३५) × १६ } ÷ ३६० = १०।१०। ०।१५।५ वर्षादि
चन्द्र—{ (३४१। ४।२४) × २५ } ÷ ३६० = २३। ८।१३।४०। ० "
भौम—{ (२८३।१४।२४) × १५ } + ३६० = ११। ६।१८।३६। ० "
बुध—{ (३४४।२२।१२) × १२ } ÷ ३६० = ११। ५।२२।२६।२४ "
गुरु—{ (२१५।३८।३८) × १५ } ÷ ३६० = ८।११।२४।३६।३० "
शुक्र—{ (१६६।४२।५६) × २१ } ÷ ३६० = ११। ७।२४। १।३७ "
शनि—{ (३०८।१४। २) × २० } ÷ ३६० = १७। १।१४।४०।४० "
योग = ९१। २।२८।१९।१६ "

निसर्गायुसाधन—

सूर्य —{ (२०५।१६।३५) × २० } ÷ ६६० = ११। ४।२५।३१।४० वर्षादि

चन्द्र —{ (३४१। ४।२४) × १ } ÷ ३६० = ०।११।११। ४।२४ ”

भौम—{ (२८३।१४।२४) × २ } ÷ ३६० = १। ६।२६।२८।४८ ”

बुध —{ (३४४।२२।१२) × ६ } ÷ ३६० = ८। ७। ६।१६।४८ ”

गुरु —{ (२१५।३८।३८) × १८ } ÷ ३६० = १०। ६। ८।१५।२४ ”

शुक्र —{ (१६६।४२।५६) × २० } ÷ ३६० = ११। ०। ४।१८।४० ”

शनि— { (३०८।१४।२) × ५० } ÷ ३६० = ४२। ६।२१।४१।४० ”

योग = ८७। १।१६।४०।२४ ”

जीवशर्मायुसाधन—

सूर्य— (२०५।१६।३५) ÷ २१ = ६।६। ६। १।२५।४३ वर्षादि
(२०५।१६।३५) ÷ ८ = +२५।३६।३४ घट्यादि
= ६।६। ६।२७। ५।१७ स्फुटायु

चन्द्र— (३४१।४।२४) ÷ २१ = १६।२।२६।५८।१७। ६ वर्षादि
(३४१।४।२४) ÷ ८ = +४२।३८। ३ घट्यादि
= १६।२।२७।४०।५५।१२ स्फुटायु

भौम— (२८३।१४।२४) ÷ २१ = १३।५।२५।३२।३४।१७ वर्षादि
(२८३।१४।२४) ÷ ८ = +३५।२४।१८ घट्यादि
= १३।५।२६। ७।५८।३५ स्फुटायु

बुध— (३४४।२२।१२) ÷ २१ = १६।४।२३ २६। ८।३४ वर्षादि
(३४४।२२।१२) ÷ ८ = + ४३। २ ४६ घट्यादि
= १६।४।२४।१२।११।२० स्फुटायु

गुरु— (२१५।३८।३८) ÷ २१ = १०।३। ६।४५। ८।३४ वर्षादि
(२१५।३८।३८) ÷ ८ = +२६।५७।२० घट्यादि
= १०।३। ७।१२। ५।५४ स्फुटातु

शुक्र— (१६६।४२।५६) ÷ २१ = ६।६। ३।४१।४२।५१ वर्षादि
(१६९।४२।५६) ÷ ८ = +२४।५७।४२ घट्यादि

= ९।६। ४। ६।४०।४३ स्फुटायु

शनि—(३०८।१४।२) ÷ २१ = १४।८।४। ०।३४।१७ वर्षादि

(३०८।१४।२) ÷ ८ = + ३८।३१।४५ घट्यादि

= १४।८।४।३६। ६। २ स्फुटायु

पिण्डायुर्वर्षाद्यम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	यो०
१०	२३	११	११	८	११	१७	९५
१०	८	६	५	११	७	१	६
०	१३	१८	२२	२४	२४	१४	२८
१५	४०	३६	२६	३६	१	४०	१६
५	०	०	२४	३०	३७	४०	१६

निसर्गायुर्वर्षाद्यम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	यो०
११	०	१	८	१०	११	४२	८७
४	११	६	७	९	०	६	१
२५	११	२३	६	८	४	२१	१६
३१	४	२८	१६	१५	१८	४१	४०
४०	२४	४८	४८	२४	४०	४०	२४

जीवायुर्वर्षाद्यम्

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	यो०
६	१६	१३	१६	१०	६	१४	६०
६	२	५	४	३	६	८	४
६	२७	२६	२४	७	४	४	१३
२७	४०	७	१२	१२	६	३६	२६
५	५५	५८	११	५	४०	६	३
१७	१२	३५	२०	५४	४३	२	३

अथ सिद्धेषु पिण्डादित्रिषु लग्नायुरानयनमाह—

स्याल्लिप्ताः खनखोद्धृता विभतनोर्वर्षादि पैण्डत्रिके
लग्नायुर्निखिलैस्तदंशकसमं कैश्चिद्भतुल्यं स्मृतम् ।
यस्येशोऽधिबलस्तदेव हि परैस्तेनाढ्यमन्यैर्यदं-
शायुर्वत्त्वथ चांशतुल्यमखिलोक्तं ग्राह्यमेवादिमम् ॥ २४ ॥

अन्वयः—विभतनोः लिप्ताः खनखोद्धृताः पैण्डत्रिके लग्नायुः स्यात् । तदंशकसमं निखिलैः स्मृतम् । कैश्चिद्भतुल्यं स्मृतम् । परैः यस्येशोऽधिबलस्तदेव स्मृतम् । अन्यैरंशायुर्वत् तेनाढ्यम् । अथ चांशतुल्यमखिलोक्तं आदिममेव ग्राह्यम् ।

व्याख्या—विभतनोः = राशीन् विहाय लग्नस्य लिप्ताः = कलाः खनखोद्धृताः = शतद्वयभक्ताः लब्धं पैण्डत्रिके = पिण्डादित्रिके लग्नायुः स्यात् । तदंशकसमं निखिलैः = सर्वाचार्यैः स्मृतम् । कैश्चिद्भतुल्यम् = लग्नभुक्तराशितुल्यं स्मृतम् । परैर्यस्येशो बली तदेव स्मृतम् । अन्यैरंशायुर्वत् यदायुस्तत्तेन आढ्यम् = युक्तं कार्यमिति । अथ चांशतुल्यमिदमखिलोक्तमादिममेव ग्राह्यम् ।

उप०—"होरात्वंशप्रतिमम्" आयुर्ददातीति वराहमिहिरोक्तेः लग्नभुक्तनवांशतुल्यमायुः सिध्यति । अतोऽनुपातो यदि शतद्वयकलाभिरेको नवांशस्तदेष्टलग्नांशकलाभिः क इति लग्ननवांशसंख्या $= \frac{\text{लग्नकलाः} \times 1}{200}$ । पुनरनुपातो यदि एकनवांशेनैकं वर्षं तदा लग्ननवांशैः किमिति लग्नायुः $= \frac{1 \times \text{लग्नकलाः}}{1 \times 200} = \frac{\text{लग्नकलाः}}{1 \times 200}$ ॥ अन्यत् सर्वं आगममूलत्वात्स्पष्टमेव ।

हि० टी०—लग्न की राशि को छोड़कर लग्न के अंशादि को कला बनाकर २०० का भाग देने से लब्धि पिण्डादि त्रिक में लग्न की आयु होती है । इस अंशायु में किसी आचार्य का मतभेद नहीं है । कोई आचार्य लग्नभुक्तराशितुल्य लग्नायु कहते हैं । कोई राशीश और अंशेश में जो अधिक बली हो उसी के तुल्य लग्नायु कहते हैं । किसी आचार्य के मत से अंशायु साधन की विधि से आयुर्दाय साधन कर उसमें राशीश बली हो तो राशि तुल्य और यदि

अंशेश बली हो तो नवांश तुल्य वर्ष जोड़ने से लग्नायु मानते हैं। इनमें अंशायु-तुल्य आयु में सभी आचार्यों में एकवाक्यता है। अतः अंशायु ही ग्रहण करनी चाहिए।

उदा०—लग्न का भुक्त अंशादि १४।१२।३० = ८५२'।३०। (८५२'।३०) ÷ २०० = ४।४।४।३० पिण्डादित्रिक में लग्न का वर्षादि आयुमान।

अथ चतुर्णामायुषां कतमं कदा ग्राह्यमिति शङ्कां परिहरन्नाह—

अंशायुश्च तनाविनेऽधिकबले पैण्डं निसर्गं विधौ
स्याच्चेत्तुल्यबलं द्वयोर्युतिदलं तज्जायुषोश्चेत्त्रयः।
त्र्यायुंषि त्रिबलैर्निहत्य च युतिर्वीर्यैक्यहृद्वा त्रिजा-
युर्युत्यास्त्रिलवोऽथ जैवमुदितं चेद्धीनवीर्यास्त्रयः॥ २५॥

अन्वयः—तनौ अधिकबले अंशायुः, इने अधिकबले पैण्डम्, विधौ अधिकबले निसर्गम्। चेद्द्वयोस्तुल्यबलं तज्जायुषोर्युतिदलम्, चेत्त्रयस्तदा त्र्यायुंषि त्रिबलैर्निहत्य युतिर्वीर्यैक्यहृत् वा त्रिजायुर्युत्यास्त्रिलवो आयुर्भवति। अथ त्रयो हीनवीर्याश्चेत् जैवमुदितम्।

व्याख्या—तनौ = लग्ने, अधिकबलेंऽशायुः साध्यम्। इने = सूर्ये अधिकबले पैण्डं = पिण्डायुः, तथा विधौ = चन्द्रे अधिकबले निसर्गं = नैसर्गिकमायुः साध्यम्। चेद्द्वयोः = लग्नरविचन्द्राणामन्यतमयोर्द्वयोस्तुल्यबलं = समानबलं तदा तज्जायुषोर्युतिदलं ग्राह्यम्। चेत्त्रयः समबलास्तदा त्र्यायुंषि त्रिबलैर्निहत्य युतिः = तेषां योगः, वीर्यैक्यहृत् तदायुर्भवति। वा = अथवा त्रिजायुर्युत्यास्त्रिलवः = तृतीयांश आयुर्भवति। अथ चेत्त्रयो हीनवीर्यास्तदा जैवम् = जीवशर्मोक्तमायुरुदितम् = कथितमिति।

अत्रयुक्तिः—आयुर्विषये सारावल्यामुक्तम्। तद्यथा—

"अंशोद्भवं विलग्नात् पैण्डं भानोर्निसर्गजं चन्द्रात्।
एतेषां यो बलवानेकतमं तस्य चिन्तयेदायुः॥
लग्नदिवाकरचन्द्रास्त्रयोऽपि बलरिक्ततां यदा यान्ति।
परमायुषः स्वरांशं ददति खगा जीवशर्मोक्तम्"॥ इति

वचनप्रामाण्याद् बलद्वयेन आयुर्द्वये प्राप्ते आयुर्द्वययोगार्धं ग्राह्यमिति समुचितम्। परन्त्वत्र तत्तद्बलवशात् द्वयोर्बलयोरेकाकारतायां प्राप्ते

तदायुषोऽर्धमयुक्तम्, विलक्षणयोर्द्वयोर्बलयोरेकाकारता योगार्धमेव ग्राह्यम्। अतस्तदानयनार्थमनुपातो यदि बलद्वययोगार्धेनैतदायुषोरर्धमायुः प्रमाणं लभ्यते तदायुः प्रापकैतद्बलेन किमिति ?

$$= \frac{\text{आ०}}{२} \times \frac{\text{इ० ब०}}{\text{ब० यो द०}} = \frac{\text{आ०} \times \text{इ० ब०}}{\text{ब० यो०}}$$

एवं द्वितीयस्य $\frac{\text{अ}_१ \times \text{इ०ब}_१}{\text{ब० यो०}}$। अनयोर्योगः

$$= \frac{\text{आ०} \times \text{इ० ब०} + \text{आ}_१ \times \text{इ० ब०}_१}{\text{ब० यो०}} = \text{स्फुटायुः}।$$

एवं त्रिषु तुल्यबलेषु तत्तदायुस्तत्तद्बलेन संगुण्य तद्योगं बलत्रययोगेन भजेल्लब्धं मिश्रायुः स्यादिति।

हि० टी०—सूर्य चन्द्र और लग्न में लग्न अधिक बलवान् हो तो अंशायुः, सूर्य अधिक बलवान् हो तो पिण्डायुः और चन्द्र अधिक बलवान् हो तो निसर्गायुः ग्रहण होता है। यदि दो का बल तुल्य हो तो दोनों का आयुसाधन कर आयु के योग का आधा ग्रहण होता है। अर्थात् यदि लग्न और रवि तुल्य बली हों तो अंशायु और पिण्डायु के योगार्ध, यदि रवि चन्द्र तुल्य बली हों तो पिण्डायु और निसर्गायु का योगार्द्ध, यदि लग्न और चन्द्र तुल्यबली हों तो अंशायु और निसर्गायु का योगार्ध ग्रहण करे। यदि तीनों लग्न, रवि और चन्द्र तुल्य बली हों तो तीनों अंशायु, पिण्डायु और निसर्गायु को अपने-अपने बल से गुणाकर गुणनफल के योग में तीनों के बलों के योग से भाग देने पर जो लब्धि हो, अथवा तीनों आयु के योग का तृतीयांश आयु ग्रहण होता है। तीनों हीनबली हों तो जीवशर्मोक्त आयु ग्रहण करना चाहिए। बल की तुल्यता में यदि दोनों अधिक बली हों अथवा दोनों मध्यबली हों तो तुल्यबल समझना चाहिए।

अथ हीनबलत्वादिलक्षणं तथांशायुषो बहुसम्मतत्वं तथा केषामिदमायुर्घटत इत्याह—

त्र्यल्पे हीनबलो बली षडधिके वीर्यें ग्रहश्चोदयो
भिन्नं स्वस्वमते स्मृतायुरिति यत्प्राज्ञैर्व्यवस्थापितम्।
अंशायुर्बहुसम्मतं भवति यत्सत्यं च सत्योदितं
स्याद्धर्मिष्ठसुशीलपथ्यसुभुजां न स्यादिदं पापिनाम् ॥२६॥

अन्वयः—त्र्यल्पे वीर्ये ग्रहः उदयश्च हीनबलः स्यात्, षडधिके वीर्ये बली, इति स्मृतायुः प्राज्ञैः स्वस्वमते भिन्नं यद् व्यवस्थापितं सत्योदितं अंशायुर्बहुसम्मतं स्यात्। इदं धर्मिष्ठसुशीलपथ्यसुभुजां सत्यं स्यात्, पापिनां न।

व्याख्या—त्र्यल्पे = रूपत्रयाल्पे वीर्ये = बलयुक्ते, ग्रह उदयश्च = खेचरः लग्नं च हीनबलः = हीनबलसंज्ञकः स्यात्। षडधिके रूपषडधिके वीर्ये बली स्यात्। त्र्यधिके षडल्पे च वीर्ये मध्यबलीति अर्थत एव सिध्यति। इति स्मृतायुः प्राज्ञैः = बुद्धिमद्भिः, स्वस्वमते भिन्नं यद् व्यवस्थापितम् = प्रतिपादितम्, तत्र सत्योदितं = सत्याचार्योक्तमंशायुर्बहुसम्मतं स्यात्। इदमायुः धर्मिष्ठसुशीलपथ्यसुभुजां जनानां सत्यं स्यात्। पापिनां प्राणिनां नेति।

अत्रयुक्तिः—षडेव सन्ति बलानि। तत्र पूर्णात्मकं यदि सन्ति प्रत्येकं तर्हि षड्रूपाणि बलानि भवन्ति। अतः षड्रूपबलवान् बली स्यादेव। षड्रूपाणामर्धं रूपत्रयपर्यन्तं मध्यबलः, रूपत्रयतोऽल्पे बले हीनबलत्वमित्यपि युक्तियुक्तमेव। पापकर्मणा आयुषो हानिर्भवतीति कृत्वा स्वधर्मनिष्ठेष्वेव साधितायुर्घटत इत्यपि युक्तियुक्तमेव।

हि० टी०—लग्न अथवा ग्रहों का बल यदि ६ से अधिक हो तो बली, यदि ३ से अल्प हो तो हीनबली और यदि ३ और ६ के मध्य हो तो मध्यबली होता है। पूर्वोक्त चतुर्विध आयु विभिन्न आचार्य अपने-अपने मत से प्रतिपादित किये हैं। इन सभी आचार्यों में सत्याचार्योक्त अंशायु बहुसम्मत होने से ग्राह्य है। यह आयु धर्मिष्ठ, सुशील, सुपथ्य भोजनादि करने वाले प्राणियों को ही प्राप्त होती है। पापियों को यह आयु प्राप्त नहीं होती।

उदा०—स्पष्टम्।

अथ शिष्यसन्देहनिराकरणार्थमाह—

हानिर्यास्तमितेऽरिभेऽप्यनुमतांऽशोत्थेऽल्पबुद्ध्या न तद्
यस्माच्चैष्टिक आश्रयेऽस्ति निखिलैः पिण्डादिषूक्ता ततः।
आयुः सौरमिदं यतोऽब्दगणना सौरात्ततः सूरिभिः
प्रोक्तं सत्यमसद्यदल्पकथितं नाक्षत्रकं सावनम्॥ २७॥

अन्वयः—अस्तमितेऽरिभे या हानिः अंशोत्थेऽल्पबुद्ध्याऽनुमता

तन्न। यस्मात् चैष्टिक आश्रयेऽस्ति, ततो निखिलैः पिण्डादिषूक्ता। इदमायुः सौरं स्यात्। यतोऽब्दगणना सौराद् भवति। ततः सूरिभिः प्रोक्तं सौरं सत्। अल्पकथितं नाक्षत्रकं सावनं न सदिति।

व्याख्या—अस्तमितेऽरिभे च ग्रहे या हानिः = स्वोच्चोनो द्युचरे-त्यादिना प्रतिपादिता सा केनचिदाचार्येण अंशोत्थे अंशायुर्दायेऽल्प-बुद्ध्याऽनुमता = स्वीकृता, तन्न = तन्मतं समीचीनं न। यस्मात् सा हानिः चैष्टिक आश्रये=चेष्टागुणके आश्रयगुणके चास्ति। ततो निखिलैः= सर्वैः पिण्डादिषूक्ता न चांशायुषि। इदमायुः सौरं = सौरमानेन स्यात्। अब्दगणना तु सौरमानेनैव जायते। उक्तञ्च भास्करेण—"वर्षायनर्तु-युगपूर्वकमत्र सौरात्" इति। ततः सूरिभिःप्रोक्तं यत्सौरं तत्सत्। अल्पकथितं यन्नाक्षत्रकं सावनं वा तदसदिति।

उपपत्तिरत्र सुगमागममूलैव।

हि० टी०—ग्रह यदि अस्त हो तो अर्धहानि और शत्रु के गृह में जो त्र्यंश-हानि प्रतिपादित है, उसको कोई अल्पज्ञ अंशायु में भी प्रतिपादित किये हैं, किन्तु यह उचित नहीं है। क्योंकि अर्धहानि और त्र्यंशहानि चेष्टागुणक और आश्रय-गुणक में है। इसीलिये सभी आचार्य हानि को पिण्डादित्रिकायु में हीं प्रतिपादित किये हैं, अंशायु में नहीं। आयु की गणना सौरमान से ही होती है, क्योंकि वर्ष की गणना सौरमान से ही होती है। इसलिये जो आचार्य सौरमान से आयु प्रतिपादित किये हैं वह सत्य (ग्राह्य) है। जो आचार्य नाक्षत्र अथवा सावनमान से आयु की गणना किये हैं वह असत् (ग्राह्य नहीं) है।

अथ प्राणिनां परमायुः पुरस्सरं मनुष्येतरायुरानयनमाह—

पञ्चाहं नखभूसमा नृकरिणां व्याघ्राद्यजादेर्नृपा
गोकाल्योश्च जिनास्तथोष्ट्रखरयोस्तत्त्वानि सूर्याः शुनाम्।
अश्वायुः परमं रदा नृवदिहानीयायुरेषां परा-
युर्निघ्नं नृपरायुषा च विहृतं तेषां स्फुटायुर्भवेत्॥ २८॥

अन्वयः—पञ्चाहं नखभूसमाः नृकरिणां परममायुः, व्याघ्राद्यजादे-र्नृपाः, गोकाल्योः जिना, तथोष्ट्रखरयोः तत्त्वानि शुनां सूर्याः, अश्वायुः रदाः परमायुः स्मृतम्। इहैषां नृवदायुरानीय तेषां परायुर्निघ्नं नृपरायुषा विहृतं तेषां स्फुटायुर्भवेत्।

व्याख्या—पञ्चाहं नखभूसमाः = पञ्चदिनाधिकविंशत्युत्तरशतवर्षाणि नृकरिणां = मनुष्याणां गजानां च परममायुः स्मृतम्। व्याघ्राद्यजादेर्नृपाः षोडशवर्षाणि, गोकाल्योः = गोमहिष्योः, जिनाः = चतुर्विंशतिवर्षाणि, तथोष्ट्रखरयोः तत्त्वानि = पञ्चविंशतिवर्षाणि, शुनां = अश्वानां सूर्याः = द्वादश वर्षाणि अश्वायुः परमं रदाः = द्वात्रिंशत् समा वर्षाणि परमायुः स्मृतम्। इहैषां = व्याघ्रादीनां, नृवत् = मनुष्यायुः साधनवदायुः संसाध्य तेषां परायुर्निघ्नं नृपरायुषा विहृतं यल्लब्धं तत्तेषां स्फुटायुर्भवेदिति।

उप०—परायुषि प्रत्यक्षोपलब्धिरेवासना। तत्र सर्वेषामायुः संसाध्य अनुपातेन स्फुटायुर्भवति। तद्यथानुपातः—यदि मनुष्यपरमायुषा मनुष्यवदानीतमश्वादीनामायुर्लभ्यते तदा स्वस्वपरमायुषा किमिति तत्तत्स्फुटायुः स्यादेवेत्युपपन्नम्।

हि० टी०—मनुष्य और हस्ती की परमायुः एक सौ बीस वर्ष पाँच दिन (१२० वर्ष, ५ दिन), व्याघ्र और भेड़ा की परमायुः १६ वर्ष, गौ तथा भैंस की परमायुः २४ वर्ष, ऊँट और गर्दभ की परमायुः २५ वर्ष, कुत्ता की आयुः १२ वर्ष तथा अश्व की परमायु ३२ वर्ष होती है। व्याघ्रादिकों की आयु मनुष्यवत् साधन कर उसको अपनी अपनी परमायु से गुणा कर मनुष्य की परमायु से भाग देने पर लब्धि वर्षादि अपनी २ स्फुटायु होती है।

व्याख्या से ही उदाहरण स्पष्ट है।

अथ दशाध्यायः

तत्र दशास्वरूपं तच्छुभाशुभफलञ्चाह—

यस्यायुर्यदसौ दशास्य च शुभेष्टोच्चस्वभांशे तथा-
ऽऽरोहा नीचपरिच्युतस्य यदि सा कष्टारिनीचांशभे।
त्यक्तोच्चे त्ववरोहिणी भवति सा मध्योच्चमित्रस्वभां-
शे सद्दृष्टयुतस्फुरत्करवलिष्ठेष्टाधिके स्याच्छुभा ॥ २९ ॥

अन्वयः—यस्य यद् आयुः असौ अस्य दशा भवति। इष्टोच्चस्वभांशे दशा शुभा भवति। तथा नीचपरिच्युतस्य दशा आरोहा भवति। यदि अरिनीचांशभे च तदा सा आरोहा दशा कष्टा स्यात्। त्यक्तोच्चे

मित्रस्वभांशे तु सावरोहिणी दशा मध्या। सद्दृष्टयुतस्फुरत्करबलिष्ठेष्टाधिके त्यक्तोच्चे सावरोहिणी दशा शुभा स्यात्।

व्याख्या—यस्य ग्रहस्य यदायुरसौ अस्य ग्रहस्य दशा भवति। इष्टोच्चस्वभांशे = मित्रस्य उच्चस्य स्वस्य वा नवमांशे राशौ नवांशे वा स्थितस्य ग्रहस्य दशा शुभा स्यात्। तथा नीचपरिच्युतस्य ग्रहस्य दशा आरोहा शुभफलदा भवति। यदि नीचपरिच्युतो ग्रहोऽरिनीचांशभे स्थितस्तदा सा अरोहा दशा कष्टा = कष्टफलदा स्यात्। त्यक्तोच्चे ग्रहे मित्रस्वभांशे स्थिते सति सावरोहादशा मध्या = मिश्रफलदा भवति। सद्दृष्टयुतस्फुरत्करबलिष्ठेष्टाधिके त्यक्तोच्चे ग्रहे सति सावरोहिणी दशा शुभा = शुभफलदा स्यात्।

उप०—उपपत्तिरत्र सुगमागममूलैव।

हि० टी०—जिस ग्रह की जो आयु है वही उस ग्रह की दशा है। यदि ग्रह मित्र की राशि, मित्र का नवांश अथवा स्वराशि, स्वनवांश, अपनी उच्चराशि अथवा उच्चराशि के नवांश में स्थित हो तो दशा शुभफलदातृ होवी है। ग्रह यदि नीच राशि को त्यागकर उच्चगामी हो तो (उच्चाभिमुख होने से) उसकी दशा आरोहिणी (शुभफल देनेवाली) होती है। यदि ग्रह नीचराशि को छोड़कर उच्चगामी हो परन्तु शत्रु की राशि अथवा नीचराशि के नवांश में हो तो आरोहा दशा भी अशुभ फल देने वाली होती है। ग्रह यदि उच्चराशि को छोड़कर नीचराशिगामी हो तो उसकी दशा अवरोहिणी (अशुभफल देने वाली) होती है। यदि ग्रह नीचराशिगामी होकर उच्च राशि के नवांश, मित्र की राशि नवांश अथवा स्वराशि नवांश में स्थित हो तो मिश्रफल देने वाली होती है। यदि नीचगामी ग्रह शुभग्रह से युत या दृष्ट हो अथवा देदीप्यमान किरणवाला-एवं उसका इष्ट अधिक हो तो अवरोहिणी दशा भी शुभफल देने वाली होती है।

अथ दशाक्रममाह—

स्यादाद्या हि दशाधिकौजस इहाङ्गार्काब्जकानां तत-
स्तत्केन्द्रादियुजामथ द्विबहवो वीर्यक्रमेणैव हि।
चेदोजः समतायुषोधिकतयायुस्तुल्यता चेद्दशा

मौढ्यात् स्यादुदितक्रमात्क्रमविधौ वीर्यं हि तत्रोच्यते ॥२०॥

अन्वयः—इह अङ्गार्काब्जकानां अधिकौजसः आद्या दशा स्यात्। ओजसः समता चेत् आयुषोऽधिकतया आद्या दशा स्यात्। ततः तत्केन्द्रादियुजां दशा स्यात्। चेत् द्विबहवः वीर्यक्रमेणैव दशा स्यात्। आयुस्तुल्यता चेत् मौढ्यात् उदितक्रमात् दशा स्यात्। तत्र क्रमविधौ वीर्यं उच्यते।

व्याख्या—इह = अत्र दशाक्रमवर्णने अङ्गार्काब्जकानां = लग्नरविचन्द्राणां मध्ये अधिकौजसः = अधिकबलयुक्तस्य आद्या = प्रथमा दशा स्यात्। लग्नार्कचन्द्राणां द्वयोस्त्रयाणां वा तदोजः समता = बलतुल्यता चेत्तदाऽऽयुषोधिकतया = यस्यायुर्वर्षाण्यधिकानि तस्य ग्रहस्य आद्या दशा स्यात्। आयुस्तुल्यता चेत् तदा पूर्वपठितक्रमेणैवाद्या दशा ज्ञेया। यथा—लग्नार्कयोर्बलायुषोः साम्ये संजाते सति पूर्वपठितत्वाल्लग्नस्याद्या दशा, एवं लग्नचन्द्रयोर्मध्येऽप्याद्या दशा लग्नस्यैव। सूर्यचन्द्रमसोर्बलायुषोः साम्ये सूर्यस्यैवाद्या दशा स्यात्। ततोऽनन्तरं तत्केन्द्रादियुजां लग्नार्कचन्द्राणां यस्याद्या दशा तस्मात् केन्द्रपणफरापोक्लिमस्थानां ग्रहाणां दशाः स्युः। इह केन्द्रादौ चेद् द्विबहवः = द्वित्र्याद्यो ग्रहाः भवेयुस्तदा वीर्यक्रमेणैव दशा स्यात्। चेदोजः समता तदा आयुषोऽधिकतया दशा स्यात्। चेदायुस्तुल्यता स्यात्तदा मौढ्यात् = सूर्यसान्निध्येनास्तमयात् उदितक्रमात् दशा स्यात्। तत्र क्रमविधौ वीर्यं = बलमुच्यते = कथ्यते।

हि० टी०—लग्न सूर्य और चन्द्र में जो अधिक बली हो उसकी प्रथम दशा होती है। लग्न, सूर्य और चन्द्र में दो अथवा तीनों समान बली हो तो जिसका दशावर्ष अधिक हो उसकी दशा प्रथम होती है। दशा वर्ष में समता रहने पर श्लोक में प्रथम पठित की प्रथम दशा होगी। इस प्रकार लग्न, सूर्य और चन्द्र में जिसकी प्रथम दशा हो उससे केन्द्रस्थित ग्रह की दशा द्वितीयादि तथा केन्द्रस्थित ग्रहों की दशा के पश्चात् पणफर स्थान स्थित ग्रहों की दशा तथा पणफर स्थित ग्रहों की दशा के बाद आपोक्लिम स्थान स्थित ग्रहों की दशा होती है। यदि इन स्थानों में भी दो या अधिक ग्रह हों तो उनमें अधिकबली ग्रह की दशा प्रथम होती है। यदि बल में तुल्यता हो तो जिस ग्रह का दशा वर्ष अधिक हो उस ग्रह की प्रथमा दशा होती है। यदि दशा वर्ष में भी समता हो तो सूर्यसान्निध्य से अस्त होकर जिस ग्रह का प्रथम उदय हुआ हो उस ग्रह की प्रथमा दशा होती है।

अथ दशाक्रमबलं रिष्टकररिष्टहरबलञ्चाह—

चेल्लग्नाद्यदशा स्वभावजफलघ्नौजांसि पाकक्रमे-
ऽर्केन्द्वोश्चेत्प्रथमा खगोदयबलाङ्घ्रिर्भेऽन्यवर्गेऽर्धितः।
स्वैर्वर्गेशबलैर्हता बलमिहैक्यं मूलितैक्यं परे-
ऽथैवं रिष्टदभङ्क्तृजे बहुबलो भङ्क्ता तदा रिष्टहृत् ॥३१॥

अन्वयः – चेत् लग्नाद्यदशा तदा स्वभावजफलघ्नौजांसि पाकक्रमे बलानि, अर्केन्द्वोः प्रथमा दशा चेत् तदा खगोदयबलांघ्रिः भे अन्यवर्गे अर्धितः। ते स्वैर्वर्गेशबलैर्हता ऐक्यं इह बलं भवति। परे मूलितैक्यं बलम्, अथैवं रिष्टदभङ्क्तृजे भङ्क्ता बहुबलो रिष्टहृद्भवति।

व्याख्या—चेत् = यदि लग्नाद्यदशा = लग्नस्य प्रथमा दशा स्यात्तदा स्वभावजफलाघ्नौजांसि = पूर्वसाधितस्वभावफलेन गुणितानि षड्बलैक्यानि, पाकक्रमे = दशाक्रमे बलानि भवन्ति। चेदर्केन्द्वोः प्रथमा दशा स्यात् तदा खगोदयबलाङ्घ्रिः = ग्रहाणां लग्नस्य च षड्बलैक्यचतुर्थांशः भे = गृहे स्थाप्यः। अन्यवर्गे = होरादौ स चतुर्थांशोऽर्धितः स्थाप्यः। ते स्थापिताङ्काः स्वैर्वर्गेशबलैर्हतास्तेषां ऐक्यं इह पाकक्रमे बलं स्यात्। परे = अन्ये मूलितैक्यं = मूलितञ्च तदैक्यमितिबलं कथयन्ति। अथैवं रिष्टदभङ्क्तृजे = रिष्टकररिष्टहरयोर्बले साम्ये तत्र भङ्क्ता = रिष्टभङ्क्ता चेद् बहुबलयुक्तस्तदा रिष्टहृत् = रिष्टविनाशको भवति।

उप०—समभावफलेषु सर्वेषु ग्रहेषु यस्य ग्रहस्य बलमधिकं तस्य ग्रहस्य दशाक्रमविचारे प्रथमादशा भवति। ततस्तदल्पबलस्य ग्रहस्य दशेति यथास्थानस्थितबलेन निर्णयो भवति। तत्र समभावफलं रूपतुल्यमिति मत्वाऽनुपातो यदि सकलग्रहाणां रूपतुल्ये समभावफले ग्रहस्थे तद्बलतुल्यं बलं लभ्यते तदेष्टभावफले किमिति लब्धं दशाक्रमबलम् =

$$\frac{\text{ग्र० ब०} \times \text{इ० भा० फ०}}{१}$$ ।

अथ रविचन्द्रयोश्चेदाद्या दशा तदा तत्र "होरादिवर्गाद् द्विगुणं गृहं यत्" इति वचनात् गृहस्य द्विवर्गात्मकत्वादष्टौ तुल्यवर्गास्तत्र रिष्टकररिष्टहरयोर्ग्रहयोर्बलं अष्टसु स्थानेषु स्थाप्यमत्र गृहसम्बन्धिस्थानद्वयम्, होरादिसम्बन्धिकञ्च स्थानषट्कम्। अथात्र सुलभार्थमेकक्रमलाभाय अष्टतुल्यं

समबलमिति प्रकल्प्यानुपातो यदि गृहेशस्याष्टतुल्ये समबले राशिस्थ-ग्रहोदयबलतुल्यं बलं लभ्यते तदेष्टराशीशबले किमिति दशाक्रमबलम् = $\frac{\text{ग्रहोदयबल} \times \text{राशीशबल}}{८}$ । इदं द्विगुणितं राशिस्थानीयबलम् =

$\frac{\text{ग्रहोदयबल} \times \text{राशीशबल}}{४}$ । गृहाद् होरादेरर्धमितत्वा"दन्यवर्गेऽर्धितः" इत्युक्तम् । तत्रैतेषामैक्यं सर्वबलमपि युक्तियुक्तमेव । तथा च सर्वबलस्य मूलग्रहणे न क्वापि हानिरिति । यत्तु मूलितानामैक्यं बलमिति-कैश्चिद्व्याख्यातं तन्निर्मूलत्वादसङ्गतमिति विबुधैर्विभाव्यम् । शेषं स्पष्टम् ।

हि० टी०—यदि लग्न की प्रथमा दशा हो तो अपने-अपने भावफल से ग्रह के षड्बलैक्य को गुणा करने पर दशाक्रम में बल सिद्ध होता है। यदि सूर्य अथवा चन्द्र की प्रथमा दशा हो तो ग्रह तथा लग्न के षड्बलैक्य का चतुर्थांश गृहस्थान से स्थापित करना। पुनः गृहस्थापित बल का आधा होरादि स्थानों में स्थापित करना। सभी स्थापित बलों को अपने वर्गेश के बल से गुणा कर सबका योग करने पर दशाक्रम में बल होता है। किसी २ आचार्य के मत में योग का मूल दशा में बल तथा किसी आचार्य के मत में पृथक् २ सबका मूल लेकर योग करने पर दशाक्रम में बल होता है। किन्तु यह असङ्गत है।

अतएव सबका योग अथवा सबके योग का मूल ही वास्तविक बल ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकार रिष्टकर एवं रिष्टहर दोनों ग्रहों का बल साधन करना चाहिये। यदि रिष्टहर ग्रह का बल अधिक हो तो रिष्टभङ्ग करता है।

अथ रिष्टकररिष्टहरग्रहयोर्बलसाम्ये निर्णयमाह—

भङ्क्तू रिष्टकृतो हिताहितशुभासत्त्वं च नीचोच्चभा-
स्ताद्यस्याश्रयतां विचार्य मतिमान् रिष्टस्य भङ्गं भदेत् ।
श्रेष्ठं रिष्टहृतौ दशाक्रम इहौजः श्रीधराद्योदितं
कष्टेष्टघ्नबलान्तरात्क्व च कृतं तद्युक्तिशून्यं त्वसत् ॥ ३२ ॥

अन्वयः—भङ्क्तू रिष्टकृतः हिताहितशुभासत्त्वं च नीचोच्चभास्ताद्यस्य आश्रयतां विचार्य मतिमान् रिष्टस्य भङ्गं भदेत् । इह रिष्टहृतौ दशाक्रमे श्रीधराद्योदितमोजः श्रेष्ठम् । क्व च कष्टेष्टघ्नबलान्तरात् कृतं तद्युक्तिशून्यमसच्च ।

व्याख्या—भङ्क्तु = रिष्टभङ्गकरस्य, रिष्टकृतः = रिष्टकरस्य चेति ग्रहद्वयस्यापि हिताहितशुभासत्त्वं = हितमिष्टमहितं कष्टं च पुनर्नीचोच्च-भास्ताद्यस्य = सकलस्याप्याश्रयतां विचार्य मतिमान् रिष्टस्य भङ्गं भदेत् = वदेत् । इह = अत्र रिष्टहृतौ दशाक्रमे श्रीधराद्योदितमोजः = बलं श्रेष्ठम् । क्व च = कुत्रापि (श्रीपत्यादिपद्धतौ) कष्टेष्टघ्नबलान्तरात् दशाक्रमबलं कृतं तद् युक्तिशून्यमसच्चेति ज्ञेयमिति ।

उप०—उपपत्तिरत्र सरला ।

हि० टी०—रिष्टकर और रिष्टहर ग्रहों के इष्ट, कष्ट, शुभत्व, अशुभत्व, नीच, उच्च, अस्त आदि अर्थात् मूलत्रिकोण, अधिमित्र, मित्र, सम, शत्रु, अधिशत्रु की राशि और जय, पराजय के आश्रयत्व विचार कर बुद्धिमान् रिष्टभङ्ग निर्णय करे। रिष्टभङ्ग और दशाक्रम श्रीधराचार्यादि द्वारा प्रतिपादित बल श्रेष्ठ है। श्रीपत्यादि किसी २ आचार्यों के द्वारा कष्ट इष्ट से गुणित षड्बलैक्य के अन्तर पर से प्रतिपादित बल युक्तिशून्य और असत् है।

अथान्तर्दशाक्रममाह—

अर्धस्यैकभगस्त्रिकोणगृहगस्त्र्यंशस्य चास्ते नगां-
शस्यांघ्रेश्चतुरस्रगौ निजगुणैः पक्तैकभे स्याद्बली ।
अंशादौ कुरु रूपमत्र समतां कृत्वा च नाशं छिदा-
मंशघ्नः स्वदशाः पृथक् खलु लवैक्याप्ताः स्युरन्तर्दशा ॥२३॥

अन्वयः—एकभगः अर्धस्य निजगुणैः पक्ता भवति । त्रिकोणगृहगः त्र्यंशस्य अस्ते नगांशस्य चतुरस्रगः अङ्घ्रेः पक्ता भवति । एकभे ग्रहाश्चेत्तदा बली पक्ता भवति । अंशादौ रूपं कुरु, च छिदां समतां कृत्वा नाशं कुरु । ततः स्वदशाः पृथक् अंशघ्नाः लवैक्याप्ताः अन्तर्दशाः स्युः ।

व्याख्या—एकभगः = एकराशिगतो ग्रहो लग्नं वाऽर्धस्य = दशापतिदत्तदशार्धस्य निजगुणैः = आरोहावरोहोच्चनीचादिभिः पक्ता = पाचको भवति । त्रिकोणगृहगः = पञ्चमनवमस्थानगतो ग्रहस्त्र्यंशस्य, अस्ते = सप्तमस्थानस्थितो ग्रहोःनगांशस्य = सप्तमांशस्य, चतुरस्रगः = चतुर्थाष्टमस्थानस्थः, अङ्घ्रेः = चतुर्थांशस्य पक्ता = पाचको भवति । एकभे = एकराशौ द्वौ, बहवो वा ग्रहाश्चेत्तदा तन्मध्ये यो बली = सर्वतो बलवान्

स एक एव ग्रहः पक्त्रा = अन्तर्दशा पाचको भवति । अंशादौ रूपं कुरु, च = पुनः छिदां = छेदानां समतां कृत्वा नाशं कुरु, ततः स्वदशाः पृथक् २ अंशघ्ना लवैक्याप्ता अंशयोगेन भक्ता अन्तर्दशाः स्युः ।

उप०—येऽर्धत्र्यंशाद्यन्तर्दशानां पाचकास्तेषां सर्वेषामन्तर्दशायोगो दशाब्दतुल्य एव भवति । तस्मात्सर्वांशयोगेन दशाब्दतुल्यान्तर्दशा भवितुमर्हति । तत्र समच्छेदं कृत्वा योगोऽन्तरं वा कार्यमिति । तत्र दशापत्यादीनामंशाः क्रमेण $\frac{१}{१}$, $\frac{१}{२}$, $\frac{१}{३}$, $\frac{१}{७}$, $\frac{१}{४}$ समच्छेदी कृता यदि $\frac{अं}{ह}$, $\frac{अं १}{ह}$, $\frac{अं २}{ह}$, $\frac{अं ३}{ह}$ एषां योगः $\frac{अंशयोगः}{ह}$ । अतोऽनुपातो यदि सर्वांशयोगेन दशातुल्यान्तर्दशा लभ्यते तदा पृथक् पृथगंशेन किमिति = $\dfrac{दशा \times अं०}{\frac{अं० यो० \times ह}{ह}}$ = $\dfrac{दशा \times अं०}{अं० यो०}$ । एवं पृथक्पृथक् अन्तर्दशामानं स्यात् । शेषवासना स्फुटैव ।

हि० टी०—दशापति के साथ एक राशि में रहनेवाला ग्रह मूल दशा के आधा का पाचक (अन्तर्दशा का अधिपति) होता है। दशापति से ५, ९ स्थान में रहने वाला ग्रह दशा के तृतीय भाग का पाचक होता है। सप्तम स्थान स्थित ग्रह सप्तमांश का पाचक एवं चतुरस्र (४, ८) स्थान स्थित ग्रह चतुर्थांश का पाचक होता है। सभी ग्रह अपने-अपने गुण (आरोहावरोह, उच्च, नीच आदि) के अनुसार शुभाशुभ फल के पाचक होते हैं। एक राशि में अधिक ग्रह हों तो सबसे बली ग्रह अपने गुण के अनुसार अन्तर्दशा पाचक होता है। यहाँ प्रत्येक अन्तर्दशा पाचक के अंशस्थान में रूप (१) स्थापित कर यथा प्राप्त अर्धत्र्यंशादि लिखना चाहिये। पुनः सबका समच्छेद (सम हर) कर हरों का त्याग करे। पुनः मूल दशापति की दशा को पृथक्-पृथक् अंश से गुणा कर अंशों के योग से भाग देने पर क्रम से पृथक्-पृथक् अन्तर्दशायें होती हैं।

अथ विदशादिकमाह—

इत्याभ्यो विदशास्ततोऽप्युपदशास्ताभ्यश्च सूक्ष्मं फलं
पञ्चांशोनदिनद्वयं तु कलयेत्यायुः कृतं दृश्यते ।
पक्षैः खेटलवान्तरेण च भवेन्मासान्तरं चायुषः
प्रोक्तं यैस्तु दशादिलग्नजफलं तेभ्योऽतिदृग्भ्यो नमः ॥ ३४ ॥

अन्वयः—इत्याभ्यः विदशाः ततः उपदशाः ताभ्यः सूक्ष्मं फलं भवति । कलया कृतमायुः पञ्चांशोनदिनद्वयं दृश्यते । पक्षैः खेटलवान्तरेण आयुषः मासान्तरं भवेत् । यैः दशादिलग्नजफलं प्रोक्तं तेभ्योऽतिदृग्भ्यो नमः ।

व्याख्या—इत्याभ्यः = इत्यनेन विधिना अन्तर्दशाभ्यो विदशाः साध्याः । यथा—अन्तर्दशा एव दशा प्रकल्प्याः । अन्तर्दशापतिरेव दशापतिरिति कल्प्यः । ततोऽर्धस्यैकभगा इत्यादिप्रकारेण अन्तर्दशामध्ये विदशा भवन्तीति । ततो विदशाभ्य उक्तप्रकारेणोपदशाः साध्याः । ताभ्यः सूक्ष्मं फलं भवति । कलया = एकया कलया, कृतं = साधितमायुः पञ्चांशोनदिनद्वयं = अष्टचत्वारिंशद्घटिकैकदिनञ्च दृश्यते । पक्षः खेटलवान्तरेण ग्रहाणामंशाद्यन्तरेण आयुषः मासान्तरं भवेत् । यैः = श्रीपत्यादिभिः, दशादिलग्नजफलं प्रोक्तं तेभ्योऽतिदृग्भ्यो = दूरदृष्टिभ्यो नमो = नमस्कारोऽस्तु ।

उप०—यदि नवांशकलाभिरेकं वर्षमायुषः प्रमाणं लभ्यते तदैककलया किमिति एककलासम्बन्धिआयुषः प्रमाणम् । अतो आयुषः प्रमाणम् $= \frac{१ \times १}{२००} =$ वर्षात्मकमायुः । दिनात्मकं करणेन षष्ट्युत्तरशतत्रयेण संगुणनेन—

$$\frac{१ \times १ \times ३६०}{२००} = २ - \frac{१}{५}$$ । तथांऽशाद्यन्तरेण मासाद्यन्तरं भवति । यदि नवांशकलाभिर्द्वादशमासा लभ्यन्ते तदैकांशकलाभिः किमिति=

$$\frac{१२ \times ६०}{२००} = \frac{१८}{५} = ३ + \frac{३}{५} =$$ मासाद्यायुः । अत-उपपन्नमाचार्योक्तम् ।

हि० टी०—अन्तर्दशा साधन की विधि से अन्तर्दशा से विदिशा का साधन होता है। विदिशा के द्वारा उपदशा का साधन करना चाहिये। इसके द्वारा सूक्ष्मफल होता है। ग्रह में यदि १ कला का अन्तर हो तो १ दिन ४८ घटी तुल्य अन्तर होता है। आयुर्दाय साधन में १ कला पर से आयुर्दाय साधन करने पर आयुर्दाय १ दिन ४८ घटी तुल्य होता है। भिन्न-भिन्न पक्षों से ग्रह साधन करने पर ग्रहों में अंशादि अन्तर आता है। उक्त विविध मतों से साधित ग्रहों के द्वारा जो आचार्य दशाफल, लग्नफल आदि साधन करते हैं उन दूरदर्शियों को नमस्कार है।

अथ सूक्ष्मदशाफलार्थं दशाप्रवेशकालिक लग्नसाधनमाह—

शाकोऽब्दाः जनिमध्यमार्कभमुखं मासादि तद्युग्दशा-
ऽब्दाद्यं तत्र शके स भादितरणिर्मध्यो दशादौ भवेत्।
घस्त्रीभूतदशा पृथक् त्रिकुहता खाङ्काष्टहृत्तद्युता
सा स्यात्सावनिका दशाब्दपलयुक्तद्युगूजनिद्युव्रजः ॥३५॥

तस्मात् सावयवाद्गणात्स्वकरणात्साध्या दशादौ खगाः
क्षेपान् जन्मखगान् प्रकल्प्य यदि वा साध्या दशा सावनात्।
ते स्पष्टाश्च तिथिश्च सङ्क्रमवशान्मासो दशादौ तनुः।
पूर्वोक्तं जडकर्म चात्र तु मया तल्लाघवं दर्शितम् ॥ ३६ ॥

अन्वयः—शाकोऽब्दाः जनिमध्यमार्कभमुखं मासादि कल्प्यम्, तद्युगदशाब्दाद्यं कार्यम्। तत्र शके दशादौ स मध्यो भादितरणिः भवेत्। घस्त्रीभूतदशा पृथक् सा त्रिकुहता खाङ्काष्टहृत् तद्युता दशाब्दपलयुक् सा सावनिका तद्युगूजनिद्युव्रजः कार्यः। तस्मात् सावयवाद् गणात् स्वकरणात् दशादौ खगाः साध्याः। यदि वा जन्मखगान् क्षेपान् प्रकल्प्य दशा सावनात् स्वकरणाद् खगा साध्याः। ते च स्पष्टाः, तिथिश्च साध्याः। सङ्क्रमवशान्मासः, दशादौ तनुः साध्या। पूर्वोक्तं जडकर्म, अत्र तु मया तल्लाघवं दर्शितम्।

व्याख्या—शाकः = जन्मकालिकशाकः अब्दाः कल्प्याः, जनिमध्यमार्कभमुखं = जन्मकालीनसूर्यराश्यादिकं मासादिकं कल्प्यम्। तद्युग-

दशाब्दाद्यम् = तेनाब्दादिना युक्तं दशाब्दाद्यं कार्यम्। एवं यः शाको यच्च राश्यादिकमुत्पद्यते, तत्र = तस्मिन् शके दशादौ अग्रिम-दशाप्रवेशसमये स मध्यो भादितरणिः = मध्यमो राश्यादिसूर्यो भवेत्। तत्र शाके तत्तुल्यो मध्यमसूर्यो यदा भवति तदैवाग्रिमदशाप्रवेशो भवतीति बोध्यम्। अथ तात्कालिकमासाद्यानयनम्—घस्रीभूतदशा = दिनीकृतदशा, पृथक् = स्थानान्तरे स्थाप्या। सा त्रिकुहता = त्रयोदशगुणा, खाङ्काष्टहृत्, तद्युता = तेन फलेन दिनाद्येन युक्ता, पृथक्स्था कार्या। तथा दशाब्दपलयुक्, एवं सा सावनिका दशा भवति। तद्युग्जनिद्युव्रजः = तया सावनात्मिकया दशया युक्तो जन्मकालिकोऽहर्गणः कार्यः, स दशाप्रवेशकालिकोऽहर्गणो भवति। जन्मकालिकसूर्योदयकालिकोऽहर्गणस्सूर्योदयादूगतेष्टघटीपलयुतो जन्मकालिकोऽहर्गणः सावयवो भवति। तस्मात्सावयवाद् गणादहर्गणात्, स्वकरणात् दशादौ खगाः साध्याः। यदि वा जन्मखगान् क्षेपान् प्रकल्प्य दशासावनात्स्वकरणाद्ग्रहाः साध्याः। ते च साधिता ग्रहाः स्पष्टाः कार्याः। तथा च स्पष्टसूर्यचन्द्राभ्यां तिथिः साध्या। तथा संक्रमवशान्मासो ज्ञेयः, दशादौ तनुः साध्या। ततः फलं वाच्यमिति शेषः। पूर्वोक्तं = पूर्वाचार्यैर्यदुक्तं तत्र जडकर्म अस्ति। अत्रास्मिन् ग्रन्थे तु मया तल्लाघवं दर्शितम्।

उप०—सौरवर्षादौ शाकारम्भो भवति, तथा रवेरेकराशिभोगकालः एकः सौरो मासो भवति। अतो "शाकोऽब्दा" इत्यादि स भादितरणिर्मध्यो दशादौ भवेदिति सयुक्तिकमेव। अनेन प्रकारेण दशा दिवसा सौरात्मकाः सन्ति। अतो सावनात्मककरणार्थमनुपातः—यदि युगसौरदिनैर्युगसौरसावनयोरन्तरं लभ्यते तदेष्टदशादिनाद्यैः किमितीष्टान्तरम्

$$= \frac{\text{दशादि} \times २२७१७८२८}{१५५५२००००००} = \frac{\text{दशादि} \times १३}{८८९ + \frac{१६५०२७५}{१७४७५२५}}$$

$$= \frac{\text{दशादि} \times १३}{८९०}$$ स्वल्पान्तरात्। एतेन पृथक्स्था युक्ता

सावनिका दशा भवितुमर्हति। अत्र हरः किञ्चिदधिकस्तेन फले अल्पत्वं जातम्। अतो युगसौरदिवसास्त्रयोदशनिघ्नाः खाङ्काष्टभक्ता लब्धफलेन युता युगसौरा युगसावनेभ्योऽल्पा भवन्ति, तेषां युगसावनानाञ्चान्तरम् = १४२३। अतोऽनुपातो यदि युगसौरवर्षैरिदं १४२३ दिना-

स्मकमन्तरं लभ्यते तदेष्टदशावर्षैः किमिति दिनात्मकमन्तरम् =

$\frac{१४२३ \times दशाव०}{४३२००००}$ । षष्टिवर्गगुणितं पलात्मकमिष्टान्तरम् =

$\frac{दशावर्ष \times ५१२२८००}{४३२००००}$ = दशावर्षमानम् । स्वल्पान्तरात्पूर्वसाधित-
सावनेष्वेतावती न्यूनताऽऽसीदतो दशाब्दतुल्यं पलं योज्यमेवेत्युपपन्नम् ।

अथ दशाशुभाशुभफलमाह—

चन्द्रः प्राप्तदशेश्वरस्य सुहृदुच्चस्वर्क्षसंस्थो दशा-
नाथाद् धीनवसप्तमोपचयगो दद्याच्छुभानीति च ।
यस्मिन्भेऽत्र विधुः स जन्मनि तनुस्वायादभावा यदा
तत्तद्वृद्धिकरोऽथ तत्क्षयकरः प्रोक्तेतरस्थानगः ॥ ३७ ॥

अन्वयः—प्राप्तदशेश्वरस्य सुहृदुच्चस्वर्क्षसंस्थः चन्द्रः शुभानि दद्यात् । दशानाथात् धीनवसप्तमोपचयगः शुभानि दद्यात् । अत्र विधुः यस्मिन्भे स्थितः स जन्मनि तनुस्वायादिभावाः यः भवति तत्तद्वृद्धिकरः, अथ इतर-स्थानगः तत्क्षयकरः स्यात् ।

व्याख्या—प्राप्तदशेश्वरस्य सुहृदुच्चस्वर्क्षसंस्थो = वर्तमानदशाधीश्व-रस्य सुहृद्भे वा तस्योच्चराशावपि स्वर्क्षे = स्वराशौ कर्कटे वा स्थितश्चन्द्रः शुभानि = शुभफलानि ददाति । वा दशानाथात् धीनवसप्तमोपचयगश्चन्द्रः शुभानि दद्यात् । शुभफलप्रदे सति अत्र = दशासमये विधुः = चन्द्रो-यस्मिन्भे स्थितः स राशि जन्मनि = जन्मकाले तनुस्वायादिभावेषु यस्मि-न्भावे गतो भवति तत्तद्वृद्धिकरो भवति । यथा—यदि चन्द्राधिष्ठित-राशिलग्ने भवति तदा देहस्य सौख्यं जायते । एवमेव यदि धनभावे चन्द्राक्रान्तराशिस्तदा धनवृद्धिरिति भवति । परन्त्वत्र "कथयति विप-रीतं रिष्फषष्ठाष्टमेषु" इति वराहमिहिरोक्ते यदि षष्ठाष्टमव्ययभावेषु स्थितश्चन्द्रस्तदा तद् भावस्य नाश एव भवति । अथ प्रोक्तेतरस्थान-गश्चन्द्रो भवति तदा तत्तद्भावनाशः करोति ।

उपपत्तिरत्रागममूलेव ।

हि० टी०—चन्द्र यदि वर्तमान दशा के स्वामी के मित्र की राशि, उच्च-राशि अथवा अपनी राशि (कर्क) अथवा दशापति से ५।६।७।३।६।१०।११ वें

स्थानों में स्थित हो तो शुभ फलद होता है। इस प्रकार शुभफल प्राप्त होने पर चन्द्रमा वर्तमान दशाकाल में जिस राशि में हो वह राशि जन्म समय में जिस भाव में पड़ी हो उस भाव का फल उत्तम होता है। यदि ६,८,१२ वें भाव में वह राशि हो तो इन भावों का नाश होता है। यदि चन्द्र उपर्युक्त स्थानों से भिन्न स्थान में स्थित हो तो चन्द्राधिष्ठित राशि जिस भाव में हो उस उस भाव का नाश होता है, और ६,८,१२ वें स्थान में चन्द्राधिष्ठितराशि हो तो इन भावों की वृद्धि होती है।

अथान्यविशेषमाह—

यद्द्रव्यं खचरस्य भावगृहदृग्योगादि सर्वं फलं
योज्यं वृत्ति कृतिर्बलादिह दशायां चाथ यो वैरयुक्।
पापः पापदशां विशेत्स च विपत्कर्त्ताऽथ तद्भङ्गद-
स्तत्काले बलवान् खगः शुभसुहृद्दृष्टेष्टषड्वर्गगः ॥३८॥

अन्वयः—खचरस्य यद्द्रव्यं भावगृहदृग्योगादि सर्वं फलं बलाद् दशायां योज्यम्। वृत्तिकृतिः च दशायां योज्यम्। अथ वैरयुक् पापः पापदशां विशेत् स विपत्कर्त्ता स्यात्। अथ तत्काले बलवान् खगः शुभसुहृद्दृष्टेष्टषड्वर्गगः स तद्भङ्गदः स्यात्।

व्याख्या—खचरस्य = ग्रहस्य यद्द्रव्यं = ताम्रादिद्रव्यं तथा भावगृहदृग्योगादि = भावफल-राशिफल-दृष्टिफलयोगादिकं सर्वं फलं बलाद् दशायां योज्यम्। अर्थात् ग्रहो यदि पूर्णबली तदा सर्वं फलं पूर्णम्, यदि च ग्रहः मध्यबली तदा फलं मध्यममेवमेव यदि हीनबली ग्रहस्तदा सर्वं फलमल्पमिति भवति। तथा वृत्तिकृतिः=अजीविका च। अथात्र यो ग्रहो वैरयुक् = वैरेण युक्तः वा पापः = पापग्रहो यदि पापदशां विशेत् तदा स विपत्कर्त्ता स्यात्। अथ तत्काले अन्तर्दशाकाले कश्चिद् बलवान् खगः शुभसुहृद्दृष्टेष्टषड्वर्गगस्तदा स तद्भङ्गदः = रिष्टभङ्गकारको भवति। उपपत्तिरत्रागममूलैव।

हि० टी०—ग्रहों का द्रव्य जो ग्रन्थान्तरों में पठित है और भावफल, राशिफल, दृष्टिफल, योगादिफल तथा आजीविका आदि सम्पूर्ण फल, ग्रह के बल के अनुसार दशा में प्राप्त होता है। यदि ग्रह पूर्णबली हो तो शास्त्रों में वर्णितफल पूर्ण प्राप्त होते हैं। यदि ग्रह मध्यबली हो तो फल मध्यम एवं

यदि ग्रह हीनबली हो तो फल न्यून प्राप्त होता है। यदि पापग्रह की दशा में पापग्रह की अथवा शत्रु ग्रह की अन्तर्दशा हो तो उसमें विपत्ति प्राप्त होती है। यदि दशाकाल में कोई ग्रह बलवान् होकर शुभग्रह से अथवा मित्रग्रह से दृष्ट हो अथवा शुभग्रह के अथवा मित्र ग्रह के षड्वर्ग में स्थित हो तो विपत्ति भङ्ग करने वाला होता है।

अथाष्टवर्गफलस्याल्पत्वाधिकत्वकल्पनामाह—

खेटस्तस्य यदष्टवर्गजफलं पूर्णं शुभं जन्मत-
न्विन्द्वोर्वृद्धिषु च स्वभोच्चभसुहृद्भस्वत्रिकोणेऽस्ति यः।
दुष्टं मध्यफलं विपर्ययगतस्यानिष्टमत्युत्कटं
शस्तं स्वल्पतरं खगस्य च वदेज् ज्ञात्वा बलं तत्त्वतः ॥३९॥

अन्वयः—यः खेटः जन्मतन्विन्दोः वृद्धिषु च स्वभोच्चभसुहृद्भस्वत्रिकोणेऽस्ति तदा तस्य शुभमष्टवर्गजफलं पूर्णं भवति। यद् दुष्टं तन्मध्यफलं तथा विपर्ययगतस्य यदनिष्टफलं तदुत्कटं, यच्च शस्तं तत्स्वल्पतरं भवति। अतः खगस्य बलं तत्त्वतः ज्ञात्वा फलं वदेत्।

व्याख्या—यः खेटो जन्मतन्विन्दोः = जन्मकालिकलग्नचन्द्रयोर्वृद्धिषूपचयस्थानेषु च स्वभोच्चभसुहृद्भस्वत्रिकोणे = स्वराशौ, स्वोच्चराशौ, सुहृद्राशौ, स्वमूलत्रिकोणराशौ, एष्वन्यतमे स्थितो अस्ति = वर्तते, तस्य = ग्रहस्य यत् शुभमष्टवर्गजफलं तत् पूर्णं भवति। यद् दुष्टं = यदशुभफलं तन्मध्यफलं = उक्तग्रहस्याशुभाष्टवर्गजफलं मध्यं भवति। तथा च विपर्ययगतस्य = जन्मलग्नचन्द्रयोरुपचयभिन्नस्थानेषु शत्रुनीचादिराशिषु च स्थितस्य ग्रहस्य यदनिष्टमष्टवर्गजफलं तदुत्कटं पूर्णं शस्तं = शुभमष्टवर्गजफलं तत्स्वल्पतरं भवति। अतः खगस्य = ग्रहस्य बलं = वीर्यं तत्त्वतो ज्ञात्वा = विज्ञाय, फलं वदेद्धीमानिति शेषः।

उप०—उपपत्तिरत्रागममूलैव।

हि० टी०—जन्मलग्न अथवा चन्द्र से ग्रह यदि उपचय (३, ६, १०, ११) स्थानों में स्थित होकर स्वराशि, स्वोच्चराशि, अपने मित्रग्रह की राशि अथवा अपनी मूलत्रिकोणराशि में से किसी में हो तो ग्रह के शुभ अष्टवर्गज फल पूर्ण

और अशुभ अष्टवर्गजफल मध्यम होते हैं। ग्रह यदि जन्मलग्न या चन्द्र से उपचय भिन्न (१, २, ४, ५, ७, ८, ९, १२) स्थानों में स्थित होकर शत्रु की राशि अथवा अपनी नीच राशि में हो तो ग्रह का अशुभाष्टवर्गज फल पूर्ण और शुभाष्टवर्गजफल अल्प होता है। अत एव ग्रहों का बल सम्यक् विचार कर अष्टवर्गजफल कहना चाहिये।

अथ क्वचित्फलस्य व्यभिचारे किं करणीयमित्याह—

जीवेत्क्वापि विभङ्गरिष्टजशिशूरिष्टं विना मीयते-
ऽथाद्योऽब्दः शिशुदुस्तरोऽपि च परौ कार्येषु नो पत्रिका।
कार्या प्रश्ननिमित्तपूर्वशकुनैर्मानं धिया रक्षता-
होराज्ञेन सुबुद्धिनाऽत्र बहुधोदर्कश्चकालो बली ॥४०॥

अन्वयः—क्वापि विभङ्गरिष्टजशिशुः जीवेत्, क्वापि रिष्टं विनाऽपि मीयते। अथाद्योब्दः शिशुदुस्तरः परौ च दुस्तरौ। अतः एषु पत्रिका न कार्या। अत्र सुबुद्धिना होराज्ञेन प्रश्ननिमित्तपूर्वशकुनैः धिया मानं रक्षता पत्रिका कार्या। बहुधोदर्कः कालः बली स्यात्।

व्याख्या—क्वापि विभङ्गरिष्टजशिशुः = विगतो भङ्गो यस्य तच्च तद्रिष्टं चेति विभङ्गरिष्टं तत्र जातः शिशुः (प्रबलरिष्टजातः शिशुरित्यर्थः) जीवेत्। तथा क्वापि रिष्टं विनाऽपि मीयते = म्रियते। अथाद्योऽब्दः = प्रथमाब्दः, शिशुदुस्तरः परौ = द्वितीयतृतीयवर्षौ शिशोर्दुस्तरौ। अत एवैषु = प्रथमादि त्रिषु वर्षेषु पत्रिका = जन्मपत्रिका न कार्या। आग्रहेण कोऽपि वर्षत्रयाभ्यन्तरे पत्रिकां क्रियतामिति वदेत् तदा तत्र सुबुद्धिना होराज्ञेन प्रश्ननिमित्तपूर्वशकुनैर्धिया = स्वबुद्ध्या स्वमानं रक्षता पत्रिका कार्या। यत् उदर्को = भाविफलं बहुधा कालश्च बली स्यात्। अथवा बहुधोदर्को यत्र स बहुधोदर्क इति कालस्य विशेषणं बोध्यम्।

अत्रयुक्तिः—ज्योतिः शास्त्रमनन्तमिति हेतोः ज्योतिर्विदः कदाचिद्-भङ्गो नोपलब्धुं शक्यते, कदाचिच्च रिष्टभङ्गसत्त्वेऽपि भङ्गभ्रमो भवितु-मर्हत्येव। अत एव रिष्टं विना मरणं रिष्ट-संजातेऽपि जीवनं भवितुमर्ह-त्येव। तथा सर्वेषु होराग्रन्थेषु प्रथमादिवर्षत्रये बहुधा रिष्टान्युक्तान्ये-वातस्तत्र पत्रिकाकरणनिषेध इति युक्तियुक्तमेव।

हि० टी०—कभी २ कुण्डली में प्रबल अरिष्ट रहने पर भी बालक जीवित रहता है और कभी २ विना अरिष्ट के भी बालक की मृत्यु हो जाती है। जातक के लिये १,२,३ वर्ष दुस्तर होते हैं। अतः तीन वर्षों तक जन्मपत्रिका नहीं बनानी चाहिये। यदि आग्रहवश किसी की जन्म पत्रिका बनानी हो तो अपनी बुद्धि से मर्यादा की रक्षा करते हुए होराशास्त्रज्ञ सूक्ष्म जन्मसमय से स्पष्टग्रह आदि तथा प्रश्नकाल से शुभाशुभ शकुन विचार कर पत्रिका निर्माण करे। क्योंकि भावीफल बहुत हैं और काल सबसे बली है।

अथ ग्रथालङ्करणमाह—

नन्दिग्रामे केशवो विप्रवर्यो योऽभूद्धोराशास्त्रसङ्घं विलोक्य।
तेनोक्तेयं पद्धतिर्जातकीया चत्वारिंशद्वृत्तबद्धा सुबोधा ॥४१॥

अन्वयः—नन्दिग्रामे विप्रवर्यः यः केशवोऽभूत्। तेन होराशास्त्रसंघं विलोक्य इयं चत्वारिंशद्वृत्तबद्धा सुबोधा जातकीया पद्धतिरुक्ता।

हि० टी०—नन्दिग्राम में ब्राह्मणवर्ग में श्रेष्ठ केशव दैवज्ञ हुए। उन्होंने होराशास्त्रों का अवलोकन कर चालीस श्लोकों में इस सुबोध जातकपद्धति को बनायी है।

अथ ग्रन्थप्रशंसामाह—

ये सुबोधां पठन्तीमामग्र्यां जातकपद्धतिम्।
होरावित्पदवीं यान्ति लोके मानं यशश्च ते ॥४२॥

अन्वयः—ये इमां अग्र्यां जातकपद्धतिं पठन्ति, ते होरावित्पदवीं यान्ति। लोके मानं यशश्च यान्ति।

व्याख्या—ये जनाः इमां अग्र्यां=श्रेष्ठां, सुबोधां जातकपद्धतिं=जातकपद्धतिनामकं जातकग्रन्थं पठन्ति ते होरावित्पदवीं यान्ति। तथा लोके=संसारे मानं यशश्च यान्ति=प्राप्नुवन्ति।

हि० टी०—जो व्यक्ति श्रेष्ठ एवं सुबोध जातक पद्धति का अध्ययन करता है वह होराशास्त्रज्ञ की प्रतिष्ठा और लोक में मान तथा यश प्राप्त करता है।

अक्षांशरेखांशादि सारिणी

नगरनाम		उ० अक्षांश	पू० रेखांश	काशी से देशान्तर	
		अं० क०	अं० क०	घ० प० वि०	घं०मि०से०
अकबरपुर	उ० प्र०	२६।२६	८२।३३	− ०। ४।३०	०। १।४८
अकोट	महाराष्ट्र	२१। ६	७७।०६	− ०।५६। ०	०।२३।३६
अकोला	महाराष्ट्र	२०।४२	७७।०२	− ०।५६।४०	०।२३।५२
अगरतला	त्रिपुरा	२३।५०	९१।२५	+ १।२४।१०	०।३३।४०
अजन्ता	महाराष्ट्र	२०।३३	७५।४८	− १।१२। ०	०।२८।४८
अजमेर	राज०	२६।२७	७४।४२	− १।२३। ०	०।३३।१२
अतरौली	उ० प्र०	२८।०२	७८।१८	− ०।४७। ०	०।१८।४८
अन्नपूर्णा	नेपाल	२८।३५	८३।५७	+ ०। ९।३०	०। ३।४८
अनन्तपुर	आन्ध्र०	१४।४१	७७।३९	− ०।५३।३०	०।२१।२४
अम्बाला	हरियाणा	३०।२१	७६।५२	− १। १।२०	०।२४।३२
अम्बिकापुर	म० प्र०	२३।१०	८३।१५	+ ०। २।३०	०। १। ०
अमरकंटक	म० प्र०	२२।३०	८१।२०	− ०।१६।४०	०। ६।४०
अमृतसर	पंजाब	३१।४५	७४।५५	− १।२०।५०	०।३२।२०
अयोध्या	उ० प्र०	२६।४८	८२।१४	− ०। ७।४०	०। ३।०४
अलवर	राज०	२७।३४	७६।३८	− १। ३।४०	०।२५।२८
अलीगढ़	उ० प्र०	२७।५४	७५।०६	− १।१९। ०	०।३१।३६
अलीगढ़	राज०	२५।५८	७६।०७	− १। ८।५०	०।२७।३२
अहमदनगर	महा०	१९।०५	७४।४८	− १।२२। ०	०।३२।४८
अहमदाबाद	गुजरात	२३।०३	७२।४०	− १।४३।२०	०।४१।२०
आगरा	उ० प्र०	२७।१०	७८।०५	− ०।४९।१०	०।१९।४०
आजमगढ़	उ० प्र०	२६।०३	८३।१३	+ ०। २।१०	०। ०।५२
आरा	बिहार	२५।३४	८४।३२	+ ०।१५।२०	०। ६। ८
आसनसोल	प० बंगाल	२३।४२	८७।२०	+ ०।४३।२०	०।१७।२०
इटारसी	म० प्र०	२२।३०	७७।५५	− ०।५०।५०	०।२०।२०
इटावा	उ० प्र०	२६।४७	७९।०२	− ०।३९।४०	०।१५।५२
इन्दौर	म० प्र०	२२।४४	७५।५०	− १।११।४०	०।२८।४०
इम्फाल	मनीपुर	२४।४४	९३।५८	+ १।४९।४०	०।४३।५२
इलाहाबाद	उ० प्र०	२५।२८	८१।५४	− ०।११। ०	०। ४।२४

नगरनाम		उ० अक्षांश	पू० रेखांश	काशी से देशान्तर	
		अं० क०	अं० क०	घ० प० वि०	घं०मि०से०
उज्जैन	म० प्र०	२३।०६	७५।४३	– १।१२।५०	०।२६। ८
उटकमंड	तामिल०	११।२४	७६।४४	– १। २।४०	०।२५।०४
उत्तरकाशी	उ० प्र०	३०।४३	७८।४०	– ०।४३।२०	०।१७।२०
उदयपुर	राज०	२४।३६	७३।४४	– १।३२।४०	०।३७। ४
उन्नाव	उ० प्र०	२६।४८	८०।४३	– ०।२२।५०	०। ६। ८
एटा	उ० प्र०	२७।३५	७८।४०	– ०।४३।२०	०।१७।२०
एलोरा	महा०	२०।०३	७५।१०	– १।१८।२०	०।३१।२०
औड़िहार	उ० प्र०	२५।२५	८३।१०	+ ०। १।४०	०। ०।४०
औरंगाबाद	बिहार	२४।४५	८४।२५	+ ०।१४।१०	०। ५।४०
औरंगाबाद	महा०	१६।५३	७५।२३	– १।१६।१०	०।३०।२८
क्वेटा	पाकि०	३०।१२	६७।००	– २।४०। ०	१। ४। ०
कच्छ का रण	भारत	२४।००	७०।००	– २।१०। ०	०।५२। ०
कटक	उड़ीसा	२०।२८	८५।५४	+ ०.२६। ०	०।११।३६
कटनी	म० प्र०	२३।४७	८०।२७	– ०.२५।३०	०।१०।१२
कटिहार	बिहार	२५।३०	८७।४०	+ ०।४६।४०	०।१८।४०
कन्नौज	उ० प्र०	२७। ३	७६।५८	– ०।३०।२०	०।१२। ८
करनाल	हरयाणा	२६।४०	७७।०२	– ०।५६।४०	०।२३।५२
करांची	पाकि०	२४।५५	६७।००	– २।४०। ०	१। ४। ०
करीमगंज	असम	२४।४०	९२।३०	+ १।३५। ०	०।३८। ०
काठमांडू	नेपाल	२७।४२	८५।१२	+ ०।२२। ०	०। ८।४८
कानपुर	उ० प्र०	२६।२८	८०.२४	– ०।२६। ०	०।१०।२४
कुदरा	बिहार	२५। ५	८३।३७	+ ०। ६।१०	०। २।२८
कुरुक्षेत्र	हरयाणा	२६।५८	७६।५१	– १। १।३०	०।२४।३६
कोचीन	केरल	९।५८	७६।१७	– १। ७।१०	०।२६।५२
कोटा	राज०	२५।१०	७५।५२	– १।११।२०	०।२८।३२
कोडरमा	बिहार	२४।३०	८५।३४	+ ०।२५।४०	०।१०।१६
कोल्हापुर	महा०	१६।४२	७४।१६	– १।२७।२०	०।३४।५६
कोलम्बो	श्रीलंका	६।५६	७९।५६	– ०।३०।४०	०।१२।१६
कोहिमा	नागालैंड	२५।४०	९४।०८	+ १।५१।२०	०।४४।३२
खड़गपुर	प० बं०	[illegible]	८७।२०	+ ०।४३।२०	०।१७।२०

नगरनाम		उ० अक्षांश	पू० रेखांश	काशी से देशान्तर	
		अं० क०	अं० क०	घ० प० वि०	घं० मि० से०
खुर्जा	उ० प्र०	२८।१५	७७।५०	– ०।५१।४०	०।२०।४०
ग्वालियर	म० प्र०	२६।१४	७८।१०	– ०।४८।२०	०।१९।२०
गढ़वा	बिहार	२४.१०	८३।५२	+ ०। ८।४०	०। ३।२८
गया	बिहार	२४।४९	८५।०१	+ ०।२०।१०	०। ८। ४
गाजियाबाद	उ० प्र०	२८।४०	७७।२८	– ०।५५।२०	०।२२।०८
गाजीपुर	उ० प्र०	२५।३४	८३।३५	+ ०। ५।५०	०। २।२०
गिरिडीह	बिहार	२४।१०	८६।२१	+ ०।३३।३०	०।१३।२४
गुजरात	भारत	२३। ०	७२।००	– १।५०। ०	०।४४। ०
गोआ	भारत	१५।१५	७४।००	– १।३०। ०	०।३६। ०
गोंडा	उ० प्र०	२७। ६	८१।५९	– ०।१०।१०	०। ४। ४
गोपालगंज	बिहार	२६।२८	८४।२६	+ ०।१४।२०	०। ५।४४
गोरखपुर	उ० प्र०	२६।४५	८३।२४	+ ०। ४। ०	०। १।३६
गौहाटी	असम	२६।११	९१।४७	+ १।२७।५०	०।३५। ८
गंगोत्री	उ० प्र०	३०।५८	७९।००	– ०।४०। ०	०।१६। ०
चकिया	उ० प्र०	२५। ४	८३।१२	+ ०। २। ०	०। ०।४८
चटगाँव	बंगलादेश	२२।२१	९१।५३	+ १।२८।५०	०।३५।३२
चन्दौसी	उ० प्र०	२८।२७	७८।४९	– ०।४१।५०	०।१६।४४
चितरंजन	बिहार	२३।५०	८७। ०	+ ०।४०। ०	०।१६। ०
चुर्क	उ० प्र०	२४।५०	८३.२०	+ ०। ३।२०	०। १।२०
छपरा	बिहार	२५।४७	८४।४७	+ ०।१७।५०	०। ७। ८
छतरपुर	म० प्र०	२४।५४	७९।३८	– ०।३३।४०	०।१३।२८
जबलपुर	म० प्र०	२३।१०	७९।५९	– ०।३०।१०	०।१२। ४
जम्मू	जम्मूका०	३२।४३	७४.५४	– १।२१। ०	०।३२।२४
जमशेदपुर	बिहार	२२।५०	८६।१०	– ०।३१।४०	०।१२।४०
जमालपुर	बिहार	२५।१९	८६।३२	+ ०।३५।२०	०।१४। ८
जयपुर	राज०	२६।५५	७५।५२	– १।११।२०	०।२८।३२
जसिडीह	बिहार	२४।३२	८६।३८	+ ०।३६।२०	०।१४।३२
जामनगर	गुजरात	२२।२७	७०।०७	– २। ८।५०	०।५१।३२
जालन्धर	पंजाब	३१।१९	७५।१०	– १।१८।२०	०।३१।२०
जालौन	उ० प्र०	२६।०८	७९।२३	– ०।३६।१०	०।१४।२८

नगरनाम		उ० अक्षांश	पू० रेखांश	काशी से देशान्तर	
		अं० क०	अं० क०	घ० प० वि०	घं०मि०से०
जींद	हरयाणा	२९।२९	७६।२३	–१। ६।१०	०।२६।२८
जोगवनी	बिहार	२६।२५	८७।२७	+०।४४।३०	०।१७।४८
जोधपुर	राज०	२६।१८	७३।०४	–१।३९।२०	०।३९।४४
जोरहाट	असम	२६।४५	९४।१६	+१।५२।४०	०।४५। ४
जौनपुर	उ० प्र०	२५।४६	८२।४४	–०। २।४०	०। १। ४
जंघई	उ० प्र०	२५।३४	८२।१८	–०। ७। ०	०। २।४८
झाझा	बिहार	२४।४८	८६।२२	+०।३३।४०	०।१३।२८
झांसी	उ० प्र०	२५।२७	७८।३०	–०।४५। ०	०।१८। ०
टिहरी	उ० प्र०	३०।२१	७८।३१	–०।४४।५०	०।१७।५६
टूण्डला	उ० प्र०	२७।१३	७८।१४	–०।४७।४०	०।१९।०४
डिहरी	बिहार	२४।५४	८४।१२	+०।१२। ०	०। ४।४८
डुमरांव	बिहार	२५।३२	८४।१२	+०।१२। ०	०। ४।४८
ढाका	बंगला०	२३।४८	९०।२६	+१।१४।२०	०।२९।४४
तिनसुकिया	असम	२७।३०	९५।२१	+२। ३।३०	०।४९।२४
तिरुपति	आ० प्र०	१३।४०	७९।२०	–०।३६।४०	०।१४।४०
तेजपुर	असम	२६।३७	९२।५०	+१।३८।२०	०।३९।२०
दमदम	प० बं०	२२।३८	८८।२८	+०।५४।४०	०।२१।५२
दरभङ्गा	बिहार	२६।१०	८५।५७	+०।२९।३०	०।११।४८
दार्जिलिंग	प० बं०	२७।०३	८८।१८	+०।५३। ०	०।२१।१२
द्वारका	गुज०	२२।१७	६९।०१	–२।१९।५०	०।५५।५६
दिल्ली	भारत	२८।३८	७७।१२	–०।५८। ०	०।२३।१२
दिलदारनगर	उ० प्र०	२५।४५	८३।४०	+०। ६।४०	०। २।४०
देवरिया	उ० प्र०	२६।२३	८३।४२	+०। ७। ०	०। २।४८
दोहरीघाट	उ० प्र०	२६।१४	८३।३३	+०। ५।३०	०। २।१२
धनवाद	बिहार	२३।४७	८६।५०	+०।३८।२०	०।१५।२०
नागदा	म० प्र०	२३।२८	७५।२८	–१।१५।२०	०।३०। ८
नागपुर	महा०	२१।०९	७९।०९	–०।३८।३०	०।१५।२४
नाथद्वारा	राज०	२४।५६	७३।५२	–१।३१।२०	०।३६।३२
नालन्दा	बिहार	२५।०२	८५।२५	+०।२४।१०	०। ९।४०
नासिक	महा०	२०।०२	७३।५०	–१।३३।४०	०।३६।४०

नगरनाम		उ० अक्षांश	पू० रेखांश	काशी से देशान्तर	
		अं० क०	अं० क०	घ० प० वि०	घं०मि०से०
नेत्रहाट	बिहार	२३।२६	८४।१५	+०।१२।३०	०। ५। ०
नैनीताल	उ० प्र०	२६।२३	७६।३०	−०।३५। ०	०।१४। ०
पटना	बिहार	२५।३७	८५।१३	+०।२२।१०	०। ८।५२
पटियाला	पंजाब	३०।२०	७६।२५	−१। ५।५०	०।२६।२०
पिथौरागढ़	उ० प्र०	२६।३८	८०।१३	−०।२७।५०	०।११। ८
पूना	महा०	१८।३१	७३।५५	−१।३०।५०	०।३६।२०
पूर्णिया	बिहार	२५।४६	८७।३१	+०।४५।१०	०।१८। ४
पोरबन्दर	गुजरात	२१।३७	६६।४६	−२।११।५०	०।५२।४४
पौड़ी	उ० प्र०	३०। ५	७८।५५	−०।४०।५०	०।१६।२०
फतेहपुर	उ० प्र०	२५।५५	८०।५२	−०।२१।२०	०। ८।३२
फतेह० सिकरी	उ० प्र०	२७।००	७७।३७	−०।५३।५०	०।२१।३२
फूलपुर	उ० प्र०	२५।३२	८२।०७	−०। ८।५०	०। ३।३२
फैजाबाद	उ० प्र०	२६।४७	८२।१२	−०। ८। ०	०। ३।१२
बक्सर	बिहार	२५।३४	८४। १	+०।१०।१०	०। ४। ४
बदायूँ	उ० प्र०	२८।०२	७६।१०	−०।३८।२०	०।१५।२०
बद्रीनाथ	उ० प्र०	३०।४४	७६।३२	−०।३४।४०	०।१३।५२
बम्बई	महा०	१८।५५	७२।३०	−१।४५। ०	०।४२। ०
बरेली	उ० प्र०	२८।२२	७६।२७	−०।३५।३०	०।१४।१२
बलिया	उ० प्र०	२५।४४	८४।११	+०।११।५०	०। ४।४४
बस्ती	उ० प्र०	२६।४८	८२।४६	−०। २।२०	०। ०।५६
बहराइच	उ० प्र०	२७।३४	८१।३८	−०।१३।४०	०। ५।२८
बागपत	उ० प्र०	२८।५६	७७।१२	−०।५८। ०	०।२३।१२
बांदा	उ० प्र०	२५।२०	८०।२२	−०।२६।२०	०।१०।३२
बारावंकी	उ० प्र०	२६।५३	८१।१३	−०।१७।५०	०। ७। ८
बिजनौर	उ० प्र०	२६।२३	७८।११	−०।४८।१०	०।१६।१६
बिलासपुर	म० प्र०	२२। ०	८२।१०	−०। ८।२०	०। ३।२०
बीकानेर	राज०	२८।०१	७३।२२	−१।३६।२०	०।३८।३२
बीरगंज	नेपाल	२७।०१	८४।५६	+०।१६।२०	०। ७।४४
बुद्धगया	बिहार	२४।४१	८५। २	+०।२०।२०	०। ८। ८

नगरनाम		उ० अक्षांश	पू० रेखांश	काशी से देशान्तर	
		अं० क०	अं० क०	घ० प० वि०	घं०मि०से०
बुलन्दशहर	उ० प्र०	२८।२४	७७।५४	−०।५१। ०	०।२०।२४
वेला	उ० प्र०	२५।५०	८२। ०	−०।१०। ०	०। ४। ०
बोकारोबाँध	विहार	२३।४७	८५।५०	+०।२८।२०	०।११।२०
भभुआ	बिहार	२५। ५	८३।३५	+०। ५।५०	०। २।२०
भरतपुर	राज०	२७।१५	७७।३०	−०।५५। ०	०।२२। ०
भागलपुर	विहार	२५।१५	८७।०२	+०।४०।२०	०।१६। ८
भिलाई	म० प्र०	२१।१२	८१।२८	−०।१५।२०	०। ६। ८
भुवेनश्वर	उड़ीसा	२०।१५	८५।५२	+०।२८।४०	०।११।२८
भोपाल	म० प्र०	२३।१६	७७।३६	−०।५४। ०	०।२१।३६
मउ	उ० प्र०	२५।५४	८३।३६	+०। ६। ०	०। २।२४
मथुरा	उ० प्र०	२७।२८	७७।४१	−०।५३।१०	०।२१।१६
मद्रास	तमिलनाडु	१३।०४	८०।१०	−०।२८।२०	०।११।२०
मधुवनी	बिहार	२६।२१	८६।०७	+०।३१।१०	०।१२।२८
मंडला	म० प्र०	२२।४३	८०।३५	−०।२४।१०	०। ९।४०
महोबा	उ० प्र०	२५।१८	७९।५५	−०।३०।५०	०।१२।२०
मांडले	ब्रह्मा	२१।५९	९६।००	+२।१०। ०	०।५२। ०
मिदनापुर	प० बं०	२२।२५	८७।२१	+०।४३।३०	०।१७।२४
मिरजापुर	उ० प्र०	२५।१०	८२।३७	−०। ३।५०	०। १।३२
मुगलसराय	उ० प्र०	२५।१७	८३।११	+०। १।५०	०। ०।४४
मुंगेर	विहार	२५।२३	८६।३०	+०।३५। ०	०।१४। ०
मुजफ्फरनगर	उ० प्र०	२९।२८	७७।४४	−०।५२।४०	०।२१। ४
मुजफ्फरपुर	विहार	२६।०७	८५।२७	+०।२४।३०	०। ९।४८
मुर्शिदाबाद	प० बं०	२४।११	८७।१९	+०।४३।१०	०।१७।१६
मुरादाबाद	उ० प्र०	२८।५१	७८।४९	−०।४१।५०	०।१६।४४
मुरैना	म० प्र०	२६।२३	७८।००	−०।५०। ०	०।२०। ०
मेरठ	उ० प्र०	२९।०१	७७।४५	−०।५२।३०	०।२१। ०
मैनपुरी	उ० प्र०	२७।१४	७९।०३	−०।३९।३०	०।१५।४८
मोतीहारी	बिहार	२६।४०	८५।५७	+०।२९।३०	०।११।४८
रक्सौल	विहार	२७। ०	८४।५०	+०।१८।२०	०। ७।२०

नगरनाम		उ० अक्षांश	पू० रेखांश	काशी से देशान्तर	
		अं० क०	अं० क०	घ० प० वि०	घं०मि०से०
रतलाम	म० प्र०	२३।३१	७५।०७	– १।१८।५०	०।३१।३२
राउरकेला	उड़ीसा	२२।२५	८५।००	+ ०।२०। ०	०। ८। ०
राँची	बिहार	२३।२३	८५।२३	+ ०।२३।५०	०। ९।३२
रामपुर	उ० प्र०	२८।४८	७९।०५	– ०।३९।१०	०।१५।४०
रायबरेली	उ० प्र०	२६।१४	८१।१६	– ०।१७।२०	०। ६।५६
रायपुर	म० प्र०	२१।१५	८१।४१	– ०।१३।१०	०। ५।१६
रीवाँ	म० प्र०	२४।३१	८१।१९	– ०।१६।५०	०। ६।४४
रुड़की	उ० प्र०	२९।५२	७७।५३	– ०।५१।१०	०।२०।२८
रंगून	ब्रह्मा	१६।४५	९६।१३	+ २।१२।१०	०।५२।५२
लखनऊ	उ० प्र०	२६।५४	८०।५९	– ०।२०।१०	०। ८। ४
लन्दन	इङ्गलैण्ड	५१।३०	५०।०५	– १३।५०।५०	५।३२।२०
लहेरियास०	बिहार	२६।१०	८५।५२	+ ०।२८।४०	+ ०।११।२८
लाहौर	पाकि०	३१।१७	७४।२६	– १।२५।४०	०।३४।१६
वृन्दावन	उ. प्र.	२७।३३	७७।४४	०।५२।४०	०।२१। ४
वाराणसी	उ. प्र.	२५।१८	८३।००	०। ०। ०	०। ०। ०
विजयवाड़ा	आ. प्र.	१६।३१	८०।३९	– ०।२३।३०	०। ९।२४
विजयानग.	आ. प्र.	१८।०७	८३।२७	+ ०। ४।३०	०। १।४८
शहडोल	म. प्र.	२३। ०	८१।३०	– ०।१५। ०	०। ६। ०
शाहजहाँपुर	उ. प्र.	२७।५४	७९।५७	– ०।३०।३०	०।१२।१२
शिमला	हिमा. प्र.	३१।०६	७७।१३	– ०।५७।५०	०।२३। ८
शिलांग	मेघालय	२५।३४	९१।५६	+ १।२९।२०	०।३५।४४
शिवपुरी	म. प्र.	२५।२४	७७।४४	– ०।५२।४०	०।२१। ४
शोलापुर	महाराष्ट्र	१७।४०	७४।५६	– १।२०।४०	०।३२।१६
श्रीनगर	जम्मू.	३४।०६	७४।५१	– १।२१।३०	०।३२।३६
श्रीरङ्गम्	तमिल.	१०।५२	७८।४४	– ०।४२।४०	०।१७। ४
ऋषिकेश	उ. प्र.	३०।०७	७८।१९	– ०।४६।५०	०।१८।४४
सतना	म. प्र.	२४।३४	८०।५५	– ०।२०।५०	०। ८।२०
सम्बलपुर	उड़ीसा	२१।२८	८४।०१	+ ०।१०।१०	०। ४। ४
सम्भल	उ. प्र.	[illegible]	[illegible]	– ०।४४।१०	०।१७।४०

नगरनाम		उ० अक्षांश	पू० रेखांश	काशी से देशान्तर	
		अं० क०	अं० क०	घ० प० वि०	घं०मि०से०
सरगोघा	पाकिस्तान	३२।०२	७२।४०	– १।४३।२०	०।४१।२०
सहरसा	बिहार	२५।५५	८६।३५	+ ०।३५।५०	०।१४।२०
सहारनपुर	उ. प्र.	२९।५८	७७।२३	– ०।५६।१०	०।२२।२८
सागर	म. प्र.	२३।५०	७८।५०	– ०।४१।४०	०।१६।४०
सासाराम	बिहार	२५। ०	८४। ५	+ ०।१०।५०	०। ४।२०
सिंदरी	बिहार	२३।४०	८६।३०	+ ०।३५। ०	०।१४। ०
सीकर	राजस्थान	२७।३६	७५।५५	– १।१०।५०	०।२८।२०
सीतापुर	उ. प्र.	२७।३२	८०।४३	– ०।२२।५०	०। ९। ८
सुल्तानपुर	उ. प्र.	२६।१६	८२।०७	– ०। ८।५०	०। ३।३२
सूरत	गुजरात	२१।१२	७२।५२	– १।४१।२०	०।४०।३२
सोनपुर	उड़ीसा	२०।५१	८३।५९	+ ०। ९।५०	०। ३।५६
सोमनाथ	गुजरात	२१।०४	७०।२६	– २। ५।४०	०।५०।१६
सिंगापुर	मलाया	१।१७	१०३।५१	+ ३।२८।३०	१।२३।२४
हजारीबाग	बिहार	२३।५९	८५।२५	+ ०।२४।१०	०। ९।४०
हमीरपुर	उ. प्र.	२५।५८	८०।१२	– ०।२८। ०	०।११।१२
हरदोई	उ. प्र.	२७ २३	८०।१०	– ०।२८।२०	०।११।२०
हरिद्वार	उ. प्र.	२९।५६	७८।०९	– ०।४८।३०	०।१९।२४
हाथरस	उ. प्र.	२७।३६	७८।०६	– ०।४९। ०	०।१९।३६
हापुड़	उ. प्र.	२८।४३	७७।५०	– ०।५१।४०	०।२०।४०
हावड़ा	प. बङ्गाल	२२।३५	८८।२३	+ ०।५३।५०	०।२१।३२
हैदरावाद	आ. प्र.	१७।२०	७८।३०	– ०।४५। ०	०।१८। ०
हँड़िया	उ. प्र.	२५।२४	८२।१५	– ०। ७।३०	०। ३। ०
त्रिपुरा	भारत	२३।४५	९१।३०	+ १।२५। ०	०।३४। ०

बिहारप्रान्ते भोजपुरमण्डलान्तर्गते खजुरियांग्रामनिवासिश्रीचन्द्रमापाण्डेयेन सम्पादिता सान्वयव्याख्याहिन्दीटीकासहिता केशवीयजातकपद्धतिः परिपूर्णा ।

॥ इति शम् ॥

॥ टीकाकर्त्तुः संक्षिप्तपरिचयः ॥

अस्ति बिहारप्रान्ते भोजपुरमण्डलान्तर्गते खजुरियाँ नामाभिधो ग्रामः। यत्र च सरयूपारिणब्राह्मणानां ख्यातिः भुवि प्रसिद्धोऽस्ति। तत्र विप्रकूलभूषणः पण्डितश्रीरामव्रतपाण्डेयस्य द्वितीयभार्यायां पं० चन्द्रमा पाण्डेयस्य जातो जन्मः। बाल्ये वयसि स्वग्रामे पञ्चमकक्षां समुत्तीर्य नातिदूरे कारीसाथ इति नामधेयनगरे श्रीआदर्शमाध्यमिकविद्यालये सप्तमकक्षां समुत्तीर्य संस्कृताध्येतुकामः रोहतासमण्डलान्तर्गतघरवासडीहमठेति नाम्ना लब्धप्रतिष्ठस्थाने गत्वा संस्कृताध्ययने प्रवृत्तः। अस्ति तत्र गुरुकुलपरम्परा अद्यावधि। तत्र श्रीश्री १००८ अनन्तश्रीविभूषितगुरुप्रवररामानुचार्याणां महती कृपया कामेश्वरसिंहदरभङ्गासंस्कृतविश्वविद्यालयदरभङ्गेतिसंस्थया संवद्धः श्रीरामपाठशालाघरवासडीहमठतः प्रथमापरीक्षां १९६६ ई० उत्तीर्णवान्। तत्रत एव मध्यमाप्रथमखण्डं समुत्तीर्य आचार्य पं० श्रीगणेशदत्तत्रिपाठिना निर्देशनेन काशीमागत्य काशीहिन्दूविश्वविद्यालयीयप्राच्यविद्याधर्मविज्ञानसंकायतः मध्यमादितोऽऽचार्यपर्यन्तं प्रथमश्रेण्यां समुत्तीर्य स्वर्णपदकसहितं ज्योतिषशास्त्राचार्येति पदवीं प्राप्तवान्। अथ च यू०जी०सी० छात्रवृत्तिं प्राप्य ज्योतिषविभागे गुरुणां गुरवः पं० राजमोहनउपाध्यायाः ज्योतिषविभागाध्यक्षाः प्रोफेसरपदासीनाः संकायप्रमुखाश्च एतेषां निर्देशने सूर्यसिद्धान्तग्रन्थस्य विशिष्टं पर्यालोचनमिति विषयमवलम्ब्य शोधकार्ये प्रवृत्तः। मध्य एव मथुरायां श्रीमाथुरचतुर्वेदसंस्कृतमहाविद्यालये ज्योतिषविभागाध्यक्षपदे नियुक्तस्तत्र अध्यापनार्थं गतः। ततः काशी हिन्दूविश्वविद्यालये ज्योतिषपञ्चाङ्गविभागे नियुक्तिसंजाते काशीमागत्य ज्योतिषविभागे नियुक्तः। पुस्तकमाध्यमेनापि भारतीयविद्यानां संस्कृतिनाञ्च रक्षणं भवितुमर्हतीति कृत्वा पुस्तकलेखनेऽपि प्रवृत्तः। तत्र प्रथमा कृतिः "केरलीयप्रश्नसंग्रहः" विद्यते या च शास्त्री कक्षायां पाठ्यग्रन्थे निर्धारितोऽस्ति। अथ च द्वितीया कृतिः "केशवीयजातकपद्धति"रस्ति। या च भगवत्कृपया विलिखिता विद्यते।

इतिशम्



हमारे प्रकाशन

१. अध्यात्मरामायण भा० टी० शीघ्र

२. भारतीय सुषिरवाद्यों का इतिहास
—डॉ० आर० एस० जायसवाल ६०-००

३. केरलप्रश्नसंग्रह—हिन्दी टीका
—आचार्य चन्द्रमा पाण्डेय ४-०

४. योगतारावली—श्री शङ्कराचार्य प्रणीत
संस्कृत एवं शाङ्करी हि० टी०
—स्वामी दयानन्द शास्त्री ८-००

५. केशवीयजातकपद्धतिः सान्वयव्याख्या
एवं हिन्दी टीका सहित
—आचार्य चन्द्रमापाण्डेय २८-००

६. वरिवस्या रहस्य प्रकाश संस्कृत एवं हिन्दी टीका
—आचार्य विश्वनाथ पाण्डेय २५-००

७. ब्रह्मसूत्र चतुःसूत्री रहस्य
—पं० कृष्णकान्त शर्मा १०-००

८. ब्रह्मसूत्र वेदान्त विमर्श २०-००

९. महाकाली पञ्चाङ्ग यन्त्रस्थ ८-००
—सम्पा०—आचार्य चन्द्रमा पाण्डेय

१०. आदिवाराही पञ्चाङ्ग " " " ८-००

११. महालक्ष्मी " " " " ८-००

१२. महासरस्वती " " " " ८-००

